वक्तव्य

साहित्य जिसके नाम गुण यश का मनोहर चित्र है,
वह जगन्नाटक सूत्रधर ही प्राणियों का मित्र है।
जो जगन्मानस के कमल विकसा रहा आदित्य है,
वह भाव-भाषा का धनी भगवान ही साहित्य है।

—रामचरित उपाध्याय

बिहार-सरकार द्वारा सस्थापित, सरक्षित और सचालित बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् की ओर से 'हिन्दी-साहित्य और बिहार' नामक पुस्तक-माला का यह प्रथम गुच्छ हिन्दी-प्रेमियो के कर-कमलो में समर्पित करते हुए हमे स्वभावतः मानसिक शान्ति का अनुभव हो रहा है।

वैदिक काल से आधुनिक काल तक बिहार मे विविध भाषाओ के साहित्य की सृष्टि होती आ रही है। सस्कृत, प्राकृत, पालि, अपभ्रंश, मगही, मैथिली, भोजपुरी आदि के अतिरिक्त अँगरेजी, फारसी, उर्दू, बँगला आदि भाषाओ के साहित्य की रचना भी बिहार मे हुई है। पर आजतक उसकी खोज और रक्षा का कोई संगठित प्रयत्न नही किया गया। अब देश के स्वतत्र हो जाने पर यह अत्यावश्यक प्रतीत होता है कि समाज की विशिष्ट प्रतिभाओ की लुप्तप्राय विभूतियो के उद्धार का प्रयत्न किया जाय।

इस पुस्तक-माला में केवल हिन्दी-साहित्यसेवियो की कृतियो का ही संग्रह किया जा रहा है। प्रस्तुत प्रथम गुच्छ मे सातवी से अठारहवी शती तक के साहित्यकारो से सबद्ध यथोपलब्ध सामग्री का सचय किया गया है। आगामी गुच्छो मे उन्नीसवी और बीसवी शती के साहित्यसेवियो के परिचयात्मक विवरण क्रमश प्रकाशित होगे।

सन् १९५० ई० के मध्य मे परिषद् की सेवा का अवसर मिलने पर हमारे मन मे सहसा यह विश्वास उत्पन्न हुआ कि परिषद् के तत्त्वावधान मे यह इतिहास अवश्य प्रकाशित हो जायगा। सन् १९५१ ई० मे ही हमने परिषद् के सचालक-मण्डल मे इस विषय को उपस्थित किया। उस समय के शिक्षा-मत्री और परिषद् के अध्यक्ष आचार्य बदरीनाथ वर्मा, शिक्षा-सचिव श्रीजगदीशचन्द्र माथुर, आई० सी० एस्० तथा सचालक-मडल के सदस्यो ने हमारे प्रस्ताव के प्रति हार्दिक सहानुभूति प्रदर्शित करने की

कृपा की। उन लोगो ने इस कार्य की यथोचित व्यवस्था करने के लिए हमे आदेश एवं अधिकार भी दिया।

परिषद् के अधिकारियो द्वारा इस कार्य की व्यवस्था का अधिकार प्राप्त होने पर हमे यह अनुभव हुआ कि सबसे पहले इस कार्य के लिए एक सुयोग्य एव अनुभवी व्यक्ति की आवश्यकता है। ऐसे व्यक्ति की नियुक्ति के लिए सरकार से लिखा-पढी होने लगी और उपयुक्त व्यक्ति की खोज भी जारी रही। नये पद के लिए सरकारी स्वीकृति मिलने और कार्य-कुशल व्यक्ति का चुनाव करने मे जो समय लगा, उसके बीच थोडा-बहुत काम निश्चित पारिश्रमिक देकर कराया गया।

सन् १९५५ ई० के आरम्भ मे श्रीगदाधरप्रसाद अम्बष्ठ इस काम को संभालने के लिए नियुक्त हुए। हिन्दी मे बिहार-विषयक साहित्य का निर्माण करके उन्होने अच्छी ख्याति पाई है। हमने उनकी इच्छा के अनुसार सारी सुविधाओ की व्यवस्था कर दी। सरकारी कार्यालय के नियमानुसार जो कुछ प्रबन्ध कर सकना सभव था, हमने कर दिया और अम्बष्ठजी भी सुव्यवस्थित ढग से काम करने लगे।

साहित्यिक इतिहास का काम विशेष रूप से अनुसधानात्मक है, इसलिए उसमे काफी समय लगते देखकर परिषद् के प्रकाशनाधिकारी श्रीअनूपलाल मण्डल को इस बात की बडी चिंता होने लगी कि यह इतिहास न जाने कितने वर्षों मे पूरा होगा। उनके सिवा परिषद् के कई सदस्य भी ऐसी आशका प्रकट करने लगे कि न शोध का अत होगा और न पुस्तक शीघ्र प्रकाशित होगी। सबकी उत्कठा देखकर हम भी अधीर और आतुर होने लगे।

सन् १९५६ ई० में श्रीअजितनारायण सिंह 'तोमर' परिषद् के कार्यालय-सचिव के रूप मे शिक्षा विभाग से आये। उनकी सहायता द्वारा कार्यालय के प्रबन्ध-सम्बन्धी कार्यों मे अवकाश पाकर हम प्रतिदिन इस इतिहास के काम मे कुछ समय देने लगे।

सन् १९५८ ई० मे निश्चय हुआ कि प्रथम खण्ड की पाण्डुलिपि प्रेस मे भेज दी जाय। उधर पाण्डुलिपि टंकित होने लगी और इधर प्रतिदिन की खोज से मिली हुई नई सामग्री टंकित प्रति मे जोडी जाने लगी। इस तरह ऐसा अनुभव होने लगा कि अतिम प्रेस-कॉपी कभी तैयार न हो सकेगी। अत सबकी उत्सुकता का ध्यान रखते हुए यह निश्चय करना पडा कि शोध मे जो कुछ प्रामाणिक सामग्री मिल सकी है, वही प्रकाशित कर दी जाय और आगे मिलनेवाली सामग्री को क्रमश प्रकाशित करते रहने का प्रबन्ध किया जाय।

सन् १९५९ ई० के आरम्भ मे परिषद् के सचालक-मण्डल ने हिन्दी मे भारतीय शब्दकोश प्रकाशित करने का निश्चय किया। उस काम के लिए परिषद् ने श्रीगदाधर-प्रसाद अम्बष्ठ को चुना। हमने परिषद् के संचालक-मण्डल के निश्चय एव निर्देश के अनुसार हिन्दी-शब्दकोश का काम श्रीअम्बष्ठजी को सौंप दिया तथा उसके लिए एक-दो सहायक भी उन्हें दे दिये। साथ ही 'हिन्दी-साहित्य और बिहार' की सारी सामग्री शब्दकोश-विभाग से अलग करके हमने परिषद् के साहित्य-विभाग के अनुसधायक श्रीबजरग वर्मा के हवाले कर दी। उन्होने सशोधित और सपादित प्रेस-कॉपी को

फिर नये सिरे से तैयार किया तथा पटना-स्थित अनेक शोध-'स्थानो में स्वयं जाकर बहुत-सी नई प्रामाणिक सामग्री का सग्रह् करके यथास्थान आवश्यक परिवर्त्तन-परिवर्द्धन कर दिया। हमने ऐसी व्यवस्था कर दी कि वे परिषद्‌ के साहित्य-विभाग के अन्य अनुसंधानात्मक कार्यो से सर्वथा मुक्त होकर एकमात्र इसी काम में अपना समय लगावें।

वर्त्तमान प्रथम खण्ड के लिए श्रीबजरग वर्मा ने जो अति परिश्रम किया, उसके अतिरिक्त परिषद्‌ के निम्नांकित कार्यकर्त्ताओ ने भी आवश्यकतानुसार हमारी विशेष सहायता करने मे बडी सहानुभूति प्रदर्शित की—

१. प० शशिनाथ झा (विद्यापति-विभाग)
२. प० हवलदार त्रिपाठी 'सहृदय' (सहकारी प्रकाशनाधिकारी)
३. श्रीरामनारायण शास्त्री (प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थशोध-विभाग)
४. प० विधाता मिश्र (,, ,,)
५ श्रीश्रुतिदेव शास्त्री (लोकभाषा-अनुसधान-विभाग)
६. श्रीश्रीरजन सूरिदेव (प्रकाशन-विभाग)
७. श्रीपरमानन्द पाण्डेय (ग्रन्थपाल, अनुसंधान-पुस्तकालय)

हम उन सभी उदाराशय सज्जनो का भी आभार अगीकार करते है, जिन्होने येन केन प्रकारेण इस इतिहास मे सहायता देने की कृपा की है। यथासभव ऐसी चेष्टा की गई है कि इस इतिहास के किसी-न किसी अश में उनका नामोल्लेख हो जाय।

इस पुस्तक के शीघ्र प्रकाशन की व्यवस्था में श्रीअनूपलाल मण्डल और श्रीअजित-नारायण सिंह 'तोमर' ने जो तत्परता और ममता दिखाई, उससे हमें आशा है कि इस इतिहास के प्रकाशन के भावी खण्डो में भी उनकी दिलचस्पी इसी प्रकार बनी रहेगी।

हमे संतोष है कि वर्त्तमान शिक्षा-मत्री श्रीमान् कुमार गगानन्दसिंहजी की छत्रच्छाया मे इस साहित्यिक इतिहास-पुस्तकमाला के प्रकाशन का श्रीगणेश हुआ है, और आशा है कि इसके अगले खण्ड भी यथासमय क्रमशः प्रकाशित होते रहेगे। अत मे, हम बिहार-सरकार के प्रति हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करते है, जिसकी कृपा से बिहार का यह अत्यन्त आवश्यक कार्य विधिवत् सम्पन्न हो सका।

पुस्तक छप जाने पर यह देखा गया कि बहुत सावधानता से मुद्रण-कार्य करने पर भी कुछ भ्रमात्मक भूले रह गई है। उनका सुधार 'शुद्धि-पत्र' में कर दिया गया है।

श्रावणी पूर्णिमा
शकाब्द १८८१, विक्रमाब्द २०१६

शिवपूजन सहाय
परिषद्‌-संचालक

विषयानुक्रमणिका

भूमिका

रामनाममहिमा बिस्वासी, बन्दौं गनपति बिघ्नबिनासी।
मातु सारदा चरन मनावौं, जासु कृपा निर्मल मति पावौं ॥

'रामचरितमानस' की एक चौपाई है—'साँसति करि पुनि करहिं पसाऊ, नाथ प्रभुन कर सहज सुभाऊ'—वह इस साहित्यिक इतिहास पर शब्दश चरितार्थ हुई है। बहुत दिनो की 'शास्ति' के बाद ऐसा 'प्रसाद' हुआ कि आज यह इतिहास हिन्दी-ससार के सामने प्रकट हो रहा है। धन्य है वह दयालु प्रभु जिसने 'शास्ति' मे से आधा दन्त्य 'स' निकालकर उसकी जगह आधा दन्त्य 'न' जड देने की कृपा दिखाई।

'योऽन्तःस्थितानि भूतानि येन सर्वमिदन्ततम्'—उसी परमपुरुष की मंगलमयी प्रेरणा से किसी सत्कार्य का शुभारम्भ होता है और फिर उसी की कृपा से विघ्न-बाधाओ की परम्परा पार करके वह कार्य सिद्ध भी होता है। 'श्रेयासि बहुविघ्नानि' के अनुसार किसी महत्कार्य मे विघ्न तो होते ही है, किन्तु उसमे लगे रहने से सफलता भी मिलती है। संभवत, इस पुस्तक के पाठक ऐसा अनुभव कर सकेंगे।

इस इतिहास के लिए, सबसे पहले, प्राणिमात्र के हृद्देश मे अधिष्ठित ईश्वर की प्रेरणा मेरे साहित्य-गुरु प० ईश्वरीप्रसाद शर्मा के हृदय मे हुई थी। उन्होने ही इस कार्य के लिए मुझे उत्प्रेरित किया और आरा की नागरी-प्रचारिणी सभा के पुस्तकालय-सचालक श्रीशुकदेवसिंह को मेरी सहायता के लिए उत्साहित किया था। हिन्दी-प्रेमियो से इतिहास के लिए सामग्री-संकलन करने के निमित्त अनुरोध करते हुए सबसे पहली सूचना उन्होने ही लिखी थी और सामग्री-संकलन के हेतु उसके साथ ही एक विवरण-पत्र भी तैयार कर दिया था। उनकी लिखी उस सूचना[1] के साथ वह विवरण-पत्र भी नीचे दिया गया है।

"नम्र निवेदन

'अंधकार है वहाँ जहाँ आदित्य नही है
है वह मुर्दा देश जहाँ साहित्य नहीं है'

मान्यवर महाशय,

हमलोग बिहार के हिन्दी-साहित्य का इतिहास दो वर्ष से लिख रहे हैं। हमलोगों की आन्तरिक अभिलाषा है कि वह यथासभव सर्वाङ्गपूर्ण तैयार हो। किन्तु उसमें विशेष

---

१. उक्त सूचना और विवरण-पत्र की एक हजार प्रतियाँ पृथक् पत्रक के रूप में, लक्ष्मीनारायण प्रेस (काशी) में छपवाकर हमने हिन्दी-प्रेमियों की सेवा में भेजी थीं।—सं०

परिश्रम, समय और द्रव्य व्यय करने की आवश्यकता है। परिश्रम और समय के सदुपयोग में तो कोई त्रुटि नहीं होने पाती पर द्रव्य का अभाव अवश्य है। इसलिये सब स्थानों में घूम २ कर यथेष्ट सामग्री एकत्र करने में हमलोग सर्वथा असमर्थ हैं। हाँ, यदि आप सरीखे सहृदय साहित्य-सेवी सज्जन हमलोगों को सहानुभूतिपूर्ण सहायता करने में संकोच न करें तो बिहार का वस्तुतः बड़ा उपकार हो सकता है। सभी हिन्दी-प्रधान प्रान्तों के हिन्दीप्रेमी विद्वानों ने अपने २ प्रान्त के कवियों और लेखकों की जीवनियाँ और रचनाएँ लिख कर अपने प्रान्त की गौरव-वृद्धि की है। किन्तु बड़े दुख के साथ कहना पड़ता है कि बिहार के अनेक पुराने लेखक और सुप्रसिद्ध कवि घोर अन्धकार के गर्भ में पड़े हुए हैं। कोई ऐसा साधन नहीं जिसके द्वारा उन सभी साहित्यरसिकों का पवित्र चरित्र पढ़ कर हम लाभान्वित हो सकें। कभी बिहार के साहित्यिक गौरव पर हम हिन्दीभाषियों को फूलने का अवसर ही नहीं मिलता। इसलिये अत्यंत अयोग्य होते हुए भी हमलोगों ने, इस महत्कार्य्य को, आप सरीखे उदार साहित्यानुरागियों के भरोसे पर तबतक के लिये अपने हाथ में ले लिया है जबतक कोई बहुज्ञ विद्वान इधर ध्यान नहीं देता। प्रत्येक बिहार-निवासी हिन्दी-प्रेमी का यह कर्तव्य होना चाहिये कि बिहारियों की वास्तविक हिन्दी-साहित्यसेवा का महत्त्व दिखलाने की चेष्टा करके बिहार का मुख उज्ज्वल और मस्तक उन्नत करें।

यद्यपि इस विषय में हमलोगों को जानकारी थोड़ी है तथापि आशा है कि आप महानुभावों की कृपा से सब कुछ साध्य हो सकता है। कृपया आप स्वय इस फार्म को सावधानतापूर्वक भर कर भेज दें और अपने नगर तथा ग्राम के अथवा आसपास के अन्यान्य सुपरिचित हिन्दी-सेवकों का पूरा पता बतलावें जिनकी सेवा में यह फार्म हमलोग शीघ्र भेज कर खानापूरी करा सकें। जिन हिन्दी के उल्लेख्य पुस्तकालयों, वाचनालयों, पुस्तक प्रकाशक समितियों, कविसमाजों, पाठशालाओं नाट्यमंडलियों, प्रेसों और पत्रों के विषय में आप कुछ जानते हों उनका पूरा पता, नियम और विवरण आदि भेजने या भिजवाने की कृपा करें ताकि हमलोगों को सामग्री सकलन में यथेच्छ सफलता प्राप्त हो। विश्वास है कि आप अपनी जानकारी भर पूरी सहायता करने में कभी कसर न करेंगे। हमलोग अपने सहायकों की नामावली धन्यवादपूर्वक प्रकाशित कर के पुस्तक को पवित्र करेंगे। विशेष गौरव और आनन्द की बात यह है कि इस पुस्तक को बिहार-प्रादेशिक हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन प्रकाशित करेगा।

हिन्दी-साहित्यसेवियों के दासानुदास—
शुकदेव सिंह
शिवपूजन सहाय
नागरीप्रचारिणीसभा, आरा।"

"विहार के हिन्दी साहित्य का सर्वाङ्ग पूर्ण इतिहास रचने की सामग्री"

'समस्त विहार के हिन्दी कवि, लेखक, पत्र-प्रकाशक और सम्पादक, हिन्दी-प्रेस तथा हिन्दी-सभा-समाज के संस्थापक वा संचालक'

की

'विवरणात्मक जीवनी, उनकी रचनाओं के उत्कृष्ट नमूने, उनके प्रकाशित वा अप्रकाशित ग्रंथों का पूर्ण विवरण

(विहार प्रादेशिक-हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन द्वारा प्रकाशित होगा)

क्रम संख्या	नाम (उपाधि सहित) [लेखक, कवि, सम्पादक, पत्र प्रकाशक या प्रेसाध्यक्ष]	वंश-परिचय (पिता, वर्तमान वंशधर आदि) [कोई उल्लेख्य वंशधर]	जन्म स्थान (पूरा पता, डाकघर, जिला, रेलवे स्टेशन, प्रधान सड़क आदि)	जन्म और मरणतिथि (दिन, मास, वर्ष) (संवत् वि० या सन् ई०)	रचित ग्रंथों के नाम (प्रकाशित वा अप्रकाशित) [मासिक या साप्ताहिक पत्र का नाम, प्रेस या सभा समाज का नाम]	रचना-काल (संवत् या सन्) [प्रेस या सभा की स्थापना-तिथि, पत्र की आयु आदि]	रचना के उत्कृष्ट नमूने (गद्य वा पद्य) [उद्धृत अंश के पूरे हवाले के साथ ग्रंथ का नाम और मूल्य]	विशेष विवरण [अन्यान्य विशेष आवश्यक ज्ञातव्य बातें जो महत्वपूर्ण हों]
१	२	३	४	५	६	७	८	९

आवश्यक सूचना—शुद्ध २ स्पष्ट नागराक्षर में स्वच्छतापूर्वक लिखना चाहिये। लेखक वा प्रेषक महाशय का नाम धन्यवाद पूर्वक प्रकाशित किया जायगा।

विनीत प्रार्थना—सावधानी और सहृदयता से सब कोष्ठकों को पढ और समझ कर खानापूरी करने की कृपा कीजिये। इस फार्म के भर जाने पर ऐसा ही दूसरा बना लीजिये।

याद रखियेगा—यह सारी सामग्री आरा की नागरी-प्रचारिणी सभा के पते से शुकदेव सिंह या शिवपूजन सहाय को भेजनी पड़ेगी।

सन् १९१९ ई० (विक्रमाब्द १९७६) मे, आज से चालीस वर्ष पहले, जब विहार-प्रादेशिक हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन का प्रथमाधिवेशन सोनपुर (हरिहरक्षेत्र) मे हुआ था, उसके कार्य-विवरण के चौथे आवरण-पृष्ठ पर उक्त सूचना प्रकाशित हुई थी।

उक्त सूचना के प्रकाशित होने पर श्रीमथुराप्रसाद दीक्षित, श्रीरामधारी प्रसाद, श्रीललितकुमारसिंह 'नटवर', श्रीरामवृक्ष वेनीपुरी, श्रीराघवप्रसादसिंह और श्रीगगाशरणसिंह बडे उत्साह से सामग्री-सग्रह के कार्य मे तत्पर हो गये। वे लोग जहाँ-कही, जो कुछ सामग्री अथवा सूचना पाते, मेरे पास भेजते जाते। मैं भी उस काम मे वरावर जुटा रहा। प्राप्त सामग्री का सचय और प्राप्त सूचनाओ के आधार पर पत्र-व्यवहार करने मे संलग्न रहने से हिन्दी-प्रेमियो का सहयोग प्राप्त होने लगा।

सन् १९२० ई० मे महात्मा गान्धी के असहयोग-आन्दोलन की आँधी आई। मै भी उसमे सूखा पत्ता बना। मेरे पूर्वोक्त सहायक वन्धु भी उस युग की अभिनव क्रान्ति के पुजारी बन गये। तब भी सग्रह-कार्य मन्थर गति से होता ही रहा। मै अपनी अल्पज्ञता और अनुभव-हीनता के कारण सगृहीत सामग्री अपने साथ ही रखता था—जहाँ-कही रोजी कमाने जाता, मोहवश उसे लिये फिरता। यह अनाडीपन वडा घातक हुआ।

सन् १९२१ ई० मे मासिक 'मारवाडी-सुधार' का सम्पादक होने पर और १९२३ ई० मे साप्ताहिक 'मतवाला' के सम्पादकीय-विभाग मे सम्मिलित होने पर मुझे संग्रह-कार्य मे विशेष सुविधा हुई। उसी समय ऐसा अनुभव हुआ कि सामग्री-सग्रह के लिए किसी पत्र का आधार वडा आवश्यक है। सयोगवश सन् १९२५-२६ ई० मे, जब मै कलकत्ता के 'मतवाला'-मण्डल से लखनऊ की मासिक पत्रिका 'माधुरी' के सम्पादकीय-विभाग मे काम करने गया, तब पूर्ववत् सारी सगृहीत सामग्री अपने साथ वहाँ लेता गया। वहाँ अकस्मात् भीषण साम्प्रदायिक दगा हो गया। घोर प्राणसकट की स्थिति मे मुझे सर्वथा विवश होकर सारी साहित्यिक सामग्री वही छोड काशी चला जाना पडा। परित्यक्त सामग्री के मोह एव शोक मे वहाँ लगभग एक मास तक बीमार रहने के बाद जब लौटकर लखनऊ गया, तब देखा कि सब सामान गायब है, एक चिट-पुर्जा भी हाथ न लगा। निराशा-जन्य दु ख मे पश्चात्ताप करता हुआ मै पुन 'मतवाला'-मण्डल मे वापस हो गया। वहाँ फिर अपनी विक्षिप्त स्मृति-शक्ति के सहारे सग्रह-कार्य करने लगा। उपर्युक्त वन्धुओ के हार्दिक सहयोग से पुन सामग्री इकट्ठी होने लगी।

सन् १९२८ ई० मे, लहेरियासराय (दरभगा) के पुस्तक-भण्डार से, श्रीरामवृक्ष बेनीपुरीजी के सम्पादकत्व मे, बालोपयोगी सचित्र मासिक पत्र 'बालक' का प्रकाशन हुआ। उस समय उन्होने सामग्री सकलन पर विशेष ध्यान दिया। फिर, उसके बाद जब वे क्रान्तिकारी मासिक 'युवक' के सम्पादक हुए, तब भी उन्होने और उनके सहकर्मी श्रीगगाशरणसिंह ने इस काम मे खासी दिलचस्पी दिखाई। श्रीगगाशरणजी ने तो विहार-प्रान्त के अनेक स्थानो मे स्वय भ्रमण करके मसाला जुटाया। श्रीरामधारी प्रसाद और श्रीनटवरजी भी बराबर सहायता करते रहे। उन्ही दिनो 'बालक' के श्रीकृष्णजन्माष्टमी के सुन्दर विशेषाक (भाग २, वर्ष ३, अक ८, विक्रमाब्द १९८५) मे निम्नाकित सूचना[1] छपी थी—

[1] यह सूचना उस समय के हिन्दी-साप्ताहिक पत्रों में भी छपी थी।—स०

विजया-दशमी तक अवश्य भेज दीजिये

'बिहार के हिन्दी-कवियों और लेखकों की सचित्र जीवनी' की सामग्री

आपको मालूम है कि यह पुस्तक बरसों से तैयार की जा रही है। बहुत-सी सामग्री सग्रहीत हो चुकी हैं। दसहरे के बाद ही उस पुस्तक का सम्पादन-कार्य आरम्भ हो जायगा, और दीवाली के बाद ही छपाई भी शुरू हो जायगी; क्योंकि इसके प्रकाशन मे अनावश्यक एवं असह्य विलम्ब हो रहा है। अनेक बार बिहार के साहित्यानुरागियों से आवश्यक सामग्री भेजने की प्रार्थनाएँ की गईं, और उनकी कृपा के लिये यथेष्ट प्रतीक्षा भी की जा चुकी। किन्तु सन्तोषजनक फल नहीं हुआ। अतएव यह निश्चय किया गया है कि अबतक जितनी सामग्री प्राप्त हो चुकी है, उसी का सिलसिला दुरुस्त करके पुस्तकाकार प्रकाशित कर दिया जाय, ताकि त्रुटियों एवं न्यूनताओं की ओर साहित्यानुरागियों का ध्यान शीघ्र आकृष्ट हो, और पुस्तक के दूसरे-परिशिष्ट-खड मे उनकी पूर्ति हो जाय। फिर भी आगामी दसहरे तक सामग्री भेजने का अवसर दिया जा रहा है। विश्वास है कि बिहार के हिन्दी-प्रेमी सज्जन इस बार अवश्य ही इस निवेदन पर विशेष रूप से ध्यान देने की कृपा करेंगे। सब तरह की सामग्री और इस विषय की चिट्ठी-पत्री निम्नलिखित पते से भेजिये—

श्री गंगाशरण सिंह 'साहित्यरत्न'

खड़गपुर, बिहटा (पटना)

विशेष सूचना—यदि आप लेखक, कवि, सम्पादक या प्रकाशक है, तो अपनी पूरी जीवनी (फोटो-सहित) शुद्ध और स्पष्ट लिखकर भेजिये – साथ ही, अपनी रचनाओं के उत्कृष्ट नमूने और अपनी लिखी या प्रकाशित पुस्तकों तथा सम्पादित पत्रों की प्रतियाँ भी। और, जिन मृत या जीवित लेखकों, कवियों, सम्पादकों और प्रकाशकों को आप जानते हों, या जो आपके आसपास रहते हों, उनकी जीवनी और रचनायें आदि भी भेजिये। अपने ग्राम, नगर या आसपास के उल्लेखनीय हिन्दी-पुस्तकालयों, हिन्दी-प्रेसों, हिन्दी-पत्रों और प्रकाशन-संस्थाओं का विवरण भी भेजिये। कार्योपरान्त सब सामग्री, आज्ञानुसार, सुरक्षित लौटा दी जायगी। इस महत्त्वपूर्ण कार्य मे तत्परता से हाथ बटाने वाले सज्जनों के नाम भी पुस्तक मे धन्यवाद-पूर्वक प्रकाशित कर दिये जायँगे।

व्यवस्थापक—हिन्दी-पुस्तक-भंडार, लहेरियासराय

'बालक' के प्रकाशनारम्भ-काल (सन् १९२७ ई०) मे ही कलकत्ता से मैं पुस्तक-भण्डार की सेवा मे चला आया। 'बालक'-सम्पादक श्रीबेनीपुरीजी के अतिरिक्त 'बालक' के जन्मदाता-सचालक श्रीरामलोचनशरणजी से भी मुझे इस काम मे यथोचित प्रोत्साहन मिलने लगा। उस समय हिन्दी-संसार मे 'बालक' की बड़ी प्रख्याति हुई और उसके माध्यम से इस काम मे बिहार के हिन्दी-प्रेमियो की सहानुभूति भी प्राप्त होने लगी।

'बालक' के बाद जब श्रीबेनीपुरीजी 'युवक' के सम्पादक थे, तभी निम्नाकित सूचना[1] पुनः छपवाकर हिन्दी-प्रेमियो मे वितरित की गई थी—

---

१. यह सूचना भी उस समय के दैनिक और साप्ताहिक पत्रों में प्रकाशित कराई गई थी।—स०

कृपया उत्तर शीघ्र दीजिये

'बिहार के हिन्दी-कवि और लेखक' (सचित्र)

सेवा में—

....

....

प्रिय महाशय,

बिहार के हिन्दी-कवियों और लेखकों की रचनाओं और उनके चरित पर पूर्ण प्रकाश डालने वाली एक पुस्तक प्रकाशित होने का अभाव बहुत दिनों से लोग अनुभव कर रहे हैं। इसके लिये कई बार कई व्यक्तियों और संस्थाओं द्वारा प्रयत्न भी किये गये, फल-स्वरूप बहुत-से प्राचीन और नवीन कवियों तथा लेखकों की कृतियाँ भी प्राप्त हुई, किन्तु अभीतक पूरी सामग्री संकलित न होने के कारण पुस्तक-रूप में उनका प्रकाशन न हो सका। इस बार हमलोगों ने यह पक्का विचार कर लिया है कि जिस प्रकार भी हो, यह काम तुरत सम्पन्न कर लिया जाय। हमलोगों के सौभाग्य से बिहार के उत्साही प्रकाशक हिन्दी-पुस्तक-भंडार, लहेरियासराय (दरभंगा) के संचालक महोदय ने इस ग्रन्थ को सचित्र रूप में प्रकाशित करने का भार अपने ऊपर लिया है। अतएव, यह पत्र आपकी सेवा में भेज कर हम आपसे सांजलि अनुरोध करते हैं कि आप शीघ्र ही अपने एवं अपने जान-पहचान के लेखकों और कवियों के सम्बन्ध की ज्ञातव्य बातें, निम्नलिखित क्रम के अनुसार, लिख भेजने की कृपा करें। साथ ही, यदि किसी प्राचीन कवि के विषय में आप कुछ जानते हों—जैसा कि हमें पूर्ण विश्वास है, आप अवश्य जानते होंगे—तो उनसे भी हमें परिचित करायें। यदि आपके जानते कोई ऐसे कवि भी हों, जिनके विषय में आप स्वयं पूरा वर्णन न दे सकते हों, किन्तु उनके विषय की सामग्री कहाँ से प्राप्त हो सकती है, इसकी खबर आप रखते हों, तो वह पता भी हमें बताइये, जिसमें हम वहाँ से पत्र-व्यवहार कर, या वहाँ जाकर, सब बातें मालूम कर सकें। यदि पत्र द्वारा आप किसी कारण से अधिक बातें बताने में असमर्थ हों तो लिखिये कि हम आपसे आकर मिलें और सब बातों की जानकारी हासिल करें। विवरणों के साथ ही यदि आप अपना और अन्य कवियों या लेखकों के चित्र भी भेज सकें, तो बड़ी कृपा हो।

यह कार्य बहुत ही कठिन और व्यय साध्य है। जबतक आप ऐसे सहृदय साहित्यिक इस कार्य में हाथ न बटायेंगे—इसका भली-भाँति सम्पन्न होना असम्भव-सा है। आप ही लोगों की कृपा के भरोसे हमने इस कार्य के प्रारम्भ करने का साहस किया है। आशा है कि आप इस पर उचित ध्यान देंगे और शीघ्र ही उपयुक्त विवरण भेज कर अनुगृहीत करेंगे। इस पवित्र कार्य में सहायता देनेवाले सज्जनों की नामावली में आपका नाम भी इस पुस्तक में प्रकाशित करने का सौभाग्य हमें प्राप्त होगा—ऐसा भरोसा है।

विवरण यों भेजिये—

१. कवि या लेखक का नाम, २. वश-परिचय, ३. जन्म-तिथि (मृत होने पर मृत्यु-तिथि भी), ४. पूरा पता, ५. संक्षिप्त चरित, ६. रचना-काल, ७. रचित ग्रन्थों के नाम (प्रकाशित या, अप्रकाशित कब और कहाँ से प्रकाशित हुए), ८. फुटकर रचनायें—प्रकाशित या अप्रकाशित, ९. रचना के उत्कृष्ट नमूने, १०. अन्य ज्ञातव्य बातें।

कृपैषी—

श्रीशिवपूजन सहाय, श्रीरामवृक्ष शर्मा बेनीपुरी, श्रीगंगाशरणसिंह

पत्र-व्यवहार इस पते पर कीजिये—

श्रीगंगाशरणसिंह, मु०—खरगपुर, पो० —बिहटा, (पटना)

सन् १९३०-३१ ई० में जब मै सुलतानगज (भागलपुर) से प्रकाशित 'गंगा' का सम्पादक हुआ, तब पण्डित जगदीश झा 'विमल' की सहायता से उस क्षेत्र की कुछ सामग्री प्राप्त हुई। 'गगा' के सहकारी-सम्पादक साहित्याचार्य श्री 'मग' ने भी मेरे उद्योग मे सहयोग देने की कृपा की। पूरे एक साल के बाद जब मैं फिर पुस्तक-भण्डार मे आया, तब 'बालक' के सहकारी सम्पादक श्रीअच्युतानन्द दत्त और 'मिथिला-मिहिर' के सम्पादक श्रीसुरेन्द्र झा 'सुमन', साहित्याचार्य ने बडी सहृदयता से इस काम मे सहायता दी। इस तरह सामग्री-सकलन का काम नियमित रूप से चलता रहा।

दैवयोग से सन् १९३४ ई० मे, विशेषत उत्तर-विहार मे, भीषण भूकम्प हुआ। उसमे समस्त सगृहीत सामग्री आकस्मिक भूगर्भ-विस्फोट मे नष्ट-भ्रष्ट हो गई। विदीर्ण पृथ्वी से निर्गत वालुका-मिश्रित जलराशि मे से अस्त-व्यस्त कागजो को घण्टो बाद निकालने की सुधि हुई, तो कुछ ही बिखरे पन्ने हाथ लगे, बाकी सब लथपथ होने के कारण सुखाने पर भी लिट्ट हो गये। किन्तु उस समय तो प्राणो के ही लाले पडे थे, क्योकि चौबीस घटे तक रह-रहकर भूचाल के झटके आते-जाते रहे, अत निराशा और ग्लानि के कारण मन हतोत्साह हो गया। तब भी मेरे हृदय में जो निश्चित सकल्प था, वह 'श्रेयांसि बहुविघ्नानि' का आश्वासन दे-देकर इस काम मे लगे रहने को मुझे उद्विग्न एवं प्रेरित करता ही रहा। उस समय वयोवृद्ध साहित्यसेवी पण्डित जनार्दन झा 'जनसीदन' और श्रीगगापति सिंह ने मेरे विचलित मन को बडा ढाढस और बढावा दिया, जिससे मेरा टूटा हुआ मन फिर इस काम मे जुट गया।

ईश्वर की कृपा से सन् १९३९ ई० मे जब मैं राजेन्द्र-कॉलेज मे हिन्दी-विभाग का प्राध्यापक होकर छपरा चला गया, तब सामग्री-सकलन और सकलित सामग्री को सुव्यवस्थित करने का अवसर मिलने लगा। अवकाशो का सदुपयोग अधिकतर इसी काम मे होता रहा। ईश्वरीय प्रेरणा से सन् १९४० ई० मे पुस्तक-भण्डार (लहेरियासराय) की रजत-जयन्ती और उसके लब्धकीर्त्ति सस्थापक श्रीरामलोचनशरणजी की स्वर्ण-जयन्ती के उपलक्ष्य मे एक वृहत् स्मारक-ग्रन्थ प्रकाशित करने का निश्चय हुआ। उस ग्रन्थ मे उस समय तक की सगृहीत सामग्री का समावेश तो किया ही गया, और

भी वहुत-सी नई सामग्री खोजकर बिहार की हिन्दी-सेवा का विवरणात्मक परिचय दिया गया। उस अवसर पर सामग्री-संग्रह में पुस्तक-भण्डार का विद्यापति-पुस्तकालय बड़ा सहायक सिद्ध हुआ। उसमे सचित पुरानी दुर्लभ पुस्तको और अलभ्य पत्र-पत्रिकाओं से सामग्री-सकलन करने मे वर्त्तमान विख्यात कथाकार श्रीराधाकृष्ण प्रसाद, एम्० ए० ने वडी सहायता की।

जव सन् १९४३ ई० मे काशी नागरी-प्रचारिणी सभा की स्वर्ण-जयन्ती मनाई गई, तब सभा की ओर से पण्डित लल्लीप्रसाद पाण्डेय ('बालसखा'-सम्पादक) के तत्त्वावधान मे हिन्दी-ससार के साहित्यसेवियो का सक्षिप्त परिचय-ग्रन्थ तयार किया जाने लगा। पाण्डेयजी ने मुझसे बिहार की सहित्य-सेवा का विवरण माँगने की कृपा की। मैंने अपने पास की सगृहीत सामग्री की प्रतिलिपि उनकी सेवा मे प्रेषित कर दी। यद्यपि वह ग्रन्थ प्रकाशित न हो सका, तथापि उसके कारण मेरे पास की सामग्री बहुत-कुछ सुव्यवस्थित हो गई।

भारतेन्दु-युग के वयोवृद्ध लेखक बाबू शिवनन्दन सहाय से मैंने उनके जाने-सुने-देखे साहित्यकारो का परिचयात्मक विवरण लिखवाया था। उसके कई पन्ने छाँटकर श्रीभुवनेश्वर सिंह 'भुवन' ले गये। वे उस विवरण को मुजफ्फरपुर से प्रकाशित अपनी 'विभूति' पत्रिका मे प्रकाशित करना चाहते थे। किन्तु उनके असामयिक निधन के कारण वह विवरण न छपा और न मेरे हाथ लगा। उस विवरण के खो जाने से सुव्यवस्थित सामग्री फिर खण्डित हो गई।

सन् १९५० ई० में बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् की सेवा पर नियुक्त होने के बाद मैंने विहार-हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के पुस्तकालय मे मिली पुस्तको और पत्र-पत्रिकाओ से सामग्री-संग्रह का जो प्रयास किया, उसमे सम्मेलन के ग्रन्थपाल श्रीदामोदर मिश्र से आवश्यक सहायता प्राप्त हुई। उसी समय सम्मेलन के त्रैमासिक मुखपत्र 'साहित्य' के नवीन संस्करण का प्रकाशनारम्भ हुआ, जिसके चतुर्थ अक (जनवरी १९५१ ई०) के चौथे आवरण-पृष्ठ पर मैंने निम्नाकित सूचना[1] प्रकाशित कराई—

बिहार का साहित्यिक इतिहास

बिहार की साहित्यसेवा हिन्दी साहित्य के इतिहास मे, बडे महत्त्व की है। बिहार के लेखको, कवियों, सम्पादकों और पत्रकारों ने हिन्दी की सराहनीय सेवा की है। किन्तु आजतक बिहारी साहित्यकारों की साहित्यसेवा का कोई विवरण, विस्तार से या सक्षेप मे कभी लिखा नहीं गया। फल यह हुआ है कि हिन्दी-साहित्य के इतिहासों मे बिहार के साहित्यिकों का कार्यक्षेत्र भी विहार ही रहा है, पर उसका भी वर्णन कहीं नहीं मिलता। इससे विहार का साहित्यिक गौरव घोर अन्धकार और विस्मृति के गर्भ मे छिपा हुआ है। उसे प्रकाश में लाकर हिन्दी प्रेमियों के सामने रखने की आवश्यकता है। इस आवश्यकता का अनुभव उसी समय हुआ था जिस साल बिहार-हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन का जन्म

१ यह सूचना भी उस समय कई सामयिक पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुई थी। —सं०

हुआ था। तभी से इस आवश्यकता की पूर्ति के लिये उपयुक्त सामग्री का संग्रह किया जाने लगा। इस शुभ प्रयत्न मे सर्वश्री गंगाशरण सिंह, रामवृक्ष बेनीपुरी, मथुरा प्रसाद दीक्षित रामधारी प्रसाद, राघव प्रसाद सिंह, ललित कुमार सिंह 'नटवर' आदि प्रमुख साहित्यिकों के सहयोग से काफी सफलता मिली—इतनी सामग्री संकलित हो गई कि अब उसे ग्रन्थ का रूप देना अनिवार्य प्रतीत होने लगा। अत यह निश्चय किया गया है कि प्राप्त सामग्री का सदुपयोग अविलम्ब किया जाय। किन्तु वह ग्रन्थ तभी सर्वांगपूर्ण होगा जब बिहार के सभी हिन्दीप्रेमी और साहित्यिक इस महान् कार्य मे खुले दिल से सहयोग करेंगे। आशा और विश्वास है कि बिहार के साहित्यसेवी सज्जन, चाहे वे जहाँ-कहीं भी हों, इस नम्र निवेदन पर ध्यान देने की कृपा करेंगे। नये-पुराने लेखकों कवियों और पत्रकारो का प्रामाणिक परिचय (सचित्र) भेजकर वे अमूल्य सहायता कर सकते हैं। इस विषय मे नीचे लिखे पते से पत्र व्यवहार करना और सामग्री भेजनी चाहिये—

शिवपूजन सहाय, मंत्री, बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्, सम्मेलन भवन, पटना-३

मुझे अनुभव होने लगा कि सूचनाओ के प्रकाशन एव वितरण से उतना लाभ नही हो रहा है, जितनी आशा की जाती है और पत्र-व्यवहार से भो अभीष्ट परिणाम नही प्रकट होता, पर साक्षात्कारपूर्वक व्यक्तिगत सम्पर्क स्थापित करने से मनोऽनुकूल कार्य सिद्ध होता है। परिषद् मे काम करते समय यह सम्पर्क-स्थापन क्रमश अधिक होने लगा। मेरे मन मे यह धारणा बद्धमूल हो गई कि परिषद् के माध्यम से ही यह काम अच्छी तरह हो सकता है। अत लगभग एक वर्ष काम कर चुकने पर मैंने परिषद् के सचालक-मण्डल में निम्नांकित आवेदनपत्र दिया—

सेवा में—

श्रीमान् माननीय सभापति, कण्ट्रोलबोर्ड
बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्, पटना

मान्यवर

सादर सविनय निवेदन है कि मैंने पिछले तीस वर्षों से बिहार के साहित्यिक इतिहास की सामग्री संकलित की है, जो अभी अस्तव्यस्त रूप में पड़ी हुई है। किन्तु उसे सुव्यवस्थित रूप देकर प्रकाशित किये बिना बिहार का साहित्यिक गौरव अन्धकार मे ही पड़ा रहेगा। मैं चाहता हूँ कि परिषद् यदि मुझे आदेश देने की कृपा करे तो मैं उसे अपनी देखरेख मे क्रमबद्ध करके ग्रन्थ का रूप दे दूँ और समय आने पर परिषद् उसके प्रकाशन के सम्बन्ध मे यथोचित विचार करे। इस समय मैं परिषद् के किसी काम मे बाधा पहुँचाये बिना ही उसके सम्पादन का काम परिषद् के तत्त्वावधान में कर सकता हूँ और अभी उसके लिए परिषद् को कुछ अतिरिक्त व्यय भी नहीं करना पड़ेगा। अत. मेरी प्रार्थना है कि संगृहीत सामग्री को ग्रन्थाकार मे प्रस्तुत करने का आदेश मुझे दिया जाय।

कृपाकांक्षी
ह० शिवपूजन सहाय

पटना, १६-७-५१

मैंने दिनाक २५-७-५१ की जिस बैठक में यह आवेदन-पत्र उपस्थित किया था, उसी में निम्नाकित प्रस्ताव (क्रम स० ६) सर्वसम्मति से स्वीकृत हुआ—

'बिहार के साहित्यिक इतिहास' के सम्बन्ध में श्री शिवपूजन सहाय का (१६-७-५१) पत्र पढ़ा गया और सर्वसम्मति से निश्चित हुआ कि पत्र में लिखी बातें मंजूर की जायँ और प्रार्थी को आवश्यक सुविधायें भी दी जायँ। परिषद्-मत्री को आवश्यकतानुसार उचित प्रबध कर लेने की अनुमति दी जाती है।

मुझे भगवत्कृपा का आभास मिला। उत्साह दिन-दिन बढने लगा। परिषद् के माध्यम से यह काम भी आगे बढता गया। किन्तु परिषद् के अन्यान्य कामो से बहुत कम अवकाश पाने के कारण मैं अपनी क्षुद्र क्षमता इसी कार्य पर केन्द्रित न कर सका। तब भी अत्यधिक अतिरिक्त परिश्रम से मैं अचानक बहुत बीमार हो गया। मुझे पटना के यक्ष्मा-केन्द्र मे महीनो शय्याग्रस्त रहना पडा। उस समय मेरा परिवार ऐसा व्यग्र रहा कि मेरी संगृहीत सामग्री की देखभाल न कर सका। मैं भी सहसा रोगाक्रान्त होने से अशक्तता के कारण सामग्री-सरक्षण की सुव्यवस्था न कर पाया। परिषद्-कार्यालय में भी जो सामग्री था, वह स्थानसकोचवश यदा-कदा स्थानान्तरित होते रहने के कारण इतस्ततः अस्त-व्यस्त हो गई। फल यह हुआ कि बिहार के कई प्रमुख वयोवृद्ध साहित्यसेवियो से साक्षात्कार द्वारा पूछताछ करके मैंने जो उनकी जीवनी के विवरण लिखे थे, वे कही गुम हो गये। कुछ विद्वान् साहित्यकारो से लिखवाये हुए उनके आत्मपरिचय भी खो गये, केवल पण्डित रामदहिन मिश्र का हस्तलेख ही हस्तगत हुआ, जिसका किञ्चिदंश उनके स्वर्गारोहण के पश्चात् उनके 'किशोर' के पुण्यस्मृति-अक में प्रकाशित हुआ था। बाबू शिवनन्दन सहाय के हस्तलेख का हाल पहले ही लिख चुका हूँ।

इस प्रकार, मेरे अज्ञान और दुर्भाग्य से जो हानि एव ग्लानि के अवसर आये, उन्हे मैंने अपनी अग्निपरीक्षा समझकर राम-राम करते झेला। मुझे यही सोचकर धीरज हुआ कि केवल पुण्यात्मा पुरुष का आरब्ध कार्य ही आद्यन्त निर्विघ्न सम्पन्न होता है और मैं निश्चय ही वैसा नही हूँ। यहाँ विपत्तियो और दुर्घटनाओ के उल्लेख का प्रयोजन बस इतना ही है कि अच्छे कामो मे होनेवाली विघ्न-बाधाओ का अनुमान करके भविष्य के सत्कार्य मे संलग्न होने के लिए साहस-संचय किया जाय। कठिनाइयो से जूझने मे जो शक्ति क्षीण होती है, वह संघर्ष-काल मे ईश्वरीय सत्ता का ध्यान रखने पर फिर पुष्ट भी हो जाती है। ऐसा कुछ अनुभव इस काम मे होता नजर आया है।

अपनी दीर्घकालीन अस्वस्थता के बाद जब सन् १९५४ ई० मे, ईश्वरेच्छया पुन. मैंने परिषद्-सचालन का कार्यभार संभाला, तब पूर्वोक्त स्वीकृत प्रस्ताव को कार्यान्वित करने का प्रयत्न किया। कुछ महीनो तक श्रीचन्द्रेश्वर 'नीरव' ने बची-खुची सामग्री को सहेजा और नया सामान भी जुटाया। तब एक ऐसे अनुभवी कार्यकर्त्ता की आवश्यकता प्रतीत हुई, जो शोधकार्य मे भी निपुण हो। मैंने परिषद् के प्रकाशकाधिकारी श्रीअनूपलाल मण्डल से सलाह की, तो श्रीगदाधरप्रसाद अम्बष्ठ, विद्यालकार पर ध्यान गया। उनका

स्मरण होने पर संचालक-मण्डल के आदेश को कार्यान्वित करने का प्रबन्ध किया गया। फलस्वरूप, सन् १९५५ ई० में ४ जुलाई से अम्बष्ठजी ने कार्यभार ग्रहण किया।

अम्बष्ठजी बिहार के पुराने साहित्यसेवी और मुंगेर जिले के निवासी है। वे गत तीस-पैंतीस वर्षों से बड़ी लगन के साथ हिन्दी साहित्य की उल्लेखनीय सेवा करते आ रहे हैं। भूगोल, इतिहास, जीवन-चरित आदि के अतिरिक्त वे बिहार-शब्दकोश और भारतीय-शब्दकोश के समान प्रामाणिक आकर-ग्रन्थों का भी निर्माण कर चुके है। विशेषतः बिहार के विषय मे उनका बहुमुखी शोध और ज्ञान बड़े महत्त्व का माना जाता है। अनुसन्धानात्मक साहित्यिक कार्य का सुव्यवस्थित रीति से सम्पादन करने मे वे बड़े कुशल भी है। अत. कार्यभार-ग्रहण करते ही उन्होंने समस्त संगृहीत सामग्री को क्रमबद्ध और व्यवस्थित करके बड़े मनोयोग से कार्यारम्भ किया। उनकी कार्यदक्षता से यह काम नियमित रूप से आगे बढने लगा। पहले की संकलित सामग्री अधिकतर उन्नीसवीं और बीसवीं शती की थी, जिसका वर्गीकरण और विश्लेषण करके उन्होंने तत्सम्बन्धी अभाव-पूर्त्ति के निमित्त नवीन सामग्री के संग्रहार्थ तो प्रयत्न किया ही, सुदूर अतीतकाल की सामग्री का अन्वेषण करने मे भी बड़ी तत्परता दिखाई। फलत सातवीं सदी से अठारहवीं सदी तक के अन्धकार-युग की सामग्री का अनुसन्धान करने मे निरन्तर संलग्न रहे।

यहाँ इस बात का उल्लेख अत्यावश्यक है कि बिहार-राष्ट्रभाषा परिषद् यदि स्थापित न हुई होती, तो यह इतिहास प्रस्तुत रूप मे कदापि प्रकाशित न हो पाता। परिषद् के अनुसन्धान-पुस्तकालय और प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थशोध-विभाग से अतीत युगों की सामग्री का शोध करने मे विशेष सुविधा हुई। अम्बष्ठजी ने आधुनिक गवेषणापूर्ण ग्रन्थो और पुरानी दुर्लभ पत्र-पत्रिकाओं तथा प्राचीन हस्तलिखित पोथियों से सामग्री-संकलन करके प्रस्तुत प्रथम खण्ड का ढाँचा तैयार कर दिया। इस कार्य मे उन्हे अनुसन्धान-पुस्तकालय के ग्रन्थपाल श्रीपरमानन्द पाण्डेय और प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थशोध-विभाग के प्रमुख कार्याधिकारी श्रीरामनारायण शास्त्री का यथोचित सहयोग प्राप्त हुआ। शास्त्रीजी ने अपने विभाग के पुराने हस्तलेखों से बिहार के दूरातीतकालीन साहित्यकारों का विवरणात्मक परिचय लिख दिया। उन्होंने चैतन्य पुस्तकालय (पटना सिटी), श्रीमन्नूलाल-पुस्तकालय (गया), श्रीशिवनन्दन-संग्रहालय (बालहिन्दी-पुस्तकालय, आरा) आदि से भी सामग्री-संग्रह करने मे बड़ा परिश्रम किया। पोथियों की खोज के लिए बिहार-राज्य मे भ्रमण करते समय भी उन्होंने इस इतिहास के निमित्त सामग्री-संकलन का ध्यान रखा। काशी-निवासी पण्डित उदयशंकर शास्त्री ने भी अपने निजी संग्रहालय के हस्तलेखों से बिहार के कुछ पुराने कवियों के सम्बन्ध मे महत्त्वपूर्ण सूचनाएँ तथा विवरण भेजने की कृपा की।

सामग्री-संग्रह के लिए जो पत्र और विवरण-पत्रक छपवाकर हिन्दीप्रेमियों के पास भेजे गये उसका रूप इस प्रकार का था[1]—

---

१. अधिकांश सज्जनों ने पत्रोत्तर देने और विवरण-पत्रक भरकर भेजने की कृपा नहीं की, उनकी सेवा में अनुस्मारक-पत्र भी भेजे गये, पर तब भी यथेष्ट लाभ न हुआ।—सं०

'बिहार का साहित्यिक इतिहास'

महोदय,

आपको विदित होगा कि बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् (पटना) की ओर से 'बिहार का साहित्यिक इतिहास' तैयार किया जा रहा है। इसमें आठवीं सदी से लेकर बीसवीं सदी तक के बिहार के हिन्दी साहित्य सेवियों के परिचय, उनकी उत्कृष्ट रचनाओं के उदाहरण तथा उक्त कालावधि के हिन्दी साहित्य की प्रगति के विवरण रहेंगे। अबतक हमें पुराने और नये सैकड़ों साहित्य-सेवियों के परिचय, उनकी रचनाएँ और चित्र प्राप्त हो चुके हैं; किन्तु अभी और भी बहुतों के परिचय मिलना बाकी है। इस कार्य की सफलता सब लोगों के सहयोग और सहायता पर निर्भर करती है। इसलिए यदि सब लोग अपने-अपने क्षेत्रों के पुराने और विस्मृत साहित्य सेवियों के परिचय दे सकें या कम से-कम यही बता सकें कि किन साहित्यकारों के परिचय किनसे मिल सकेंगे तो बड़ी कृपा होगी। नये साहित्यकारों के नाम-पते मिलने से हम स्वयं उनके पास छपे परिचय फार्म भेजेंगे। जिन्हें आवश्यकता हो, मँगा लेने की कृपा करें।

साहित्यकारों के परिचय सुचारु रूप से लिखे जा सकें, इसके लिए आवश्यक है कि हम उनकी सभी रचनाओं को पूरी तरह देखें। अतएव हमें उन सबकी प्रतियों की भी आवश्यकता होगी। अतः उन्हें प्राप्त करने में कृपया हमारी सहायता करें।

जिनके पास हिन्दी की बहुत पुरानी मुद्रित या हस्तलिखित पोथियाँ हों, वे उनके नाम, विषय आदि की सूची बनाकर भेजने की कृपा करें।

इस इतिहास में बिहार की पुरानी और नयी पत्र-पत्रिकाओं तथा साहित्यिक एवं प्रकाशन-संस्थाओं के भी परिचय रहेंगे। अतएव इनके सम्बन्ध, में भी जो विवरण दे सकें, देने की कृपा करें। पुरानी पत्र-पत्रिकाओं की प्रतियाँ यदि आप दे सकते हों तो हमें लिखने का कष्ट करें।

हमें आशा और विश्वास है कि आप हमारे इस आयोजन को सफल बनाने में यथाशीघ्र सब प्रकार की सहायता देकर अनुगृहीत करेंगे।

उत्तराभिलाषी

संचालक, बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्

कदमकुँआ, पटना-३

'बिहार का साहित्यिक इतिहास

जन्म-संवत् — रचना-काल

---

१. नाम और उपनाम (घरेलू और साहित्यिक नाम अलग-अलग हों तो दोनों का उल्लेख)—

२. उपाधियाँ (कब और किन संस्थाओं से प्राप्त)—

३. वंश-परिचय (यदि विशेष उल्लेखनीय हो)—

४. पिता का नाम (महिलाओं के लिए पति का नाम आदि देना भी आवश्यक)—

५. जन्म-काल (विक्रम-संवत् या ईसवी सन्, तिथि-वार-सहित। मृत व्यक्तियों की मृत्यु-तिथि भी)—

६. जन्म-स्थान का पूरा पता—

७. शिक्षा और जीवन के महत्त्वपूर्ण कार्य (काल-क्रम से)—

८. साहित्य-सेवा का आरम्भिक वर्ष—

९. प्रकाशित और अप्रकाशित पुस्तकों का पूरा ब्योरा (पुस्तक के नाम, विषय, प्रकाशक, प्रकाशन-सवत्, पृष्ठ-संख्या, मूल्य आदि)—

१०. स्फुट लेखों और कविताओं के सम्बन्ध में ज्ञातव्य बातें—

११. पत्र-सम्पादन-कार्य का पूरा विवरण (कब, कहाँ के, और किस दैनिक, साप्ताहिक या मासिक आदि पत्र में सहकारी या प्रधान सम्पादक)—

१२. हिन्दी-प्रचार-विषयक और प्रकाशन-सम्बन्धी कार्य—

१३. अन्य विशेष उल्लेखनीय बातें—

१४. गद्य-पद्य-रचनाओं के उत्कृष्ट उदाहरण (सलग्न पत्र पर)—

१५. स्थायी पता (थाना और रेलवे स्टेशन सहित)—

१६ वर्त्तमान पता—

१७. स्पष्ट हस्ताक्षर (तिथि सहित)—

आवश्यक सूचना—ऊपर दिये हुए शीर्षकों के सामने विवरण भरने में यदि स्थान-संकोच हो तो शीर्षक का नम्बर देकर अलग कागज पर लिखना चाहिए। रचनाओं के उदाहरण चुनने में यह ध्यान रखना चाहिए कि प्रत्येक उदाहरण भाव-भाषा की दृष्टि से तो सुन्दर हो ही, वह शिक्षाप्रद, मनोरंजक और ललित भी हो। सब तरह के विवरण भेजने और आवश्यक पत्र-व्यवहार का पता—

संचालक

बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्

सम्मेलन-भवन कदमकुआँ पटना-३

सन् १९५६ ई० मे १० अक्टूबर से श्रीअजितनारायण सिंह 'तोमर' परिषद्-कार्यालय की व्यवस्था मे सहायता करने के लिए शिक्षा-विभाग द्वारा प्रेषित होकर आये। उनके आने पर मैं कुछ अवकाश पाने लगा। अब सकलित सामग्री के सशोधन-सम्पादन मे थोडा-बहुत समय देने की सुविधा हो गई।

मैंने सामग्री सग्रहार्थ बिहार-भ्रमण के लिए सरकार से आदेश मांगा और वह मिला भी, पर अनिवार्य कारणो से अवसर न मिल सका। केवल आरा नगर के बाल-हिन्दी-पुस्तकालय मे 'शिवनन्दन-स्मारक-सग्रह' को देखने के लिए मै जा सका। वहाँ से मैं कुछ सामग्री सकलित करके ले आया। फिर, श्रीरामनारायण शास्त्री को वहाँ कुछ दिन रहकर सग्रह-कार्य करने के लिए भेजा। उन्होने भी पुरानी पुस्तको और पत्र-पत्रिकाओ से आवश्यक सामग्री चुनने मे बड़ा परिश्रम किया।

मेरे बडे जामाता श्रीवीरेन्द्रनारायण इगलैण्ड गये थे। मैंने उन्हे लिखा कि लन्दन के ब्रिटिश म्यूजियम और इण्डिया-हाउस मे बिहार के साहित्यकारो से सम्बन्ध रखनेवाली जो सामग्री मिल सके, उसे लिख भेजें। उस समय वे परिषद् के लिए सदलमिश्र-ग्रन्थावली की अविकल प्रतिलिपि तैयार कर रहे थे। उसी के साथ उन्होने इस इतिहास के लिए भी महत्वपूर्ण सामग्री एव सूचनाएँ भेज दी।

परिषद् के अनुसन्धान-पुस्तकालय मे सगृहीत अलभ्य पत्र पत्रिकाओ से सामग्री संग्रह कराने के लिए कुछ दिन श्रीकृष्णनन्दनप्रसाद 'अभिलाषी', एम्० ए० की सेवा का भी उपयोग किया गया। उपर्युक्त सभी सगृहीत सामग्री को श्रीअम्बष्ठजी ने यथास्थान नियोजित कर दिया।

सन् १९५८ ई० मे कुछ महीनो के लिए अपने दाहिने पैर के तलवे मे घाव हो जाने के कारण मैं शय्याग्रस्त रहा। उस समय बडा उद्वेग हुआ कि बार-बार इस काम मे विघ्न-बाधा पडने से अब यह इतिहास अधूरा ही रह जायगा। श्रीअनूपलालजी और श्रीतोमरजी चिन्तित तथा हताश होकर कहने लगे कि अब निकट भविष्य मे यह इतिहास प्रकाशित न हो सकेगा। एक दिन परिषद्-सदस्य श्रीमथुराप्रसाद दीक्षित और श्रीरामवृक्ष बेनीपुरी ने मुझे बहुत फटकारा-ललकारा कि शोध ही करते-कराते आपके (मेरे) जीवन का अन्त हो जायगा—कभी यह इतिहास सर्वांगपूर्ण होगा ही नही। श्रीलक्ष्मीनारायण 'सुधांशु' और पण्डित जगन्नाथप्रसाद मिश्र से भी इस विषय की चर्चा हुई, तो उनलोगो की भी यही राय और सलाह मिली कि जितनी सामग्री अबतक उपलब्ध हो चुकी है, उतनी ही प्रकाशित कर दी जाय, क्योकि जबतक शोध होता रहेगा, तबतक नई-नई सामग्री मिलती रहेगी और इस प्रकार न शोध का कभी अन्त होगा—न पुस्तक पूरी तैयार होगी। सामान्य परिषद्-सदस्यों की ऐसी तीव्र प्रेरणा से मैं भी यथोपलब्ध सामग्री को प्रकाशित देखने के लिए अधीर हो उठा। मैंने भी सोचा कि इस शोध-समीक्षा-प्रधान युग मे कोई साहित्यिक इतिहास सर्वथा निर्दोष और सर्वांगपूर्ण नही हो सकता, क्योकि साहित्यिक अनुसन्धान की प्रगति दिन-दिन प्रखर होती जा रही है और नवीन शोधो के फलस्वरूप पुरानी स्थापनाएँ एव परम्पराएँ परिवर्तित होती जाती है, अत जो कुछ प्राप्त हो चुका है, वह हिन्दी-संसार

के सामने जब उपस्थित कर दिया जायगा, तभी विज्ञ विद्वानो द्वारा त्रुटियो का मार्जन हो सकेगा। यही सोचकर मैने निश्चय कर लिया कि शोध का क्रम तो चलता रहे, परन्तु प्रस्तुत सामग्री के प्रकाशन में अनावश्यक विलम्ब न किया जाय। जान पड़ा, जैसे इस निश्चय की प्रेरणा भगवत्कृपा के सकेत से मिली है।

गतवर्ष परिषद् के सचालक-मण्डल ने हिन्दी में भारतीय अब्दकोश प्रकाशित करने का निश्चय किया। ऐसे उत्तरदायित्वपूर्ण कार्य के लिए एक उपयुक्त व्यक्ति की आवश्यकता हुई। स्वभावत श्रीगदाधरप्रसाद अम्बष्ठ की ओर ध्यान गया, क्योकि वे स्वय दो अब्दकोश प्रकाशित कर चुके थे। अतः, अब्दकोश का काम उन्हे सौपकर इस इतिहास की सारी सामग्री मैने परिषद् के एक अनुसन्धायक श्रीबजरंग वर्मा के हवाले कर दी। यह काम सोमवार, ११ मई (१९५९ ई०) को हुआ था।

श्रीबजरंग वर्मा, एम्० ए० सारन जिले के निवासी एक मेधावी नवयुवक हैं। परिषद् मे वे बडी योग्यता के साथ साहित्यिक गवेषणा के कार्य गत चार वर्षों से करते रहे हैं। उनकी प्रतिभा, कार्यकुशलता और कर्त्तव्यनिष्ठा का परिचय मिल चुका था। उनकी साहित्यिक प्रवृत्ति एवं कलात्मक सुरुचि से मेरा पूर्व-परिचय भी था, जब राजेन्द्र कॉलेज में वे मेरे समय के एक प्रत्युत्पन्नमति विद्यार्थी थे। उक्त तिथि से ही वे इस इतिहास के प्रस्तुत प्रथम खण्ड की प्रेस-कॉपी तैयार करने में तन-मन से संलग्न हो गये। यह काम उनकी प्रकृति, मनोवृत्ति एव अभिरुचि के अनुकूल प्रतीत हुआ। उनकी लगन और सूझ-बूझ देखकर मेरे हृदय मे यह भाव जगा कि जब से वे परिषद् में अनुसन्धानात्मक कार्य करने आये, तभी से यदि मै उनकी कर्त्तृत्व-शक्ति का उपयोग इस काम में करता, तो अबतक कम-से-कम यह पहला खण्ड किसी-न-किसी रूप में अवश्य निकल गया होता। फिर भी, उन्होने अपनी कार्यक्षमता का प्रशसनीय परिचय दिया और एक मास में ही यह पुस्तक यत्रस्थ हो गई। इसके प्रूफ-सशोधन मे भी वे और श्रीश्रीरंजन सूरिदेव, साहित्याचार्य बड़े मनोयोग से आद्यन्त श्रमशील बने रहे।

पूर्वोक्त तिथि को मैने इस प्रथम खण्ड की जो पाण्डुलिपि श्रीबजरंगजी को सौपी थी, उसको पहले उन्होने मुझे पढ सुनाया। मैने आवश्यकतानुसार जहाँ-तहाँ संशोधन-परिवर्त्तन-परिवर्द्धन आदि कराये। तब फिर उन्होने नये सिरे से लिख डाला। तदुपरान्त उनकी हस्तलिखित प्रति मैने टकित करा दी। टकन और मुद्रण की व्यवस्था मे जो समय व्यतीत हुआ, उस अवधि मे पटना के शोधोपयोगी सग्रहालयो में जाकर उन्होने बहुत-सी नई सामग्री का अन्वेषण किया। यहाँ तक कि उधर पुस्तक छपती रही और इधर उनकी खोज भी जारी रही। उन्होने कई नये साहित्यस्रष्टाओ को ढूँढ निकाला। अँगरेजी की पुरानी और दुर्लभ शोध-पत्रिकाओ की छानबीन मे उन्होने जो अथक परिश्रम किया, वह इस पुस्तक की पाद-टिप्पणियो मे स्पष्ट प्रकट होगा। इस पुस्तक को इस रूप मे तैयार करने का श्रेय मै बडी हार्दिकता के साथ उन्हे देना उचित समझता हूँ, क्योकि उनके समान सुयोग्य अनुसन्धान-सहायक मुझे न मिला होता, तो यह पुस्तक हिन्दी-संसार के समक्ष प्रकट न हो सकती। भगवत्कृपा से ही श्रीअम्बष्ठजी और श्रीबजरगजी के समान सहयोगी मुझे

प्राप्त हो सके, नहीं तो परिषद्-संचालन-सम्बन्धी अपनी कार्यव्यस्तता और शारीरिक स्थिति मे यह काम मैं कदापि पूरा न कर पाता।

यद्यपि मेरी दृष्टि मे यह इतिहास हिन्दी-ससार को 'शिवसिंह सरोज' के समान भी जँचने योग्य नहीं है, तथापि आधुनिक शोध-युग के अनुसन्धान-परायण सज्जनो के लिए यह आधार-शिला मात्र तो होगा ही। इसी आशा से उपलब्ध सामग्री प्रकाशित की जा रही है। फिर भी, परिषद्-कार्यालय मे शोध का काम बराबर जारी रहेगा और जिन बारह शतियो की सामग्री इसमे छपी है, उसके अतिरिक्त और भी जो नई सामग्री मिलती रहेगी, अगले खण्डो के परिशिष्टो में प्रकाशित होती चलेगी।

उन्नीसवीं शती की संगृहीत सामग्री मे से पूर्वार्द्ध और उत्तरार्द्ध का विभाजन श्रीअम्बष्ठजी ही कर चुके है। अब इस खण्ड के प्रकाशित होने पर श्रीबजरगजी उसी विभाजन के अनुसार आगे काम बढावेंगे और जो कुछ कमी रह गई होगी, उसकी पूर्त्ति का भी प्रयत्न करेंगे। इस तरह उन्नीसवी शती का इतिहास सम्भवत अगले साल तक छप जायगा। उसके बाद ही बीसवी शती के इतिहास मे हाथ लगेगा। किन्तु सामग्री-सकलन तो सभी शतियो के लिए निरन्तर होता ही रहेगा। मुझे आशा और विश्वास है कि इस गुरुतर कार्य मे सभी हिन्दी-हितैषी मेरी सहायता करते रहेंगे।

वास्तव मे साहित्यिक इतिहास लिखने का अधिकारी मैं नहीं हूँ। किन्तु उपयुक्त पात्र न होने पर भी मैंने यह काम इसलिए ठाना कि मेरी अयोग्यता एव अनधिकार चेष्टा से इतने बडे काम को बिगडता देखकर उदारमना सहृदय अधिकारी विद्वान् इधर आकृष्ट होंगे और उनके ध्यान देने से मेरी त्रुटियो का तो निवारण होगा ही, प्रामाणिक एव सर्वांगसुन्दर इतिहास भी तैयार हो जायगा। जबतक किसी वास्तविक अधिकारी विद्वान् का ध्यान इधर नहीं जाता, तबतक मैं ही साहित्य-साधको और समीक्षको के सत्परामर्श तथा मार्ग-प्रदर्शन की कामना से यह क्षुद्र प्रयास करने का दुस्साहस कर रहा हूँ। ईश्वरेच्छया भूलो के अन्दर से भी भलाई निकल आती है।

इस इतिहास से पहले ही मुजफ्फरपुर के सुहृद्-सघ से प्रोफेसर कामेश्वर शर्माजी की एक ऐसी पुस्तक (हिन्दी-साहित्य को बिहार की देन) निकल चुकी है। आवश्यक साधनो और सुविधाओ की कमी रहने पर भी श्रीशर्माजी ने बडी अच्छी पुस्तक लिखी है। उसका दूसरा खण्ड भी उन्होने तैयार कर दिया है। उसके भी प्रकाशित हो जाने पर यह बात विशेष रूप मे सिद्ध हो जायगी कि शर्माजी के समान विद्वान् ही ऐसे उत्तरदायित्वपूर्ण कार्य को विधिवत् सम्पन्न करने के अधिकारी हैं।

दो पुस्तकें और भी निकली है, जो दो जिलो से सम्बन्ध रखती है—'गया जिले के लेखक और कवि' (श्रीद्वारकाप्रसाद गुप्त) तथा 'चम्पारन की साहित्य-साधना' (श्रीरमेशचन्द्र झा)। यदि बिहार के सभी जिलो से ऐसी पुस्तकें निकली होती, तो मेरा काम विशेष सुगम हो जाता। तब भी पूर्णिया जिले के श्रीरूपलालजी, साहित्यरत्न ने मेरे अनुरोध से वहाँ की सारी सगृहीत सामग्री मेरे पास भेज दी और उस पाण्डुलिपि से आवश्यक सहायता लेने की अनुमति भी दे दी। पता चला है कि आरा-जैन-कॉलेज के

हिन्दी-विभाग के प्राध्यापक श्रीरामेश्वरनाथ तिवारी भी शाहाबाद जिले की साहित्य-सेवा का इतिहास तैयार कर रहे है, पर वहाँ का सग्रह मै न देख सका। हाँ, आरा के साप्ताहिक 'शाहाबाद-समाचार' के सम्पादक श्रीभुवनेश्वर प्रसाद 'भानु' से कुछ उपयोगी सामग्री प्राप्त हुई।

जहाँ-कही से अथवा जिस-किसी से किसी प्रकार की सूचना, सामग्री और सहायता प्राप्त हुई है, सबका उल्लेख यथास्थान पाद-टिप्पणियो मे कर दिया गया है तथा आगामी खण्डो मे भी ऐसा हो किया जायगा। साहित्यिक इतिहास तो हिन्दीप्रेमियो की सहायता से ही तैयार हो सकता है, क्योकि यह कोई उपन्यास, कहानी या नाटक नही है कि स्वेच्छानुसार लिख डाला जाय। अभी तो यह पहले-पहल बन रहा है और इसका पूर्ण विकसित रूप तो कई साल बाद ही प्रकट हो सकेगा। इस तरह बिहार की हिन्दी-सेवा का जो विशाल स्मारक-मन्दिर भविष्य मे अधिकारी शब्द-शिल्पियो द्वारा बनेगा, उसकी नीव के रोडे का काम भी यह कर सका, तो मै समझूँगा कि भगवत्कृपा से मेरा तुच्छातितुच्छ परिश्रम भी सफल हो गया।

इस इतिहास का नाम पहले 'बिहार का साहित्यिक इतिहास' प्रसिद्ध था। किन्तु बिहार मे सस्कृत, अँगरेजी, उर्दू, बँगला आदि भाषाओ के साहित्य की सेवा करनेवाले साहित्य-समाराधक भी बहुत-से हो चुके है। यदि उन सबकी जीवनियो और रचनाओ का सग्रह प्रकाशित हो, तो उसका वैसा नामकरण किया जा सकता है। यदि प्रत्येक भाषा के लिए पृथक्-पृथक् प्रयत्न हो, तो भी आशा है कि ऐसी कई पुस्तके बन जायँगी। बिहार हिन्दी साहित्य-सम्मेलन ने हिन्दी मे 'उर्दू-शायरी और बिहार' पुस्तक प्रकाशित करके इस दिशा में मार्ग-निर्देश भी किया है। सभव है कि शेष भाषाओ के साहित्य का इतिहास भी भावी प्रगतिशील युग मे प्रकट हो जाय। -परन्तु यह तो केवल हिन्दी-साहित्य से सम्बद्ध है, इसलिए मैने इसका प्रचलित नाम बदलकर 'हिन्दी-साहित्य और बिहार' रख दिया और यही उपयुक्त एव सार्थक भी है।

मेरा अनुभव है कि साहित्यिक इतिहास के लिए शोध और सग्रह करने के उद्देश्य से समस्त बिहार-राज्य में भ्रमण किये बिना वह सम्पूर्णता को नही प्राप्त हो सकता। मेरी इच्छा थी और अब भी है कि इस काम के लिए बिहार-भर के प्रमुख एव विशिष्ट स्थानो की यात्रा करके इस इतिहास को यथासभव पूर्णता प्रदान करूँ, पर ऐसा सुयोग कभी न मिल सका और आगे भी ऐसी सुविधा मिलने की कोई आशा नही है। अत, समय-समय पर सूचनाएँ प्रकाशित करके और पत्र-व्यवहार द्वारा जो कुछ प्राप्त किया जा सका, उसी पर सन्तोष करना पडा तथा आगे भी इन्ही साधनो का आश्रय लेना पडेगा।

मेरी धारणा है कि बिहार-सरकार की ओर से जब समग्र बिहार-राज्य का साहित्यिक सर्वेक्षण कराया जायगा, तभी बिहार का अभूतपूर्व इतिहास तैयार हो सकेगा। बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् से योजनाबद्ध रूप मे यह काम कराया जा सकता है। राज्य का सरक्षण प्राप्त हुये बिना अब यह कार्य साध्य नही है। कोई साहित्यिक सस्था भी सरकारी सहायता के सहारे से ही यह काम कर सकती है। नहीं तो फिर साहित्यिक परिव्राजको से ही यह काम पूरा होगा।

मेरा सुझाव है कि हाइ स्कूलो और कॉलेजो के सयाने छात्र तथा साहित्यानुरागी अध्यापक अपने निवास-स्थान और उसके आसपास के साहित्यकारो एव कलाकारो की खोज मे अपने अवकाश का सदुपयोग किया करे और साथ ही अपनी खोज का परिणाम स्कूल-कॉलेज की पत्रिकाओ मे प्रकाशित कराते रहे, तो बहुत लाभ होगा। स्कूल, कॉलेज की साहित्य-सभाएँ और प्रत्येक जिले के साहित्य-सम्मेलन भी इस काम मे सहायता पहुँचा सकते है। यह हर्ष का विषय है कि इधर बिहार मे विश्वविद्यालय के स्नातकोत्तर वर्ग के विद्यार्थी अपनी परीक्षा के पाठ्यक्रम के निमित्त, प्राचीन एव अज्ञात साहित्यकारो के सबध मे शोध करने की ओर प्रवृत्त हुए है। ऐसे एक-दो विद्यार्थियो से इस पुस्तक मे भी सहायता ली गई है, जिसका उल्लेख यथास्थान द्रष्टव्य है।

इस पुस्तक मे लगभग ढाई सौ साहित्यकारो का परिचय और नामोल्लेख है। मेरा अनुमान है कि इतने ही अथवा इतने से भी अधिक ही और भी साहित्यकार होगे, जिनका पता अबतक की खोज मे नही मिला है। किन्तु खोज का काम अभी जारी है और आगे भी बराबर होता रहेगा तथा विगत शताब्दियो की जो नई सामग्री मिलती जायगी, वह आगामी खण्डो के परिशिष्टो मे प्रकाशित होती रहेगी। खोज के इस काम मे हिन्दीप्रेमियो और उदाराशय विद्वानो की सहायता की सदा अपेक्षा रहेगी। इस खण्ड के परिशिष्टो मे कितने ही साहित्यकार ऐसे है, जिनके सम्बन्ध मे संभव है कि भावी शोध से कुछ विशेष विवरण प्राप्त हो सके। यो तो मूल पुस्तक मे जो परिचय और उदाहरण प्रकाशित है, उनमे भी सभव है कि भविष्य के शोध से सशोधन-परिवर्त्तन करना पडे। सभावनाएँ विविध प्रकार की हो सकती हैं।

अब रही प्रस्तावना की बात। उसकी रूपरेखा पहले अम्बष्ठजी ने खडी की थी। मैंने जब उसका निरीक्षण-परीक्षण किया, तब निजी दृष्टिकोण से नई प्रस्तावना लिखने का विचार किया। प्रस्तावना जब नये सिरे से लिखी जाने लगी, तब सस्कृत-सम्बन्धी प्रमाणो के अन्वेषण एव सग्रह मे विद्यापति-विभाग के पण्डित शशिनाथ झा, व्याकरण-साहित्याचार्य और परिषद् के सहकारी प्रकाशनाधिकारी पण्डित हवलदार त्रिपाठी 'सहृदय', साहित्याचार्य से अमूल्य सहायता प्राप्त हुई। त्रिपाठीजी ने बौद्ध सिद्धो के सम्बन्ध मे भी बड़े महत्त्व के परामर्श दिये। यदि इन दोनो विद्वानो का सद्भावपूर्ण सहयोग सुलभ न होता, तो मेरी धारणा के अनुकूल प्रस्तावना तैयार न हो पाती। इसी तरह संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश और हिन्दी का क्रम-विकास प्रदर्शित करने के लिए समानार्थक अथवा समान-रूप शब्दो की तालिका तैयार करने मे परिषद् के लोकभाषा-विभाग के श्रीश्रुतिदेव शास्त्री, व्याकरण-पालि-साहित्याचार्य तथा प्राचीन हस्तलिखित-ग्रन्थशोध-विभाग के व्याकरण-साहित्याचार्य श्रीविधाता मिश्र, एम्० ए० (चतुष्टय) ने भी परिश्रम किया, उसके अभाव मे भी प्रस्तावना अधूरी रह जाती। फिर, श्रीबजरग वर्मा ने भी प्रस्तुत खण्ड में प्रकाशित उदाहरणो से चुनाव करके जो शब्द सूची तैयार की, उससे भी इस प्रस्तावना की अंगपूर्त्ति ही हुई है। श्रीवर्मा तो मेरे दाहिने हाथ ही रहे, उनकी आद्यन्त सहायता अनिर्वचनीय है।

परम सौभाग्यवश पटना-विश्वविद्यालय के हिन्दी-प्राध्यापक और हिन्दी-जगत् के समर्थ साहित्य-समीक्षक आचार्य नलिनविलोचन शर्मा ने मेरे सविनय अनुरोध को स्वीकृत करके प्रस्तावना को देखकर और यथोचित परामर्श देकर मुझे कृतज्ञ करने की कृपा की है।

अब अन्त मे उपर्युक्त सभी सहायक सज्जनो और सहानुभूतिशील बन्धुओ तथा सहायिका सस्थाओ के प्रति मै सर्वान्तःकरण से अपनी कृतज्ञता प्रकट करता हूँ। विश्वास है कि भविष्य मे भी उन सभी के सौहार्द एव साहाय्य का मै भागी बना रहूँगा। सर्वतोऽधिकभावेन मैं बिहार-सरकार के प्रति आन्तरिक आभार व्यक्त करना अपना मुख्य कर्त्तव्य समझता हूँ, जिसकी छत्रच्छाया मे यह साहित्यिक महायज्ञ सविधि सम्पन्न हुआ है और आगे भी होगा।

जब उदाहरणो के प्रथम चरण की अनुक्रमणी बनने लगी, तब यह भ्रम सूझ पड़ा कि अठारहवी शती के 'प्रतापसिंह' (पृ० १४०) और 'मोदनारायण' (पृ० १५०) तथा उसी शती के चतुर्भुज मिश्र (पृ० ११८) और पन्द्रहवी शती के चतुर्भुज (पृ० ४८) क्रमशः एक ही कवि है। वस्तुत, चतुर्भुज नाम के कवि पन्द्रहवी शती मे ही हुए है। इसके अतिरिक्त पृ० १३८-३९ के कवि 'निधि उपाध्याय' की रचना के उदाहरण न० १ की कुछ पक्तियाँ पृ० १६९-७० के कवि श्रीपति के नाम पर भी छप गई है। वास्तव में श्रीपति की रचना का कोई उदाहरण उपलब्ध नही है। इसी प्रकार, पृ० ११०-११ के कवि केशव की रचना का उदाहरण पृ० १५०-५१ के कवि 'रघुनाथदास' के नाम पर भी (उदाहरण न० २) भ्रमवश छप गया है। अब इन भ्रमो का संशोधन तो अगले संस्करण मे ही सभव है। मुझे इन भ्रमो के लिए स्वय बड़ा खेद है। आशा है कि पाठक इन्हे सुधार लेने की कृपा करेंगे।

तुलसी-जयन्ती, शकाब्द १८८१,

विक्रमाब्द २०१६

शिवपूजनसहाय

प्रस्तावना

प्रस्तुत इतिहास का भौगोलिक आधार

रामराज्य-काल या रामायण-काल में आज का बिहार-प्रान्त कई भागो मे विभक्त था। करूष[1], मगध[2] और अग नामक खण्ड गगा के दक्षिण में अवस्थित थे। इनका विस्तार चुनार (उत्तर-प्रदेश) से गिद्धौर (बिहार) तक था। इन तीनो का सयुक्त नाम 'कीकट'[3] था। इसी तरह गगा के उत्तर मे मलद, वैशाली, मिथिला और पुण्ड्र[4] नामक खण्ड थे। ये खण्ड महाभारत काल मे भी विद्यमान थे। इनमें से मगध, अग, मिथिला, वैशाली आदि खण्डो का अस्तित्व बौद्धकाल मे भी था। इनमे अग तो मगध के अन्तर्गत था और मिथिला वैशाली गणतत्र के अधीन। मौर्य-काल में ये मगध-साम्राज्य के अन्तर्गत थे। गुप्तवश और पालवश के राज्य काल मे भी मगध-साम्राज्य की ही चर्चा मिलती है। इस समय तक स्वतत्र प्रान्त के रूप मे 'विहार' का नाम नही मिलता। इस काल तक 'विहार' शब्द का प्रयोग केवल 'बौद्धमठ' के लिए ही होता था।

पालवशी राजाओ के शासन-काल के बाद जब मुसलमानी आक्रमण हुआ, तब उदन्तपुरी[5] के विहार (बौद्धमठ) को नष्ट-भ्रष्ट करके मुसलमानो ने उसके ध्वंसावशेष पर अपनी राजधानी स्थापित की और 'विहार' के साथ मुसलमानी तीर्थसूचक 'शरीफ' शब्द जोड़कर राजधानी का नाम 'विहार-शरीफ' और शासन की सुविधा के लिए राजधानी के चारो ओर के पड़ोसी प्रदेशो का नाम 'विहार' रखा।

---

१. श्रूयता वत्स काकुत्स्थ यस्यैतद्दारुणं वनम्। एतौ जनपदौ स्फीतौ पूर्वमास्ता नरोत्तम ॥
मलदाश्च करूषाश्च देवनिर्माणनिर्मितौ। पुरा वृत्रवधे राम मलेन समभिप्लुतम् ॥
—श्रीवाल्मीकिरामायण सटीक (श्रीवासुदेव लक्ष्मण शास्त्री पणशीकर, चतुर्थ स०) १९३० ई०, बालकाण्ड, सर्ग २४), श्लोक १७-१८, पृ० ५२।

२ सुमागधी नदी रम्या मागधान्विश्रुता ययौ। पञ्चाना शैलमुख्याना मध्ये मालेव शोभते ॥
सैषा हि मागधी राम वसोस्तस्य महात्मनः। पूर्वाभिचरिता राम सुक्षेत्रा सस्यमालिनी ॥
—वही, (बा० का०, सर्ग ३२), श्लोक ९-१०, पृ० ६३।

३. करमाद्रि समारभ्य गृध्रकूटान्तकं शिवे। तावत्कीकटदेशः स्यात्तदन्तर्मगधो भवेत् ॥
—शब्दकल्पद्रुम (शक्तिसगमतत्र, स्यार-राजा राधाकान्तदेव बहादुर, १८०८ शकाब्द, प्रथम काण्ड), पृ० १३०।

४. मगधाश्च महाग्रामान्पुण्ड्रास्त्वगास्तथैव च। भूमि च कोशकाराणा भूमि च रजताकराम् ॥
—श्रीवाल्मीकिरामायण सटीक (वही, किष्किन्धाकाण्ड, सर्ग ४०), श्लोक २३, पृ० ५३६।

५. देखिए—पुस्तकभडार रजतजयन्ती-स्मारक-ग्रथ में प्रकाशित श्रीसूर्यनारायण व्यास का 'उदन्तपुरी' शीर्षक लेख, पृ० १५३—५५।

महाकवि विद्यापति-लिखित 'कीर्त्तिलता'[१] के तृतीय पल्लव मे प्राय सर्वप्रथम विहार शब्द का उल्लेख स्वतत्र प्रान्त के रूप मे हुआ है—

"......गएनराए तौ वधिअ, तौन सेर विहार चापिअ, चलइ तें चामर परइ, धरिअ छत्त तिरहुति उगाहिअ।"[२]

(उसने गणेश्वर राय का वध किया, उस शेर ने विहार पर कब्जा कर लिया, उसके चलने पर चँवर डोलता है, छत्र धारण करके तिरहुत से कर वसूल करता है।)

शेरशाह के समय मे शासन की सुविधा के लिए विहार के कुछ विभाग किये गये थे, जिन्हे अकवर के अर्थमत्री टोडरमल ने पुनः सुव्यवस्थित किया। उसी समय के विभाजन के आधार पर अँगरेजी-शासन-काल[३] मे भी कमिश्नरियो, जिलो, सब-डिवीजनो, परगनो और थानो का पुनर्निर्माण हुआ।

सन् १९४७ ई० मे, १५ अगस्त को, भारत के स्वतत्र होने पर, कुछ वर्षो के वाद, शासन-सम्बन्धी सुविधा के विचार से दो नये जिले वने—सहरसा और धनवाद।[४] इसके अतिरिक्त पूर्णिया और मानभूमि नामक पूर्वी जिलो के कुछ अश पश्चिम-वगाल मे मिला दिये गये।

इस इतिहास मे वर्त्तमान नये-पुराने सोलह जिलो के अतिरिक्त पश्चिम-वगाल मे मिलाये गये भागो के भी हिन्दी-साहित्यकारो के परिचय दे दिये गये है।

भाषा-विचार

भाषा-विज्ञान के कतिपय विशेषज्ञो ने यह ठीक ही माना है कि वैदिक भाषा या पुरानी-सस्कृत ही भारत की सबसे प्राचीन भाषा है।[५] उनका यह भी मत है कि वह वैदिक युग मे ईसा के छह सौ वर्ष पूर्व तक भारतीय जनता की भाषा थी।[६] किन्तु मेरा अपना मत है कि वही वैदिक भाषा या पुरानी संस्कृत लौकिक सस्कृत के परिष्कृत रूप मे परिवर्त्तित और उत्तरोत्तर विकसित होती हुई आज भी आसेतु-हिमाचल वर्त्तमान है।

---

१. कीर्त्तिलता की रचना सन् १४०२ से १४०४ ई० के बीच हुई थी। देखिए—विद्यापति (मित्र-मजूमदार, २०१० वि०, भूमिका), पृ० ४९।

२. कीर्त्तिलता (डॉ० बाबूराम सक्सेना, द्वितीय सं०, २०१० वि०), पृ० ५८।

३ अँगरेजी शासन-काल में विहार, बगाल और उड़ीसा सम्मिलित प्रान्त थे। सन् १९१२ ई० में बगाल से विहार अलग हुआ और सन् १९३६ ई० मे विहार से उड़ीसा भी अलग हो गया।

४. सुनने में आया है कि शासन की सुविधा के लिए ९ और नये जिलों का निर्माण पुनः होनेवाला है।

५ "महर्षि यास्क ने 'निरुक्त' नामक महत्त्वपूर्ण ग्रथ की रचना की है, जिसमें कठिन वैदिक शब्दों की व्युत्पत्ति दिखलाई गई है। इस ग्रथ का प्रमाण 'भाषिकेभ्यो धातुभ्यो नैगमाः कृतो भाष्यन्ते' (—निरुक्त २/२) संस्कृत को बोलचाल की भाषा सिद्ध कर रहा है।"

—सस्कृत-साहित्य का इतिहास (पं० वलदेव उपाध्याय, परिवर्द्धित स०, १९४५ ई०), पृ० १३।

६ "पाणिनि के समय मे (विक्रम-पूर्व पाँच सौ) सस्कृत का यह रूप बना ही रहा। पाणिनि भी इसी बोली को भाषा के ही नाम से पुकारते हैं।"—वही, पृ० १३।

भाषावैज्ञानिको ने वैदिक भाषा को 'छन्दस्' नाम से भी अभिहित किया है। इससे यह स्पष्ट है कि वैदिक भाषा एक व्यापक भाषा थी और वही 'छन्दस्' कहलाई। जो लोग यह मानते है कि वैदिक भाषा छन्दोबद्ध होने के कारण 'छन्दस्' कहलाई उनका मत स्वीकार करने पर यह प्रश्न उठता है कि छन्दोबद्ध भाषा लोक व्यापक कैसे हुई ?

यद्यपि हमारा अधिकाश उपलब्ध प्राचीन वाङ्मय पद्यबद्ध ही है, तथापि यह तर्कसगत नही कि जनता की व्यावहारिक भाषा पद्यबद्ध ही रही हो। यदि जनता की भाषा छन्दोबद्ध ही होती, तो वैदिक भाषा मे प्रयुक्त नाना प्रकार के छन्दो का अभिधान 'विनियोग'[1] मे नही होता और उनके विभिन्न मन्त्रद्रष्टा ऋषि भी नही होते।

वेदो का उद्गम-स्थान यद्यपि ब्रह्मावर्त्त ही है, उनके मन्त्रद्रष्टा ऋषि भी प्राय हिमालय और विन्ध्य के बीच मे ही रमते रहे, सबसे पहले अगस्त्य ऋषि के ही दक्षिण मे प्रवेश करने का प्रमाण मिलता है, तथापि भारत के और उसके समीपवर्त्ती द्वीपो के जिस किसी भाग मे आर्य गये, वहाँ अपने साथ अपनी शिष्ट-भाषा भी ले गये। जो लोग उनके सम्पर्क मे आना चाहते थे, वे भी उनकी भाषा का ही सहारा लेते थे। किष्किन्धा (दक्षिण-भारत) मे जब राम-लक्ष्मण से हनुमान् की भेट हुई, तब हनुमान् ने जनपदीय या स्थानीय भाषा मे बातचीत न कर सस्कृत मे ही सम्भाषण किया, जिससे प्रभावित होकर भगवान् रामचन्द्र ने लक्ष्मण से कहा—यह बटुरूपधारी व्यक्ति जो कुछ बोल गया है, उसमे कही भी कोई अशुद्धि नही हुई है। इससे यह जान पडता है कि इसने शब्द-शास्त्र का अच्छा अध्ययन किया है।[2]

इससे यह भी प्रकट होता है कि उस समय सस्कृत ही भारत की राष्ट्रभाषा[3] थी,

---

१ (क) 'अनेनेद तु कर्त्तव्य विनियोग प्रकीर्त्तित.'—आह्निकतत्त्वम्—देखिए शब्दकल्पद्रुम (वही, चतुर्थ काण्ड), पृ० ४०३।

यथा—'अघमर्षणसूक्तस्याघमर्षण ऋषिरनुष्टुप् छन्दो भाववृतो देवताश्वमेधावभृथे विनियोग: ।'
—सन्ध्याविधि।

(ख) किसी वैदिक कृत्य में मत्र का प्रयोग, किसी फल के उद्देश्य से किसी वस्तु का उपयोग, प्रयोग।
—हिन्दी-शब्दसागर (श्यामसुन्दर दास, १९२७ ई०), पृ० ३१९२।

२ (क) श्रीरामो लक्ष्मणं प्राह पश्यैनं बटुरूपिणम्।
शब्दशास्त्रमशेषेण श्रुत नूनमनेकधा ॥
अनेन भाषित कृत्स्न न किञ्चिदपशब्दितम् ॥
—अध्यात्मरामायण (गुलकाल, सप्तम सं०, २००८ वि०, किष्किन्धा काड, सर्ग १), श्लोक १७, पृ० १६८।

(ख) नून व्याकरण कृत्स्नमनेन बहुधा श्रुतम्। बहु व्याहरतानेन न किञ्चिदपशब्दितम् ॥
—श्रीवाल्मीकिरामायण सटीक (वही, कि० का०, सर्ग ३), श्लोक २९, पृ० ४७०।

३. संस्कृत हि पुरा न केवल धर्मभाषा साहित्यभाषैव वाभूत्, किन्तु बहुकालं लोकभाषा, शासनभाषा चाभूत्। राज्ञो भोजस्य काले भारवाहोऽपि भाषते—"भारो न बाधते राजन् यथा 'बाधति' बाधते।" नारिकेलफलविक्रेतापि ब्रूते—"काव्य करोमि नहि चारुतर करोमि
यत्नात् करोमि यदि चारुतर करोमि।
भूपालमौलिमणिमण्डितपादपीठ
हे साहसाङ्क कवयामि वयामि यामि।"
—[illegible] संस्कृतवाङ्मये [illegible] शास्त्रानाम् [illegible]
([illegible], [illegible], वाराणसेय संस्कृत-विश्वविद्यालय, १९५९ ई०), पृ० ८।

और आज भी जैसे उसका भारतव्यापी प्रचार है, वैसे ही प्राचीनकाल मे भी वह कश्मीर से कन्याकुमारी तक बोली और समझी जाती थी तथा विभिन्न प्रान्तो के लोग जब आपस मे मिलते जुलते थे, तब विचार-विनिमय के लिए सस्कृत को ही माध्यम बनाते थे।

नीचे दिये गये उद्धरणो से भी मेरे ही मत का समर्थन होता है—

(१) "ईसा के पहले, चौथी शताब्दी मे, पाणिनि के समय, भारतीय भाषा सस्कृत नाम से पुकारी जाती थी। यह नाम प्रचलित भाषा से भिन्न अर्थ का बोधक है। महर्षि यास्क आदि प्राचीन वैयाकरण केवल इसको 'भाषा' कहकर पुकारा करते थे, ताकि वैदिक से भिन्न समझी जाय जिसको 'पतजलि' 'विश्वव्यापक' कहा करते थे। इसका भी पता लगता है कि पहले सस्कृत मे भी देशानुकूल अन्तर था। यास्क और पाणिनि ने पूर्वीय तथा उत्तरीय इन दो भेदो का उल्लेख किया है। महर्षि 'कात्यायन' प्रान्तिक भेदो का वर्णन करते है और पतजलि ने तो ऐसे शब्दो के नाम दिये है, जिनका व्यवहार केवल एक ही नगर मे होता था। अतएव, देखने से जान पडता है कि ख्रीष्ट के पूर्व द्वितीय शताब्दी मे समस्त आर्यावर्त्त के अभ्यन्तर ब्राह्मणो की बोल-चाल की भाषा सस्कृत थी। यही नही, अत्यन्त साधारणजन भी इसका व्यवहार करते थे। उस काल मे सामान्य श्रेणी के लोग भी सस्कृत समझ सकते थे यह बात नाटको द्वारा भी प्रमाणित होती है, जिनमे देखा जाता है कि जो व्यक्ति सस्कृत मे भाषण नही कर सकते थे, वे कम-से-कम उसे समझते अवश्य थे। अस्तु, यह सिद्ध होता है कि प्राचीन भारतवर्ष मे संस्कृत बोलचाल की भाषा थी।"[१]

(२) "रामायण-महाभारत-काल मे सस्कृत बोलचाल की भाषा के रूप में प्रचलित थी। रामायण मे इल्वल राक्षस, ब्राह्मण का रूप धारण कर सस्कृत बोलकर ही ब्राह्मणो को निमत्रित करता था। हनुमान् ने भी सर्वप्रथम अशोक-वाटिका मे पहुँचकर सीता से किस भाषा मे वार्त्तालाप किया जाय, इस विषय मे बडा सोच-विचार किया और अन्त मे सस्कृत मे ही भाषण करने का निश्चय किया। प्राचीन व्याकरण-शास्त्रो से भी सस्कृत का प्रचार सिद्ध होता है। यास्क (७ वी शताब्दी ईसवी पूर्व) ने वैदिक-सस्कृत से इतर सस्कृत को 'भाषा' कहा है, जिससे उसका बोली जानेवाली भाषा होना सूचित होता है। पाणिनि (४०० ई० पू०) ने सस्कृत को 'लौकिक', अर्थात् 'इस लोक मे व्यवहृत' कहा है। उन्होने दूर से बुलाने, प्रणाम और प्रश्नोत्तर करने मे कुछ स्वर-सम्बन्धी नियम भी बतलाये हैं, जिनमे सस्कृत का प्रचलित होना प्रमाणित होता है। यास्क और पाणिनि ने सस्कृत बोली की 'पूर्वी' और 'उत्तरी' विशेषताएँ बताई हैं। इससे मालूम होता है कि सस्कृत केवल साहित्यिक भाषा ही नही थी, भिन्न-भिन्न स्थानो मे बोली जाने के कारण उसमे स्थानीय विशेषताएँ भी आ गई थी। कात्यायन का भी यही कथन है। इन प्रमाणो के आधार पर यह सिद्ध होता है कि ई० पू० द्वितीय शताब्दी मे हिमालय और विन्ध्य पर्वतो के मध्यवर्त्ती समूचे प्रदेश मे सस्कृत बोली जाती थी। ब्राह्मणो के सिवा अन्य वर्णो मे भी इसका प्रचार था। 'महाभाष्य' मे एक सारथी एक वैयाकरण के साथ 'सूत'

---

१. सस्कृत-साहित्य का इतिहास (महेशचन्द्रप्रसाद, प्रथम स०, १९२२ ई०, भाग १), पृ० १९-२०।

शब्द की व्युत्पत्ति पर विवाद करता है। सस्कृत बोलनेवाले 'शिष्ट' (सभ्य) कहलाते थे। न बोलनेवाले भी इसे समझते अवश्य थे। नाटको के निम्न पात्र प्राकृतभाषी होते हुए भी सस्कृत मे कही हुई उक्तियो का उत्तर-प्रत्युत्तर देते है। सस्कृत-नाटको से भी प्रमाणित होता है कि ये नाटक तभी खेले जाते होगे, जब साधारण जनता सस्कृत समझती होगी। हाँ, यह अवश्य है कि प्राचीन काल मे सस्कृत उसी प्रकार शिक्षित एव शिष्टवर्ग की भाषा थी, जैसे आजकल खडीबोली है। साहित्यिक प्रसगो मे सस्कृत व्यवहृत होती थी। राजकार्य मे भी बहुधा इसी का व्यवहार होता था। भारत के अन्य उपनिवेशो मे भी सस्कृत का प्रचार हो गया था। प्राचीन चम्पा उपनिवेश (आधुनिक फ्रासीसी हिन्द-चीन) मे तेरहवी-चौदहवी शताब्दी तक सस्कृत राजभाषा के रूप मे बरती जाती रही। साराश यह कि उस समय सस्कृत राष्ट्रभाषा के पद पर आसीन थी।"[1]

(३) "प्रोफेसर ई० जे० रॉप्सन कहते है - सस्कृत भी वैसी ही बोलचाल की भाषा थी, जैसे साहित्यिक अँगरेजी है जिसे कि हम बोलते है। सस्कृत उत्तर-पश्चिम भारत की बोलचाल की भाषा थी, जिसके विकास का पता सम्पूर्ण साहित्य दे रहा है। जिसकी ध्वन्यात्मक विशेषताएँ उत्तर-पश्चिम भारत के शिलालेखो मे बहुत सीमा तक सुरक्षित है। .... .प्रारभ मे एक जिले की, फिर एक वर्ण तथा धर्म की, अन्त मे सारे भारतवर्ष मे एक धर्म, राजनीति और सस्कृति की भाषा बन गई। समय पाकर तो यह एक विशाल राष्ट्रीय भाषा बन गई और केवल तभी यह पदच्युत हुई, जब मुसलमानो ने हिन्दू राष्ट्रीयता को तबाह किया। .. .. साहित्य मे ऐसे भी उल्लेख पाये जाते है, जिनसे ज्ञात होता है कि रामायण और महाभारत जनता के सामने मूल मात्र पढकर सुनाये जाते थे। तब तो जनता वस्तुत सस्कृत के श्लोको का अर्थ समझ लेती होगी। .. .. इस प्रकार हम देखते है कि हिमालय और विन्ध्य के बीच फैले हुए सम्पूर्ण आर्यावर्त्त मे सस्कृत बोल-चाल की भाषा थी। इसका व्यवहार ब्राह्मण ही नही, अन्य लोग भी करते थे।"[2]

(४) "सस्कृत का साहित्य सबसे अधिक सम्पन्न है। उस समय सस्कृत ही राजकीय भाषा थी। राज्य-कार्य इसी मे होता था। शिलालेख, ताम्रपत्र आदि भी प्राय इसी मे लिखे जाते थे। इसके अतिरिक्त सस्कृत सम्पूर्ण भारतवर्ष के विद्वानो की भाषा थी, इस कारण भी सस्कृत का प्रचार प्राय सम्पूर्ण भारत मे था।"[3]

क्रमश काल और स्थान के भेद से आर्यो की भाषा के रूप मे परिवर्तन होने लगा और रामायण-काल तक आते-आते संस्कृत के दो रूप स्पष्ट हो गये—(क) सस्कृत और

---

१ सस्कृत-साहित्य की रूपरेखा (स्व० प० चन्द्रशेखर पाण्डेय शास्त्री तथा शान्तिकुमार नानूराम व्यास, तृतीय स०, १९५१ ई०), पृ० २—६।

२ सस्कृत-साहित्य का इतिहास, (डॉ० लक्ष्मणस्वरूप तथा हंसराज अग्रवाल, प्रथम स० १९५० ई०), पृ० १५, १६ तथा १८।

३ मध्यकालीन भारतीय सस्कृति, ६०० ई०—१२०० ई० (म० म० रायबहादुर गौरीशंकर हीराचन्द ओझा, प्रथम स०, १९५४ ई०), पृ० ५७।

'प्राकृतपिङ्गलम्' मे संस्कृत 'देववाणी' कही गई है और उसी से प्राकृत की उत्पत्ति मानी गई है। फिर प्राकृत से 'अपभ्रष्ट'[1] का उद्भव बतलाते हुए उसी को 'अपभ्रंश' नाम दिया गया है। इसके बाद ही, उसमे लिखा है कि कोई-कोई विद्वान् देशी भाषा को ही 'अपभ्रंश' मानते है, क्योकि संस्कृत और प्राकृत मे शब्दो के रूप सूत्रानुसारी होते है पर अपभ्रंश मे नही। कारण, संस्कृत और प्राकृत मे परस्पर सामीप्य अधिक है और लौकिक भाषा होने से अपभ्रंश' उन दोनो से दूर है।[2] निष्कर्ष यह कि 'संस्कृत', प्राकृत और 'अपभ्रंश' की क्रम-परम्परा के अनुसार सभी देशी भाषाओ की जननी संस्कृत ही है।[3]

---

१. महाकवि विद्यापति ने इसे ही 'अवहट्ठ' कहा है।— "देसिल बअना सब जन मिट्ठा। तें तैसन जम्पओं अवहट्ठा" ।—देखिए, कीर्त्तिलता (वही), पृ० ६।

२. संस्कृत नाम दैवी वाक् तद्भवं प्राकृत विदु'।
अपभ्रष्टा तु या तस्मात्सा ह्यपभ्रंशसंज्ञिता ॥
तिङन्ते च सुबन्ते च समासे तद्धितेऽपि च।
प्राकृतादल्पभेदैव ह्यपभ्रष्टा प्रकीर्त्तिता ॥
देशभाषा तथा केचिदपभ्रंशं विदुर्बुधाः।
तथाहि—
संस्कृते प्राकृते वापि सूपसूत्रानुसारतः।
अपभ्रंश स विज्ञेयो भाषा यत्रैव लौकिकी ॥
—प्राकृतपिङ्गलम्—देखिए, 'रागतरंगिणी' (पं० बलदेव मिश्र, प्रथम सं०, १९९१ वि०, प्राथक्कन) पृ० ञ।

३ 'मार्कण्डेय' ने भी अपने 'प्राकृत सर्वस्वम्' के आरम्भ में ही लिखा है—
प्रकृति संस्कृतम्। त भव प्राकृतम् उच्यते।'
'दशरूपक' की टीका में 'धनिक' ने २-६० में लिखा है—
प्रकृतेरागतं प्राकृतम्। प्रकृतिः संस्कृतम्।
'वाग्भटालङ्कार' २-२ की टीका में 'सिंहदेवगणि' ने लिखा है—
प्रकृते. संस्कृताद् आगत प्राकृतम्।
'पीटर्सन' की तीसरी रिपोर्ट के ३४३-७ में 'प्राकृतचन्द्रिका' में आया है—
प्रकृति संस्कृतम्। तत्र भवत्वात् प्राकृतं स्मृतम्।
'नरसिंह' ने 'प्राकृतशब्दप्रदीपिका' के आरम्भ में कहा है—
प्रकृते संस्कृतायास्तु तु विकृतिः प्राकृती मता।
'कर्पूरमञ्जरी' के बम्बई-संस्करण में 'वासुदेव' की सञ्जीवनी टीका में लिखा है—
प्राकृतस्य तु सर्वम् एव संस्कृत योनि।—९/२
'गीतगोविन्द' ५-२ की नारायण-कृत 'रसिकसर्वस्व' टीका में लिखा है—
'संस्कृतात् प्राकृतम् इष्ट ततोऽपभ्रंशभाषणम्।'
—डॉ० रिचर्ड पिशल का 'प्राकृत भाषाओं का व्याकरण' (डॉ० हेमचन्द्र जोशी, प्रथम सं०, [illegible]), पृ० १-२

संस्कृत	प्राकृत	अपभ्रंश	हिन्दी
उत्थान	उट्ठान	उट्ठान	उठान, उठाना
भू	भो, हो (भोहि, होहि) (भोअण, होअण)	भो, हो	होना
स्वप (स्वपन)	सो, सोअ (सोअन)	सो, सोअ	सोना
व्यञ्जन	वेअन	वेअन	वेना (स्थानीय)
केदार	केआर	केआर	कियार, कियारी
पुस्तक	पुत्थअ, पोत्थय	पोत्थअ	पोथा, पोथी
वाष्प	बप्फ	बप्फ	भाफ
वत्सक	वच्छअ	बच्छअ	वाछा, बच्चा
आश्चर्य	अच्छरिअ, अच्छरिज्ज, अच्चरीअ अच्छेर	अच्छरिअ	अचरज
अर्ध	अड्ट, अद्ध	अड्ढ, अद्ध	आधा
कांस्य	कस, कास	कस	काँसा
कार्तिक	कत्तिअ	कत्तिअ	कातिक
कथा	कघ	कघ	कथा
स्थान	ठाउ	ठाउ	ठाँव, थान
नाथ	णाह	णाह	नाह (नाथ)
दृष्टि	दिट्ठि	दिट्ठि	दीठ
दरिद्र	दलिद्द	दलिद्द	दरिद्दर, दलिद्दर (स्थानीय)
निम्ब	लिम्ब	लिम्ब	नीम
व्याघ्र	वग्घ	वग्घ	बाघ

[illegible], पहले सभी देशी भाषाओं के लिए 'अपभ्रंश' शब्द का प्रयोग होता था।

समस्त भारत की अति प्राचीन भाषा संस्कृत आगे चलकर शिष्ट रूप में शिक्षित समाज द्वारा साहित्य-रचना का माध्यम बनी और जन-साधारण में उसके विकृत रूप का [illegible] हो गया। जनता में प्रचलित इस विकृत रूप में स्थान और समय की आवश्यकता के अनुसार बहुत से नये शब्द आ मिले। इस प्रकार, अनेक लोक-भाषाएँ [illegible]।

हमारे तीर्थों और मतो ने हिन्दी को देशव्यापी बनाने में विशेष योगदान किया है। दक्षिण के संतो ने भी अपने मत का प्रचार करने के लिए हिन्दी के माध्यम को अपनाया। तीर्थयात्रियो ने सदा से दक्षिण और उत्तर के तीर्थों में पारस्परिक भाव-प्रकाश के लिए हिन्दी का ही सहारा लिया। यह क्रम आज भी चालू है।

यद्यपि चौदहवी सदी मे ही अमीर खुसरो[1] ने खडीबोली[2] मे काव्य-रचना की, तथापि अमीर खुसरो के बहुत दिनो बाद तक हिन्दी और रेखता इन दो नामों का व्यवहार नही मिलता। किन्तु, उन्नीसवी सदी के आरम्भ मे लल्लूलालजी द्वारा खडीबोली का हिन्दी-भाषा के अर्थ मे प्रयोग होने पर यह नाम विशेष प्रचलित हो गया। अठारहवी सदी से 'रेखता' शब्द का प्रयोग भी ऐसी हिन्दी के लिए होने लगा, जिस हिन्दी में अरबी-फारसी के शब्दो की बहुलता होती थी। भारतेन्दु-युग मे व्रजभाषा और खडीबोली के विवाद का जो आरम्भ हुआ,

---

१. "खुसरो ने विक्रम की चौदहवीं शताब्दी में ही व्रजभाषा के साथ-साथ खालिस खड़ीबोली में कुछ पद्य और पहेलियाँ बनाई थीं। औरंगजेब के समय से फारसी-मिश्रित खड़ीबोली या रेखता में शायरी भी शुरू हो गई और उसका प्रचार फारसी पढ़े-लिखे लोगों में बराबर बढ़ता गया।"
—हिन्दी-साहित्य का इतिहास (आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, संशोधित और प्रवर्द्धित सं० १९९७ वि०), पृ० ४८४।

२. "...... खड़ीबोली का गद्य अपने स्थान में पल्लवित होने के बदले दक्षिण में हुआ, जहाँ उसके लिए कोई उपयुक्त वातावरण नहीं था। जो मुसलमान दक्षिण में फैलते गये, उन्हीं के प्रयास द्वारा खड़ीबोली का गद्य अपने पैरों पर खड़ा हुआ। साहित्य में असंगति का सबसे स्पष्ट उदाहरण खड़ीबोली-गद्य के विकास में स्पष्ट रूप से दीख पड़ रहा है। वह उत्पन्न तो हुआ दिल्ली में और उसका विकास हुआ दक्षिण में। अमीर खुसरो ने खड़ीबोली का प्रयोग पद्य में तो अवश्य किया था, पर गद्य में नहीं। दक्षिण में ही उसका विकास हुआ, जो एक साहित्यिक कौतूहल है।

खड़ीबोली-गद्य का सबसे प्रथम लेखक था गेसूदराज बन्दानवाज शहबाज बुलन्द। उसका जन्म सं० १३७८ में हुआ,और मृत्यु सं० १४७९ में। लेखक पन्द्रह वर्ष की उम्र में दक्षिण छोड़कर दिल्ली में आया और वृद्धावस्था से पहले दक्षिण नहीं लौटा। अतएव, उसके गद्य को तत्कालीन दिल्ली की भाषा का सच्चा रूप समझना चाहिए। उसने दो छोटी-छोटी पुस्तकों की रचना की—'मिराज उल आशकीन' और 'हिदायतनामा'। इनमें प्रथम पुस्तक प्राप्त हुई है और वह प्रकाशित भी हो गई है। उसमें केवल १९ पृष्ठ हैं, जिनमें सूफी सिद्धान्तों का वर्णन किया गया है। भाषा का रूप खड़ीबोली है। उसमें फारसी शब्द भी हैं, व्रजभाषा के रूप और कारकचिह्न भी। इस भाषा को 'दकनी उर्दू' कहा गया है, जिसे 'मिराजुल आशकीन' के सम्पादक मौलाना अब्दुल हक साहब बी० ए० ने हिन्दी भी कहा है।"
—हिन्दी-साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास (डॉ० रामकुमार वर्मा, द्वितीय सं० १९४८ ई०), पृ० ८७४।

डॉ० वर्मा के उद्धृत मत से भी यही ध्वनित होता है कि दिल्ली की ओर से जो मुसलमान दक्षिण में गये, उन्होंने ही वहाँ खड़ीबोली का विकास किया और गेसूदराज बन्दानवाज भी १५ वर्ष की उम्र में दिल्ली आकर खड़ीबोली सीखी तथा खड़ीबोली के विकास में सहयोग किया। इस प्रकार, यह सिद्ध होता है कि खड़ीबोली के विकास का क्षेत्र उत्तर-भारत ही है।—संपादक

उसका अन्त द्विवेदी-युग मे हो गया। और, उसके उपरान्त हिन्दी के लिए खडीबोली जैसा कोई नाम नहीं रह गया तथा 'रेखता' की जगह भी 'हिन्दुस्तानी' शब्द ने ले ली। हिन्दी-भाषा का हिन्दुस्तानी नाम भी उन विदेशियो का दिया हुआ है, जो हिन्दी मे अरबी-फारसी के शब्द अधिक सख्या मे मिलाकर बोलते और इस देश के समाज मे अपना व्यवहार चलाते थे। महात्मा गाधी के समय तक साम्प्रदायिक एकता की दृष्टि से 'हिन्दुस्तानी' शब्द का प्रचार रहा, पर भारतीय सविधान मे राष्ट्रभाषा का नाम हिन्दी ही स्वीकृत होने पर अब केवल 'हिन्दी' नाम की ही प्रधानता रह गई है।

उन्नीसवी सदी के उत्तरार्ध मे ही स्वामी दयानन्द सरस्वती ने हिन्दी को भारत मे सबसे अधिक व्यापक भाषा समझकर ही अपने मत का भारतव्यापी प्रचार करने के लिए हिन्दी मे अपना सिद्धान्त-ग्रन्थ 'सत्यार्थ-प्रकाश' लिखा। उनके पहले भी राजा राममोहन राय ने अपने मत का भारतव्यापी प्रचार करने के उद्देश्य से ही 'बगदूत' (सन् १८२९ ई०) मे हिन्दी को भी स्थान दिया था। उससे भी पहले जब अँगरेजो ने इस देश का शासन-सूत्र सँभाला, तब कलकत्ता के फोर्ट विलियम कॉलेज से, अध्यापक जॉन गिलक्राइस्ट ने जो 'वर्नाकुलर-मैगजीन' निकाला, उसमे भी अँगरेजी के साथ-साथ हिन्दी को स्थान दिया।

इसी समय, अर्थात् उन्नीसवी सदी के आरम्भिक वर्षों मे, आधुनिक हिन्दी-गद्य के आदि लेखक प० सदलमिश्र ने हिन्दी मे पुस्तकें लिखी थी। प० सदलमिश्र से भी सत्तर वर्ष पूर्व का एक शिलालेख बगाल के मुर्शिदाबाद नामक स्थान मे मिला है, जिसका सचित्र परिचय 'बगीय साहित्य-परिषद्-पत्रिका' मे श्रीसुनीतिकुमार चाटुर्ज्या ने लिखा है।[1] यह विक्रमाब्द १७९१ (१८३४ ई०) का है। उसमे ऊपर हिन्दी के पाँच दोहे और नीचे उन्ही का रूपान्तर बँगला और फारसी-लिपि मे है। इससे यह स्पष्ट होता है कि उस समय भी अहिन्दी-भाषी क्षेत्रो मे हिन्दी की ही प्रधानता थी।

---

१. संवत् १७९१ वैसाख मास सुदि तीजा।
नृप गन्धर्वसिंह सुत मोहन ने [illegible] धर्म को बीजा ॥
देवपुरी [illegible] पद [illegible] गंग के तीर ॥
[illegible] लीनो मोहि [illegible] सुजन को [illegible] ॥
[illegible] की नारि ने ज्यों पुनी करि मेला।
[illegible] रोपी [illegible] ने [illegible] [illegible] ॥
उत्तर [illegible] दने पश्चिम गंगा [illegible]।
[illegible] [illegible] [illegible] पूरब [illegible] ॥
[illegible] कोस है आठ किये परिमाना।
[illegible] कूप [illegible] ॥ ५ ॥
—'बंगीय साहित्य-परिषद्-पत्रिका' ([illegible], भाग ३१, सं० १), पृ० । ४३-४४

उक्त शिलालेख से तीस वर्ष पहले और प० सदलमिश्र से एक सौ वर्ष पूर्व भगवान् मिश्र मैथिल के अठारहवीं-शताब्दी (सन् १७०३ ई०) के शिलालेख[1] (बस्तर-राज्यान्तर्गत दन्तावारा ग्राम, मध्यप्रदेश) मे हिन्दी का जो प्राचीन रूप मिलता है, उससे स्पष्ट प्रतीत होता है कि अठारहवीं शताब्दी से पूर्व ही हिन्दी भारतीय जन-जीवन में अपना प्रमुख स्थान बना चुकी थी।

बिहार की भाषा

भाषा के सम्बन्ध मे अखिलभारतीय दृष्टि से विचार कर चुकने के बाद अब यह देखना है कि हिन्दी-भाषा और हिन्दी-साहित्य का जो क्रम-विकास हुआ, उसमे बिहार का योग-दान कितना है। महापण्डित राहुल साकृत्यायन ने तिब्बत-यात्रा करके बौद्ध सिद्धो की रचनाओं का जब उद्धार किया, तब १२वीं शताब्दी के महाकवि चन्दबरदाई के समय से ही

---

1. "दन्तवाला देवी जयति। देववाणी मह प्रशस्ति लिखाए राजा दिक्पालदेव के कलयुग महँ सस्कृत के बचवैया थोर हो हैं ते पाइ भाषा लिखे हैं। सोमवंशी पांडव अर्जुन के सतान तुरुक्षान हस्तिनापुर छाडि ओरगल के राजा भए। ते वश महँ काकती प्रतापरुद्र नामा राजा भए जे राजा शिव के अश नउ लाख धानुक के ठाकुर जे के राज्य सुवर्न वर्षा भै ते राज के भाई अन्नमराज बस्तार महँ राजा भए ओरगल छाडि कै। ते के सतान हमीरदेव राजा भए। ताके पुत्र भैरव राजदेव राजा। ताके पुत्र पुरुषोत्तमदेव महाराजा ताके पुत्र जैसिंहदेव राजा ताके पुत्र नरसिंहराय देव महाराजा जेकर महारानी लछिमा देई अनेक ताल बाग करि सोरह महादान दीन्हें। ताके पुत्र जगदीशराय देव राजा। ताके पुत्र वीरसिंहदेव नाम धर्मअवतार, पडितदाता सर्वगुन-सहित, देव-ब्राह्मन-पालक चदेलिन बदन कुमारी महारानी विषैं दन्तावली के प्रसाद तें दिक्पालदेव पुत्र पाए। शतसाठि वर्ष राज्य करि दिक्पालदेव कहँ राज सौंपि कै वैसाषी पूर्णिमा महँ प्राणायाम समाधि बैकुंठ गए। ताके पुत्र स्वस्ति श्री महाराजाधिराज सक प्रशस्तिसहित पृथुराज के अवतार, बुद्धि-गणेश, बलभीम, सोमाराम, पन परशुराम, दान-कर्ण, . . . सीलसागर, रीझे कुबेर, खीझे यम, प्रताप आगिनी, सेना सरदार इन्द्र . . आचार ब्रह्मा, विद्या सेसनाग एहूँ भाँति दस दिक्पाल के गुण जानि 'पंडित बामन' दिक्पालदेव नाम धरे। तें दिक्पालदेव बिआह कीन्हें बरदी के चंदेलराव रतनराजा के कन्या अजब कुमारि महारानी विषैं अठारहवें वर्ष रक्षपालदेव नाम युवराज पुत्र भए। तब हल्ला तें 'नवरंगपुर' गढ़ तोरि-फारि सकल बन्द करि जगन्नाथ बस्तर पठै के फेरि 'नवरंगपुर' दै के ओडिया राजा थापे . . .। पुनि सकल पुरवासी लोग समेत दंतवाला के 'कुटुम जात्रा' संवत सत्रह सै साठि १७६० चैत्र सुदी १४ आरभ वैशाख वदी इते सपूर्ण भै जात्रा। कते को हजार भैसा बोकरा मारे तेकर रकत प्रवाह बह पाँच दिन सखिनी नदी लाल कुसुम वर्न भए। ई अर्थ मैथिल भगवान मिश्र राजगुरु पडित भाषा और सस्कृत दोउ पाथर महँ लिखाए। अस राजा श्रीदिक्पालदेव समान। कलयुग न हो है आन राजा।"

—मिश्रबन्धु-विनोद (मिश्रबन्धु, द्वितीय भाग, द्वितीय स०, १९८४ वि०), पृ० ५३६-३७। तथा 'सरस्वती' (भाग १७, खड २, सख्या ५), पृ० २८५।

हिन्दी का उद्गम माननेवाले इतिहासकार आठवी शताब्दी मे बौद्ध सिद्धो द्वारा रचित कविताओ मे हिन्दी के प्राचीन रूप का आभास पाने लगे। इस प्रकार राहुलजी की खोजो से हिन्दी के उद्गम का समय पहले के अनुमित समय से लगभग ४०० (चार सौ, वर्ष अधिक वढ गया। किन्तु, यह विचारणीय विषय है कि आठवी सदी मे हिन्दी के आदिकवि सिद्ध सरहपाद ने अपनी रचना के लिए जिस भाषा को अपनाया, उसमे उस समय से पहले कोई रचना थी या नही, क्योकि सातवी सदी के आरम्भ मे ही महाकवि वाणभट्ट' के 'परममित्र भाषाकवि ईशान' ने भाषा' मे—सस्कृत और प्राकृत से भिन्न भाषा मे, अर्थात् लोकप्रचलित भाषा मे—कविता की थी। 'हर्षचरित' के प्रथम उच्छ्वास मे प्राकृत-कवि और भाषा-कवि का अलग-अलग उल्लेख है।

यहाँ यह भी विचारणीय है कि उस समय केवल 'ईशान' ही भाषा कवि नही रहे होगे, वल्कि जिस लोक-प्रचलित भाषा मे वे कविता करते थे, उसी मे उस समय के अन्य कवि भी कविता करते रहे होगे। इसके प्रमाण मे वही प्रकरण देखा जा सकता है, जिसमे वाणभट्ट ने अपने परममित्र ईशान के साथ-साथ 'वर्ण कवि वेणी भारत'[1] का उल्लेख किया है। वहाँ कवि का नाम 'वेणी भारत' और 'वर्ण कवि' उनका विशेषण है। 'हर्षचरित' के टीकाकार और १२वी शताब्दी से पहले होनेवाले 'शकर' ने 'वर्ण कवि की व्याख्या करते हुए लिखा है—'भाषा में गाने योग्य विषयो को वाणी का रूप देकर कविता करनेवाला—अर्थात् गाथा रचकर गानेवाला।'[2] इससे भी स्पष्ट है कि ईशान की तरह 'वेणी भारत' भी भाषा के ही गाथा गानेवाले कवि थे।

इसी तरह सरहपाद ने भी अपनी रचना के लिए कोई नई भाषा नही गढी होगी। जिस भाषा को उन्होने अपने भावो के वहन करने मे समर्थ पाया, उसका अस्तित्व निश्चय ही उनके पहले से था। अनिश्चित काल से ही वहती आती हुई नदी मे ही घाट बाँधा जाता है, घाट वाँधने के लिए नई नदी नही खोदी जाती।

जिस तरह राहुलजी के अनुसन्धान से हिन्दी की प्राचीनता का समय ४०० वर्ष अधिक वढ गया, उसी तरह उपर्युक्त प्रमाणो से ही यह सिद्ध हो जाता है कि राहुलजी द्वारा निर्णीत समय ४०० वर्ष के बदले लगभग ६०० वर्ष होना चाहिए। सभव है, भविष्य के किसी अप्रत्याशित नये अनुसन्धान से यह समय और भी अधिक वढ जाय, जैसे 'मोहनजोदडो' और 'हरप्पा' के उत्खनन से भारतीय सभ्यता की प्राचीनता का समय कई हजार वर्ष अधिक वढ गया।

---

१. "अभवंश्चास्य सवयस: समाना सुहृद: सहायाश्च। तथा च भ्रातरौ पारशवौ चन्द्रसेनमातृषेणौ, भाषाकविरीशान पर मित्रम्, प्रणयिनौ रुद्रनारायणौ विद्वासौ वारवाणवासवाणौ वर्णकवि: वेणी भारत:।"

—हर्षचरितम् (वाणभट्ट, प्रथम उच्छ्वास)

२. शकर की टीका—'भाषागेयवस्तुवाचस्तेपु वर्णकवि.। गाथादिपु गीतद इत्यर्थ·।'—वही।

शकर की टीका के समर्थन में यह वाक्य भी है—"वर्ण'—· the order or arrangement of a song or poem", W. (M. M W. Sanskrit English Dictionary 1951), P. 924

चौदहवी सदी मे भी अमीर खुमरो ने जिस भाषा मे मुकरियाँ और पहेलियाँ लिखी, उस भाषा का अस्तित्व उनके समय मे अथवा उनके समय से पहले भी अवश्य रहा होगा, क्योकि उन्होने अपनी ओर से कोई बिलकुल नई भाषा नही गढी, वल्कि उस समय के समाज मे जिसका प्रचलन देखा, उसी का कुछ परिष्कार किया। प्राय अधिकाश समर्थ कवि जब अपनी कविता के भावो को जनसाधारण तक पहुँचाने के लिए जनभाषा को अपनाते हैं, तब उसके रूप को आवश्यकतानुसार परिष्कृत भी करते हैं। इस बात के प्रमाण हिन्दी के कई महाकवि है।

दक्षिण-विहार और उत्तर-विहार, अर्थात् मगध, अग मिथिला की जनभाषा मगही, अगिका और मैथिली वहुत प्राचीन काल से ही रही। विहार के पश्चिम खंड में भोजपुरी भी सुदूर अतीत काल से जनभाषा थी और आजतक है। विहार की इन चार प्रमुख जनभाषाओ मे पुरानी और नई रचनाएँ पाई जाती है। विशेषत मैथिली की पुरानी रचनाएँ साहित्य मे महत्त्वपूर्ण स्थान पा चुकी हैं। भोजपुरी का साहित्य भी जिसकी प्राचीनता की सीमा मैथिली-साहित्य की तरह निर्धारित नही की जा सकी है, प्रचुर मात्रा मे प्रकाश मे आ चुका है। मगही और अगिका का साहित्य भी शनै शनै प्रकाश मे आता जा रहा है।

यह मानना युक्तिपूर्ण नही होगा कि जिस पुरानी भाषा में वौद्ध सिद्धो ने और मैथिली मे विद्यापति तथा उनके समकालीन मैथिली-कवियो ने कविता रची, उससे पहले कोई रचना हुई ही नही। आज की खोज मे विद्यापति से भी ३०० वर्ष पहले राजा मल्लदेव की जो कविता मिली है, उसकी भाषा विद्यापति की मैथिली से विशेष भिन्न नही है। इससे ज्ञात होता है कि हिन्दी की तरह जनभाषाओ का निर्भर भी सस्कृत गोमुख से निकलकर प्राकृत, अपभ्रंश आदि घाटियो को पार करता हुआ देश मे फैला और स्थान-विशेष की प्रकृति तथा काल की गति के प्रभाव से उसमे अनेकरूपता आई।

उन भाषाओ मे जो क्रियाएँ, विशेषण और सज्ञाएँ हैं, सबकी व्युत्पत्ति देखने से सहज ही ऐसा अनुमान होता है कि सस्कृत, पालि प्राकृत, अपभ्र श आदि भाषाओ से अनेकानेक शब्द हमारी लोक-भाषाओ मे आये हैं और आते रहे है। साथ ही, जो विदेशी यात्री, विद्वान्, व्यापारी और आक्रमणकारी समय-समय पर इस देश मे, और खासकर विहार में आते रहे है उनके ससर्ग से भी हमारी जनभाषाओ मे अनेक शब्द घुल-मिल गये हैं, जिनमें से वहुत-से शब्द शिष्ट हिन्दी मे भी खपे हुए है।

आधुनिक हिन्दी-साहित्य-ससार मे यह मान्यता सप्रमाण प्रतिपादित हो चुकी है कि विहार के वौद्ध सिद्धो की रचनाओ मे हिन्दी का सवसे प्राचीन रूप है। किन्तु, वौद्ध सिद्धो की रचनाओ मे जिस भाषा का प्रयोग हुआ है, वह जनसाधारण की भाषा न होकर शिष्ट-सम्प्रदाय की भाषा थी, क्योकि वौद्ध सिद्धो मे से कई कवि भारत के अन्य प्रान्तो के भी थे और उन्होने विहार मे आकर एकाएक यहाँ की जनभाषा मे रचना कर डाली, यह सहसा विश्वसनीय नही प्रतीत होता।

भाषातत्त्वविद् इतिहासकारो ने अबतक भाषा के सम्बन्ध में विचार करते समय अधिकतर अनुमान और परम्परागत धारणाओ के आधार पर ही अपने मत व्यक्त किये है। इसलिए निश्चित रूप से कोई सिद्धान्त स्थिर नही हो सका है। एक तो भाषा-सम्बन्धी विचार-विमर्श के लिए प्रामाणिक प्राचीन ग्रंथ उपलब्ध नही है, दूसरे यह कि जो उपलब्ध हैं, उनके सहारे किसी निश्चित निर्णय पर पहुँचना अथवा अन्तिम निष्कर्ष निकालना सभव नही है। किन्तु, बुद्धिगम्य प्रमाणो के बल पर ही इतना कहना सभव है कि बिहार की जनभाषा का नाम, समय और स्थान के भेद से, पालि, प्राकृत आदि रहा, जिसके चार प्रधान रूप मैथिली, भोजपुरी, मगही और अगिका वर्त्तमान है।

जो लोग बौद्ध सिद्धो की भाषा को जनभाषा मानते है, उन्हे यह सोचना चाहिए कि कविता को भाषा से जनभाषा का ठीक-ठीक अनुमान करना कठिन है। इतना ही कहा जा सकता है कि बौद्ध सिद्धो ने अपने मत अथवा सिद्धान्त का जनता में प्रचार करने के उद्देश्य से अपनी कविता में जनभाषा के भावोद्बोधक शब्द ले लिये है।

भाषा के प्रकृत रूप अथवा भाषा की प्रकृति की परख करते समय यह बात ध्यान मे आती है कि जनभाषा की तरह शिष्टो की भाषा पर भी स्थान और समय का प्रभाव होता है। आज जिस प्रकार हिन्दी की कविता की भाषा के रूप मे पचास वर्षों की अवधि में स्पष्ट परिवर्त्तन लक्षित होता है, उसी प्रकार प्राचीन हिन्दी सदियो से परिवर्त्तित होती हुई वर्त्तमान रूप मे अवस्थित है।

जबतक बिहार के बौद्ध सिद्धो की रचना के अतिरिक्त प्राचीन हिन्दी के रूप का दूसरा कोई पुष्ट आधार नही मिलता, तबतक यह मानना असगत न होगा कि हिन्दी का उद्गम-स्थल बिहार ही है।

महापण्डित राहुल साकृत्यायन का कथन है कि तिब्बत के बौद्ध विहारो मे अ ख्य हस्तलिखित भारतीय पोथियाँ सगृहीत और सुरक्षित है, जिनका अध्ययन आजतक नही हुआ है। अत., सम्भव है कि भविष्य मे उनके अनुशीलन से प्राचीन भारतीय साहित्य और बिहार की अपार साहित्यिक निधि के सम्बन्ध में बहुत-सी नई परम्पराओ और नये तथ्यो का उद्घाटन हो।

सिद्ध-काल

महापडित राहुल साकृत्यायन के मतानुसार ८४ सिद्धो मे ३६ बिहारी हैं, जिनमें से कई सिद्धो की रचनाएँ नही मिलती और कुछ का तो परिचय भी सक्षिप्त ही मिलता है। उन सिद्धो ने जिस अपभ्र श मे कविता की, उसके सम्बन्ध मे पहले कहा जा चुका है कि साहित्यिक इतिहासकार उसी मे पुरानी हिन्दी की छाया देखते है। कहा जाता है कि पालि, प्राकृत तथा अपभ्र श-भाषाओ मे जो जैनो और बौद्धो का साहित्य मिलता है, उसमे भी हिन्दी के प्राचीन रूप के दर्शन होते हैं। जैनधर्म और बौद्धधर्म का मुख्य केन्द्र होने के कारण बिहार की तत्कालीन भाषा का प्रचार धर्म-प्रचारको द्वारा भारत के विभिन्न स्थानो के अतिरिक्त भारत के पडोसी देशो मे भी हुआ। जैन नरेशो और बौद्ध सम्राटो के प्रभाव से प्राकृत और पालि को उनके राज्यो मे राजभाषा होने का भी गौरव मिला।

किन्तु, अपभ्रंश-भाषा विहार मे या भारत के अन्य प्रान्तो मे यद्यपि राजभाषा के रूप में कभी प्रचलित न हुई, तथापि संस्कृत भाषा का विकृत रूप होने के कारण भारत की जनपदीय भाषाओ से उसका सम्पर्क समझकर तात्कालिक साहित्यकारो ने अपनी पद्य-रचना के लिए उसे अपनाया। उसमे जो रचना की परम्परा चली, वह कालक्रम से विकास पाती हुई विद्यापति के काल तक चली आई। उसके बाद की रचनाओ मे भी कही-कही उसकी छाया प्रतिबिम्बित हुई है।

चूँकि हिन्दी की आदि-कविता केवल विहार के ही बौद्ध सिद्धो की मिलती है, इसलिए उसके सबसे प्राचीन रूप को विहार की ही देन कहना युक्तिसगत होगा।

सिद्धो की भाषा मे बहुत-से ऐसे शब्द है, जो आज की हिन्दी में प्रचलित तत्सम शब्दो के विकृत रूप जान पडते है और बहुत-से शब्द ऐसे भी है, जो आज भी अपने प्रकृत रूप मे ही प्रचलित है। उनकी भाषा से यह भी प्रकट होता है कि उनके द्वारा प्रयुक्त शब्द और वाक्य संस्कृत की परपरा से ही आये है। उनकी भाव व्यजना-शैली मे भी संस्कृत की अन्तर्मुखी धारा प्रवाहित दीख पडती है। स्पष्टीकरण के लिए प्रत्येक शती के उपलब्ध उदाहरणो से यहाँ कुछ शब्दो की तालिका उपस्थित की जा रही है, जिसमे चार प्रकार के शब्द है—

(१) तत्सम शब्दो के विकृत रूप।
(२) तत्सम शब्दो के आधुनिक प्रचलित रूप।
(३) तद्भव या देशज शब्दो के विकृत रूप।
(४) तद्भव या देशज शब्दो के आधुनिक प्रचलित रूप।

तत्सम शब्दों के विकृत रूप	तत्सम शब्दों के आधुनिक प्रचलित रूप	तद्भव या देशज शब्दों के विकृत रूप	तद्भव या देशज शब्दों के आधुनिक प्रचलित रूप
आठवीं शती			
सअल (सकल)	करुणा	जिम (जिमि)	पइसइ
दिढ (दृढ)	पच	अप्पण (अपन)	छाडिअ
महासुह (महासुख)	परिमाण	जोइआ (जोगिया)	अहेरी
पवेस (प्रवेश)	आकाश	काआ (कागा)	लेहु
तित्थ (तीर्थ)	चित्त	सुणउ (सुनउ)	कहिअ
नवीं शती			
तत (तत्त्व)	सद्गुरु	दहिणा (दहिना)	चउदिस
जउना (यमुना)	पवन	आग्गी (आगी, आगि)	वहइ
चन्द-सुज्ज (चन्द्र-सूर्य)	निरजन	उएखी (उपेखी)	जाइब
मेरु-सिहर (मेरु-शिखर)	कमल कुलिश	विआपेउ (व्यापेउ)	गेल
वणहम (अनहद)	निरतर	—	आइल
दसवीं शती			
जथा (यथा)	धाम	जवें (जवे)	करहु

तत्सम शब्दों के विकृत रूप	तत्सम शब्दों के आधुनिक प्रचलित रूप	तद्भव या देशज शब्दों के विकृत रूप	तद्भव या देशज शब्दों के आधुनिक प्रचलित रूप
तपोवण (तपोवन)	सर्व	तबे (तबे)	पावा
वह्मा-विह्लु-महेसुर (ब्रह्मा-विष्णु-महेश्वर)	सेवा	अराहहु (अराधहु)	पुजहू
वोहिसत्व (बोधिसत्त्व)	अविकल	चित्तें (चित्ते)	काज
मोक्ख (मोक्ष)	कारण	पुन (पुनु)	बोलथि
ग्यारहवी शती			
जइ (यदि)	मोह	तूटइ (टूटइ)	—
माआ (माया)	अन्तराले (अन्तराल)	भणइ (भनइ)	होइ
बारहवीं शती			
सवेअण (सवेदन)	रवि	चान्दा (चन्दा)	आध
आन्त (अन्त)	सम	ताबे (तबे)	राती
तेरहवी शती			
सुद्ध (शुद्ध)	हस	पुणि (पुनि)	किअ
किति (कीर्त्ति)	कमल	भण (भन)	तुअ

वस्तुत, साहित्य में बौद्ध सिद्धो की रचनाओ का महत्त्व केवल उनकी भाषा के कारण ही है। उनकी रचनाओ मे ऐसा कुछ काव्य-तत्त्व नही है, जिससे वे वास्तविक कवि के रूप में स्वीकृत किये जायँ, क्योकि उन्होने केवल धर्म-प्रचार के उद्देश्य से ही पद्य-बद्ध रचनाएँ की थी।

चौरासी बौद्ध सिद्धो में जो विहार के निवासी थे, उनका परिचय पुस्तक के मूल विषय के अन्तर्गत अकित है, और जो विहार के निवासी नही थे, पर जिनका कर्मक्षेत्र विहार था, उनका परिचय परिशिष्ट भाग मे दिया गया है। किन्तु ऐसा अनुमान है कि विहार के नालदा और विक्रमशिला-विद्यापीठो से चौरासी सिद्धो का घनिष्ठ सम्पर्क रहा होगा। और, विहार से बाहर के जितने भी बौद्ध सिद्ध रहे होंगे, उन सबकी साधना का केन्द्र-स्थान नालन्दा और विक्रमशिला में ही होगा। इससे यह स्पष्ट होता है कि चौरासी सिद्धो की साहित्य-सेवा का मूल स्रोत विहार ही रहा है। इस पुस्तक में कुछ सिद्धकालीन साहित्यकार ऐसे भी है, जिनकी गणना चौरासी सिद्धो में नही होती, किन्तु उनका सम्बन्ध किसी-न-किसी प्रकार चौरासी सिद्धो से रहा है और वे पाण्डित्य तथा साहित्य-रचना की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण प्रतीत होते है।

सिद्ध-काल मे शान्तिरक्षित[1] नामक एक सुप्रसिद्ध विद्वान् विहार मे हो चुके है। सस्कृत मे उनकी अनेक रचनाएँ है। अपने समय के वे अत्यन्त प्रतिष्ठित सिद्धाचार्य हुए है, किन्तु उनकी कोई रचना पुरानी हिन्दी मे नही मिलती। इसलिए उनके

१. विहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् से प्रकाशित श्रीहवलदार त्रिपाठी 'सहृदय'-लिखित 'बौद्धधर्म और विहार' नामक पुस्तक (पृ० २११-१२) में महात्मा शान्तिरक्षित का सचित्र परिचय प्रकाशित है।

समान सिद्ध-काल के परम प्रसिद्ध विद्वान् का यहाँ उल्लेख-मात्र किया गया है। संभव है कि भावी शोध मे उनकी कोई रचना पुरानी हिन्दी मे भी मिल जाय।

यह बात सिद्ध युग मे विशेष रूप से ध्यान देने योग्य है कि आठवी से तेरहवी शती तक के समय मे कुछ विद्वानो के मतानुसार एकमात्र 'चौरंगीपा' ही गद्यकार दृष्टिगत होते है, जिनकी 'प्राणसंकली' नामक गद्य-रचना पिण्डी के जैनग्रंथ-भण्डार मे सुरक्षित है और जिनके कुछ अंश का उदाहरण भी इस पुस्तक की एक पाद-टिप्पणी मे दिया गया है। उनके गद्य मे भोजपुरी भाषा की झलक मिलती है और ऐसा अनुमान होता है कि उनके समय मे पहले भी गद्य-रचना होती थी। संभव है कि उनके अतिरिक्त अन्य बौद्ध सिद्ध भी गद्यकार रहे हो, पर उनके रचे ग्रंथो के नाममात्र से ठीक पता नही लगता कि वे ग्रंथ गद्य के है या पद्य के। चौरंगीपा के गद्य-ग्रंथ के सम्बन्ध मे भी मतभेद है। अतः, निश्चित रूप से उनको गद्यकार मानने मे शंका हो सकती है।

उपलब्ध और प्रकाशित रचनाओ के आधार पर भी विचार करने से ऐसा स्पष्ट लक्षित होता है कि सिद्ध-काल की भाषा-परम्परा महाकवि विद्यापति तक चली आई है।[1] बारहवी शती तक मुख्यत सिद्धो की रचनाएँ अपभ्रंश अथवा पुरानी हिन्दी मे है; पर १३वीं शती के कवि 'हरिब्रह्म' की रचना मे भी पुरानी हिन्दी की छाप स्पष्ट है। चौदहवी शती के विद्यापति की रचनाओ मे भी अपभ्रंश (अवहट्ठ) अथवा पुरानी हिन्दी के उदाहरण मिलते है। हरिब्रह्म और विद्यापति की अपभ्रंश-रचनाओ मे बहुत-कुछ साम्य दीख पडता है।

सिद्धोत्तर काल

चौदहवीं शती—सिद्धोत्तर काल का आरम्भ चौदहवी शती से होता है। इस शती के जिन साहित्यकारो के परिचय इस पुस्तक मे दिये गये है, वे सभी मिथिला-निवासी है। मिथिला अत्यन्त प्राचीन काल मे विद्वानो की जन्मभूमि रही है। पौराणिक युग से ऐतिहासिक युग तक उसमे देशविख्यात विद्वानो की गौरवमयी परम्परा मिलती है। विद्याध्ययन और ग्रन्थ-प्रणयन की परम्परा भी वहाँ पाई जाती है। वहाँ कितने ही ऐसे वंश और परिवार पुराकाल मे थे और आज भी है, जिनमे विद्वत्ता और ग्रंथ-लेखन का क्रम निरन्तर चलता रहा है। इसलिए प्राचीन हस्तलेखो के युग मे भी वहाँ के साहित्यकारो की रचनाएँ सुरक्षित रह सकी।

मिथिला की तरह भोजपुरी, मगही आदि भाषाओ के क्षेत्रो मे भी बहुत-सी रचनाएँ हुई होगी, पर उनकी खोज और रक्षा का प्रयत्न मिथिला की तरह कभी नही हुआ। ऐतिहासिक युग के राजनीतिक विप्लवो का प्रभाव दक्षिण विहार पर इतना अधिक पड़ा कि बहुत से ग्रंथ-भाण्डारो और प्रजा के विपुल धन का ध्वंस हो गया। यहाँ तक

---

१. "अपभ्रंश की यह परम्परा विक्रम को १५वीं शताब्दी के मध्य तक चलती रही। एक ही कवि विद्यापति ने दो प्रकार की भाषा का व्यवहार किया है—पुरानी अपभ्रंश भाषा का और बोलचाल की देशी भाषा का।" —हिन्दी-साहित्य का इतिहास (रामचन्द्र शुक्ल, संशोधित और परिवर्द्धित सं०, १९९७ वि०), पृ० ५।

कि मुसलमानी शासन-काल के आक्रमणो के अतिरिक्त सन् १८५७ ई० के सैनिक-विद्रोह मे भी अनेक गाँव और सग्रहालय नष्ट हो गये। जान पडता है कि इसी कारण दक्षिण-विहार के प्राचीन साहित्यकारो और उनकी रचनाओ का पता नही चलता।

चौदहवी शती मे जिन मिथिला-निवासी साहित्यकारो की रचनाएँ मिली है, उनकी भाषा मैथिली है। मैथिली को भी मै अवधी, व्रजभाषा, राजस्थानी आदि की तरह हिन्दी का ही अग मानता हूँ। वास्तव में हिन्दी-प्रधान प्रान्तो की क्षेत्रीय भाषाएँ हिन्दी के ही अवयव के समान है। सस्कृत-सतति होने के कारण हिन्दी भारतीय भाषाओ के साथ सास्कृतिक सबध और अपनापन रखती है। जैसे हिन्दी-जगत् मे यह बात सर्वमान्य है कि व्रजभाषा और अवधी की रचनाओ से हिन्दी-साहित्य धन-कुबेर और निधि-निधान हुआ है, वैसे हो बिहार के सम्बन्ध मे भी यह बात निःसकोच कही जा सकती है कि यहाँ भी मैथिली से हिन्दी की समृद्धि-वृद्धि हुई है। इसीलिए पूर्वकाल से ही हिन्दी-साहित्य-ससार के विद्वानो ने मिथिला के साहित्यकारो को भी हिन्दी का साहित्यकार माना है। यो तो कवितागत भाषा का अध्ययन-मनन करने से प्रत्यक्ष दीख पडता है कि मैथिली-रचनाओ मे तत्सम और तद्भव शब्दो के ही रूप सुरक्षित है, केवल क्रियाओ और कारको मे ही मैथिली-क्षेत्र के प्रयोग दीख पडते है।

इस काल की रचनाएँ अधिकतर शृ गार-रस-सम्बन्धिनी और भक्तिपरक हैं। भक्तिपरक रचनाओ मे भगवान् कृष्ण और शिव के प्रति पूज्य भाव प्रदर्शित हैं। प्रकृति-वर्णन-सबधी एकमात्र कविता तत्सम-प्रधान मैथिली की है। यो, अवहट्ट (अपभ्र श) मे कुछ नीति-सम्बन्धी रचनाएँ भी प्राप्य है। काव्यत्व की दृष्टि से महाकवि विद्यापति, उमापति और दामोदर विशेष रूप से उल्लेखनीय है। कवित्व-कला के अतिरिक्त इनमे भाषा की सरसता और स्वच्छता भी पर्याप्त है।

यह शती कई दृष्टियो से महत्त्वपूर्ण है—

१. इसमे अपभ्र श या पुरानी हिन्दी की परम्परा समाप्त होकर आधुनिक हिन्दी की परम्परा का आरम्भ होता नजर आता है।

२. इसमे उमापति जैसे नाटककार[१], ज्योतिरीश्वर जैसे गद्यकार[२] और विद्यापति के समान महाकवि का आविर्भाव हुआ है। उमापति के नाटक की देखादेखी बहुत-से नाटक[३] आगे लिखे गये। ज्योतिरीश्वर भी हिन्दी के प्रथम गद्यकार माने जाते है, और विद्यापति भी महाकवि चन्दबरदाई के बाद, प्रमुखता की दृष्टि से, सर्वप्रथम हिन्दी-कवि माने गये है। इस प्रकार, इस युग मे बिहार की साहित्य-सेवा बडे महत्त्व की जान पडती है।

३ इसमे एक छन्दोग्र थ के रचयिता दामोदरमिश्र भी हुए है, जिन्होने 'वाणी-भूषण' नामक एक ग्र थ की रचना की थी। यह ग्र थ किस भाषा मे है, यह कहना कठिन है।

---

१. उमापति का नाटक 'पारिजातहरण' संस्कृत और प्राकृत में है। केवल उसके गीत मैथिली में हैं।

२. चौदहवीं शती में महाकवि विद्यापति की गद्य-रचना भी मिलती है। उनकी 'कीर्त्तिलता' तथा 'कीर्त्तिपताका' नामक प्रसिद्ध पुस्तकों में पुरानी हिन्दी के गद्य के उदाहरण पाये जाते हैं।

३ महाकवि विद्यापति की भी दो नाटिकाएँ—'गोरक्षविजय' और 'मणिमजरी' उमापति की परम्परा में ही आती हैं।

यदि दक्षिण-बिहार के तात्कालिक साहित्यकारो की रचनाएँ प्राप्त होती, तो यह विश्वास दृढ हो जाता कि उत्तर-बिहार मे साहित्य-रचना की जो प्रवृत्ति थी, वह न्यूनाधिक मात्रा मे दक्षिण-बिहार में भी रही होगी।

पन्द्रहवीं शती—पन्द्रहवी शती मे सत्रह साहित्यकारो का पता चला है। वे सभी मिथिला-निवासी ही है। १४वी और १५वी शती के साहित्यकारो को देखकर यह स्पष्ट होता है कि मिथिला जैसे महामहोपाध्यायो और महापडितों की खान है, वैसे ही कवियो की भी। जगज्जननी जानकी की जन्मभूमि और मर्यादापुरुषोत्तम भगवान् रामचन्द्र की विनोद-भूमि होने के कारण मिथिला यदि चिरकाल से विद्याधिष्ठात्री वागीश्वरी की भी विलास भूमि रही, तो यह विस्मय या विवाद का विषय नही। जिसप्रकार राष्ट्रभाषा हिन्दी की क्षेत्रीय भाषाओ मे व्रजभाषा, अवधी और राजस्थानी की रचनाओ से हिन्दी-साहित्य का गौरव बढा है, उसी प्रकार बिहार मे मैथिली की रचनाओ ने भी उसका मान बढाया है।

इसी शती के सभी कवियो की भाषा मैथिली है, किन्तु उनकी रचनाओ मे मैथिली क्रियाओ और कारको के अतिरिक्त तत्सम और तद्भव शब्दो का भी बाहुल्य है। उदाहरण के लिए 'चन्द्रकला' की भाषा तुलसी की 'विनय-पत्रिका' के सस्कृत-बहुल पदो का स्मरण कराती है। भाषा की सफाई और भाव की मिठास के विचार से माधवी, कसनारायण, गजसिंह, लक्ष्मीनाथ, गोविन्द ठाकुर, मधुसूदन, दशावधान और हरपति के नाम क्रमश. उल्लेखनीय प्रतीत होते है। इस शती के कवियो मे एकमात्र कृष्णदास ही ऐसे मिलते है, जिन्होने अवधी-भाषा मे रचना की है।

इस शती की रचनाएँ भी शृंगार-रसात्मक और भक्ति-प्रधान ही है। भक्ति-संबधिनी कविताओ मे भगवान् कृष्ण और शिव के प्रति अनुराग प्रदर्शित है।

आलोच्य शती का महत्त्व विशेषत: निम्नाकित बातो के कारण प्रकट होता है—

१. इसमे दो कवयित्रियाँ—चन्द्रकला और माधवी—अपनी प्रतिभा-प्रभा से साहित्य-क्षेत्र को आलोकित कर रही है।

२. इसमे दो धर्मपथ-प्रवर्त्तक साहित्यकार भी मिलते हैं—कृष्णदास और विष्णुपुरी। कृष्णदास ने कबीर-पथ में 'कबीर-वचन वशीय' नामक एक नई शाखा चलाई थी। इसी प्रकार, विष्णुपुरी की गणना बगाली वैष्णवधर्म के प्रवर्त्तको मे होती है।

३. इसमे दो टीकाकार—कृष्णदास और गोविन्द ठाकुर—भी हुए। यह कहना सभव नही कि इनकी टीकाएँ हिन्दी मे ही हैं।

४. इसमे अनेक साहित्यकारो के एक आश्रयदाता—कसनारायण—भी हुए। साहित्यिको के सरक्षक के रूप मे, महाराज शिवसिंह के बाद इनका ही स्थान माना जाता है।

इस शती की उपलब्ध रचनाओ से भी उत्तर-बिहार की ही साहित्य-साधना के दर्शन होते हैं। किन्तु, मिथिला की तरह मगह मे भी विद्वानो और साहित्यकारो की परम्परा प्राचीन काल से ही रही है। इसलिए सभव है कि भावी शोध में दक्षिण-बिहार के

साहित्यकारो की उत्कृष्ट रचनाएँ भी प्राप्त हो। फिर भी, मिथिला के साहित्यकारो ने इस शती मे भी अपनी सुन्दर रचनाओ से बिहार के गौरव को अक्षुण्ण रखा है।

सोलहवीं शती—इस शती मे कुल उन्नीस कवि है, जो उत्तर-बिहार के ही है। एकमात्र 'सविता' ही भोजपुरी के प्रथम कवि के रूप मे मिले हैं। कहा जाता है कि इन्होने खड़ी-बोली मे भी कविता की थी, पर इनकी रचनाओ के उदाहरण मिले ही नही। अन्य अठारह कवियो मे केवल दो कवि—'सोन' और 'हेम'—व्रजभाषा के है, जिनमे से 'सोन' ने अवधी-भाषा मे भी कविता की थी। शेष सोलह कवि मैथिली के है। इनमे 'गोविन्ददास' की भाषा सूर-तुलसी की परम्परा मे परिगणित होने योग्य प्रतीत होती है। गोविन्ददास के अतिरिक्त कुछ कवियो की रचनाओ मे मैथिली के पुट के साथ-साथ तत्सम और तद्भव शब्द भी है।

भाषा की प्राजलता और भाव-सौष्ठव की दृष्टि से इस शती के उल्लेखनीय कवियो का क्रम इस प्रकार समझ पडता है—गोविन्ददास, महेश ठाकुर, सोन, हेम भूपतिसिंह, भीषम, रतिपति मिश्र पुरन्दर, रामनाथ, दामोदर और गदाधर।

इनकी रचनाएँ अधिकतर शृंगार-रसविषयक और भक्ति-भावनामूलक है। भक्ति-भावनामूलक रचनाओ मे भगवान् कृष्ण और शिव के अतिरिक्त भगवती के प्रति भी श्रद्धा समर्पित की गई है। केवल व्रजभाषा की रचनाओ मे, एक मे आश्रयदाता 'नरेन्द्र' का, प्रताप-वर्णन है और दूसरी मे युद्ध-वर्णन। प्रकृति-वर्णन-सम्बन्धी एकमात्र कविता अवधी की है।

युग-महत्त्व की दृष्टि से यहाँ निम्नलिखित बाते ध्यान देने योग्य है—

१. इस काल मे बिहार के प्रसिद्ध राज्यो मे वनैली-राज्य के सस्थापक राजा दुलारचन्द्र चौधरी के पूर्वज गदाधर हुए।

२. इसमे भारत-प्रसिद्ध दरभगा-राज्य के सस्थापक महामहोपाध्याय महेश ठाकुर और उनके अग्रज दामोदर ठाकुर का आविर्भाव भी हुआ।

३. इस युग को गोविन्ददास के समान यशस्वी महाकवि ने अलकृत किया। मैथिली-साहित्य मे तो इनका स्थान महाकवि विद्यापति के बाद ही आता है। पर उत्कृष्ट हिन्दी-कवियो के समकक्ष भी ये बडे आदर का आसन पाने योग्य है।

४ इसी युग मे रतिपति मिश्र ने 'गीतगोविन्द' का मैथिली मे पद्यवद्ध अनुवाद किया। इसके पहले अनुवाद का कोई ग्रथ नही मिला है।

५ इस युग मे रूपारुण ने अयोध्या में स्वय गोस्वामी तुलसीदासजी के श्रीमुख से श्रीरामचरितमानस का सर्वप्रथम श्रवण किया था।

६. इसी युग मे ज्येष्ठ शुक्ला सप्तमी, शनिवार (सन् १६६६ ई० : वि० १७२३) को अर्धरात्रि मे, सिक्खधर्म के दसवे गुरु श्रीगोविन्दसिंह[1] का जन्म पटना नगर मे हुआ;

---

१. इनके परिचय तथा रचनाओं के उदाहरण के लिए देखिए, 'कविता-कौमुदी' (रामनरेश त्रिपाठी, प्रथम-भाग, सप्तम स०, १९४६ ई०), पृ० ३८०-३८२।

३. इसमे सगीत-सबधी दो पुस्तको का पता चला है—भूधरमिश्र की 'रागमजरी' और लोचन की 'रागतरगिणी'। लोचन तो मध्यकालीन भारतीय सगीत-कला के मर्मज्ञ माने गये है, और उनकी प्रकाशित पुस्तक 'रागतरगिणी' से बहुत-से प्राचीन कवियो के परिचय मिले है।

४. इसमे साहित्यकारो के दो आश्रयदाता भी हुए—दलेलसिंह और महीनाथ ठाकुर। इनमें प्रथम के आश्रय में अनेक प्रसिद्ध कवि थे।

उपर्युक्त विवेचन से प्रत्यक्ष होता है कि इस शती मे दक्षिण-विहार के साहित्यकारो ने भी अपनी रचनाओ से बिहार की साहित्यिक प्रगति का परिचय दिया। इनकी रचनाओ मे भाषा-भाव की परिपक्वता देखकर ऐसा अनुमान करना असगत न होगा कि इनके पहले की शतियो मे भी दक्षिण-बिहार में साहित्य-रचना की सहज प्रवृत्ति रही होगी।

अठारहवीं शती—इस शती मे साहित्यकारो की सख्या ९९ है, जिनमे ६८ उत्तर-विहार के और ३१ दक्षिण-विहार के निवासी है। इनमे सबसे अधिक कवियो की भाषा मैथिली है, किन्तु व्रजभाषा आर अवधी में रचना करनेवाले कवि भी कम नही है। कुछ कवियो ने खडीवोली और भोजपुरी में भी कविता की है। अधिकाश कवियो की भाषा मे मिश्रण की न्यूनाधिक मात्रा पाई जाती है। बिहार की शेष भाषाओ की कोई रचना इस शती मे भी नही मिली है। सम्भव है कि मगही, अगिका आदि भाषाओ के क्षेत्र मे भावी शोध से कुछ ऐसी रचनाएँ प्राप्त हो, जिनसे उन क्षेत्रो की साहित्यिक प्रगति का परिचय मिल सके।

भाषा की स्वच्छता, भाव की मधुरता और छंद-प्रवाह में सुगमता की दृष्टि से इस शती के व्रजभाषा, अवधी, खडीवोली, मैथिली और भोजपुरी के कवियो मे जो उल्लेख्य है, उनके नाम इस प्रकार है।

व्रजभाषा—चन्द्रमौलिमिश्र, दयानिधि, दिनेश द्विवेदी, राधाकृष्ण, रामनारायण प्रसाद, रामप्रसाद, वशराज शर्मा 'वशमणि' और हरिचरणदास।

अवधी—किफायत, कुजनदास, जगन्नाथ, जयरामदास, तुलाराम मिश्र, वेनीराम, राम-रहस्य साहव और रामेश्वरदास।

खड़ीबोली—ईशकवि, गुमानी, चन्द्रकवि, जॉन क्रिश्चियन, व्रह्मदेव नारायण 'व्रह्म', वृन्दावन और साहव रामदास।

मैथिली—अनिरुद्ध, कुलपति, केशव, चक्रपाणि, जयानन्द, नदीपति, निधि उपाध्याय, भजन, भवेश, मनवोध, रमापति उपाध्याय, रामेश्वर, लाल, वेणीदत्त, व्रजनाथ और श्रीकान्त।

भोजपुरी—अजवदास, छत्तरवावा, टेकमनराम, देवाराम, वालखडी और भिनकराम।

प्रस्तुत शती में भी आदिरस और भक्ति-पक्ष की हा रचनाएँ अधिक प्राप्त हुई हैं। निर्गुणोपासना-पद्धति की रचनाएं भी मिली हैं, जिनमे कुछ प्रेममार्गी कवियो की रचनाएं भी है। इसमे भी एक ही कविता 'देवीदास' की प्राकृतिक-दृश्य-चित्रण संवधी मिली है।

युग की महत्ता पर विचार करते समय निम्नलिखित बातें ध्यान में आती है :—

१ इस शती मे निम्नांकित आठ टीकाकार बड़े महत्त्व के हुए है—

(क) इसवी खाँ—'विहारी-सतसई' की टीका—(रसचन्द्रिका)।

(ख) उदयप्रकाश सिंह—'विनय-पत्रिका' की टीका।

(ग) गणेश प्रसाद—'भगवद्गीता' की टीका।

(घ) गोपालशरण सिंह—'रामचरित-मानस' की टीका (मानस-मुक्तावली)।

(च) जीवाराम चौबे—'भक्तमाल' की टीका (रसिक-प्रकाश-भक्तमाल)।

(छ) वंशराज शर्मा 'वंशमणि'—'विहारी-सतसई' की टीका (रसचंद्रिका)।

(ज) श्रीपति—'रघुवंश' की टीका।

(झ) हरिचरनदास—'रसिकप्रिया', 'कवि-प्रिया', 'विहारी सतसई' तथा 'भाषा-भूषण' की टीकाएँ।

२. निम्नांकित सात नाटककार, चार अनुवादक, छह साहित्य-शास्त्रज्ञ एवं रीति-ग्रंथो के रचयिता और दो संगीत-विषयक पुस्तक के प्रणेता इस शती की 'शोभा' बढा रहे हैं—

(क) गोकुलानन्द—मानचरित।

(ख) जयानन्द—रुक्मांगद।

(ग) नन्दीपति—श्रीकृष्णकलिमाला।

(घ) रमापति उपाध्याय—रुक्मिणी-परिणय।[1]

(च) लाल झा—गौरीस्वयंवर नाटक।

(छ) शंकरदत्त—हरिवंश-हंस-नाटक।

(ज) श्रीकान्त-कृष्ण-जन्म।

(क) मनबोध—'हरिवंश' का अनुवाद।

(ख) रामजीभट्ट—'अद्भुत-रामायण' का अनुवाद।

(ग) शम्भुनाथ त्रिवेदी—'बहुलाकथा' का अनुवाद।

(घ) सदलमिश्र—'नासिकेतोपाख्यान, तथा 'अध्यात्मरामायण' का अनुवाद।[2]

(क) गोपाल—काव्यमंजरी और काव्यप्रदीप।

(ख) चन्द्रमौलिमिश्र—उदवन्त-प्रकाश।

(ग) जयरामदास—छन्दविचार।

(घ) दिनेश द्विवेदी—रस-रहस्य और नखशिख।

(च) रामप्रसाद—आनन्दरसकल्पतरु।

(छ) वृन्दावन—छन्दशतक।

(क) आनन्दकिशोरसिंह—रागसरोज।

(ख) राधाकृष्ण—राग-रत्नाकर।

---

१. यह नाटक 'रुक्मिणी-हरण' और 'रुक्मिणी-स्वयंवर' आदि नामों से भी प्रसिद्ध है।

२. लक्ष्मीनाथ परमहंस ने भी कुछ ग्रंथों का अनुवाद किया है। किन्तु, निश्चित मूल ग्रंथों के नाम अनुपलब्ध होने के कारण यहाँ उनका नामोल्लेख नहीं हुआ है।

३. इस शती मे साहित्य और कला के आराधको के आश्रयदाता के रूप मे तीन साहित्यिक नरेश उल्लेख्य है—

(क) आनन्दकिशोर सिंह—(बेतिया, चम्पारन)।

(ख) नवलकिशोर सिंह—(,, ,,)।

(ग) प्रतापसिंह—(मिथिला)।

इस युग मे उपर्युक्त नरेशो के अतिरिक्त कई और भी ऐसे आश्रयदाता नरेन्द्र रहे होगे, जिनका दरबार साहित्यकारो और कलाकारो का केन्द्र होगा। दक्षिण-बिहार मे डुमरांव, टेकारी, सूर्यपुरा, बनैला, रामगढ आदि और उत्तर-बिहार मे हथुआ, माझा, रामनगर आदि के राजा अपने दरबार मे कवियो और कलावतो को आश्रय देने के कारण पुराने समय से ही प्रसिद्ध है। इन राज्यो के केन्द्र-स्थानो में अनुसधान अपेक्षित है। बहुत भव है कि अनुसधायको की तत्परता से कई नये कवियो और कलाकारो का परिचय मिल जाय। यद्यपि इस काल मे कवियो और गुणियो को सार्वजनिक रूप मे प्रोत्साहन देनेवाली संस्थाओ का पता नही चलता, तथापि साहित्यानुरागी और कलाप्रेमी नरेशो की उदारता एव गुणग्राहकता से बहुत-से साहित्य-स्रष्टाओ और कलाकारो को सरस्वती समाराधन की सुविधा मिलती थी।

४. इस शती के महत्त्व को आकर्षक बनानेवालो मे कबीर-पथ के आचार्य रामरहस्य साहब, बिहार के सिद्धपुरुष लक्ष्मीनाथ परमहस, शीर्षस्थानीय भक्त-कवि साहब रामदास, सन्तमत के सरभग-सम्प्रदाय के आदि-कवि छत्तरबाबा, सरभग-सम्प्रदाय मे अपने नाम से एक नया पथ चलानेवाले भिनकदास और हिन्दी की आधुनिक गद्य-शैली के निर्माताओ मे अन्यतम प० सदलमिश्र विशेष गण्यमान्य है। इनमे दक्षिण-बिहार के शास्त्र-पारगत विद्वान् रामरहस्य साहब अपने समय के विद्वान्-सतो मे मूर्द्धन्य समझे गये। इन्होने अपनी विद्वत्ता के प्रताप से कबीर-पथ को बहुत अधिक लोकप्रिय बना दिया। इसी प्रकार उत्तर-बिहार के महात्मा लक्ष्मीनाथ गोसाईं, मिथिला के भक्त-शिरोमणि कवि साहब रामदास के बाद, सबसे बडे भक्त-कवि हुए। मिथिला की कवि-गणना मे महाकवि विद्यापति, गोविन्ददास और उमापति के बाद इनका ही स्थान माना जाता है।

प्रस्तुत काल की उपस्थित रचनाओ से ऐसा विदित होता है कि इस शती मे भक्ति-काल और रीति-काल की प्रवृत्तियाँ ही प्रमुख रही। गद्य-रचना की प्रवृत्ति में भी प्रखरता आई। हिन्दी-ससार मे प्रचलित काव्य-शैलियो का भी पोषण हुआ। भावी शोध मे इस शती के साहित्यिक उत्कर्ष पर विशेष प्रकाश पड़ने की सभावना है।

उपसहार

हिन्दी-साहित्य के इतिहास मे आचार्य प० रामचन्द्र शुक्ल ने युगव्यापी साहित्यिक प्रवृत्तियो का विश्लेषणात्मक विवेचन करते हुए जो काल-विभाजन किया है, वह इस प्रकार है—

आदिकाल (वीरगाथाकाल, संवत् १०५०-१३७५, अर्थात् सन् ९९३-१३१८ ई०)।
पूर्वमध्यकाल (भक्तिकाल, ,, १३७५-१७००, अर्थात् ,, १३१८-१६४३ ई०)।
उत्तरमध्यकाल (रीतिकाल, ,, १७००-१९००, अर्थात् ,, १६४३-१८४३ ई०)।
आधुनिककाल (गद्यकाल, ,, १९००-१९८४, अर्थात् ,, १८४३-१९२७ ई०)।

इस पुस्तक मे ईसवी सन् की शतियो का ही व्यवहार किया गया है। उनके अनुसार उपर्युक्त काल-विभाजन की संगति इस प्रकार बैठती है—

आदिकाल—सिद्धयुग (सातवी से तेरहवी शती तक)

पूर्व मध्यकाल
(भक्तिकाल)
उत्तर मध्यकाल
(रीतिकाल) } —सिद्धोत्तर-युग (चौदहवी से अठारहवी शती तक)

यहां यह काल-विभाजन का संकेत केवल जिज्ञासु पाठको की सुविधा के लिए किया गया है। प्रत्येक शती की साहित्यिक प्रगति का विवरण देते समय उस काल की प्रवृत्तियो पर भी विचार किया जा चुका है। वास्तव मे युगव्यापी प्रवृत्तियो पर विचार करने के लिए प्रचुर मात्रा मे उपलब्ध रचनाओ का अध्ययन आवश्यक है। किन्तु, इस पुस्तक मे जिन साहित्यकारो के परिचय है, उनमे से अधिकाश की रचनाओ के उदाहरण अत्यल्प ही प्राप्त हुए है। फिर भी, प्रत्येक शती पर जो मत प्रकाश किया गया है, उसमें किसी प्रकार का आग्रह नही है।

भाषा-भाव के अनुसार कवियो का जो क्रम निर्धारण हुआ है, उसमे भी मतभेद की संभावना है। संभव है कि भविष्य के शोधो से इस पुस्तक की अनेक स्थापनाएँ परिवर्त्तित हो जायें।

बिहार मे साहित्यिक इतिहास-संबंधी शोध-कार्य पूर्व काल मे कभी नही हुआ। इसलिए इस पुस्तक मे जो बारह सौ वर्षो का इतिहास दिया गया है, वह वास्तव में अन्धकार-युग का इतिहास है। साहित्यकारो के नाम और काम के विषय मे ज्ञान प्राप्त करने के लिए कितना अधिक अधेरे मे टटोलना पड़ा है, यह बतलाना कठिन है। इसीलिए विवश होकर साहित्यकारो के जन्म-मरण-काल की अनिश्चितता के कारण सबके नाम अक्षरानुक्रम से ही रखे गये है। रचनाकाल का भी ठीक पता न लगने के कारण प्रत्येक साहित्यकार उसी शती का माना गया है, जिसमे उसका जन्म हुआ है।

यहां इस इतिहास के संबध मे एक लोकोक्ति का स्मरण होता है—'सौ टाँकी खाकर पत्थर महादेव होता है।' सम्प्रति, यह इतिहास भी एक अनगढ़ शिला-खण्ड के समान है। जब अनुसधान-परायण और साहित्य-कला-मर्मज्ञ विद्वानो की विचार-बुद्धि-रूपी टाँकी इस पर पडेगी, तभी सुडौल होकर इसका रूप निखरेगा।

शकाब्द १८८१, विक्रमाब्द २०१६ — शिवपूजनसहाय

हिन्दी-साहित्य और बिहार

सातवीं शती[1]

ईशानचन्द्र

आपकी उपाधि 'चिन्तातुराङ्क' थी।[2]

सम्राट् हर्षवर्द्धन के काल (६०६-६४८ ई०) में वर्त्तमान संस्कृत के महाकवि बाणभट्ट का निवास-स्थान बिहार-राज्य के शाहाबाद जिले मे, सोन नदी के पश्चिमी किनारे पर, 'प्रीतिकूट' नामक ग्राम बतलाया जाता है। बाण के परम मित्र[3] होने के कारण आपका निवास-स्थान प्रीतिकूट के ही आसपास गया या शाहाबाद जिले मे रहा होगा।

ईशान के पुत्र का नाम 'हरिश्चन्द्र भिषक्' था, ऐसा 'चतुर्भाणी' ग्रंथ मे सगृहीत 'पादताडितकम्' नामक भाण से ज्ञात होता है।[4]

स्वयभूदेव ने अपने 'पउमचरिउ' और 'रिट्ठनेमिचरिउ' मे अपने पूर्ववर्त्ती कवियो के साथ आपका भी स्मरण किया है।[5] अपभ्रंश के ही दूसरे कवि महाकवि पुष्पदन्त के 'अपभ्रंश-महापुराण' मे भी आपका उल्लेख मिलता है।[6] इन उल्लेखो से यह स्पष्ट हो जाता है कि आप निश्चय ही अपभ्रंश अथवा तत्कालीन लोकभाषा के महान् कवि थे। श्रीलोचनप्रसाद पाण्डेय का कहना है कि "इनकी रचना रायपुर तथा नागपुर के सग्रहालयो मे सुरक्षित शिलालेखो मे है। ईशान बड़े शानदार कवि थे, ऐसा उनकी पद्य-रचना व्यक्त करती है। वे महाशिव बालार्जुन की माता, मौखरी-नरेश श्रीसूर्यवर्मा की पुत्री तथा 'प्राक्-परमेश्वर' विशेषण से विभूषित कोसलाधिप श्रीहर्षगुप्त महाराज की महारानी को अपनी प्रतिभा से अमर कर गये है।"[7] श्रीनाथूराम प्रेमी ने आपको सप्तशती की २३५ और ८४ गाथाओ का रचयिता कहा है।[8]

आपकी रचना का हमे कोई उदाहरण नही मिला।

---

१. इस पुस्तक मे 'शती' शब्द का प्रयोग सर्वत्र सन्-ईसवी को ध्यान मे रखकर किया गया है।

२. इति व प्रशस्तिकार. कवि स चिन्तातुराङ्क ईशानः।
स्वनार्थमर्थयन्ति पार्थिवस्ता स्थिति न्युत॥
—शुक्ल-अभिनन्दन-ग्रन्थ (कलकत्ता, सन् १९५५ ई०, इतिहास-पुरातत्त्व-खण्ड)—पृ० २००।

३ 'भाषाकविरीशान परममित्रम्'—हर्षचरितम् (बाणभट्ट), प्रथम उच्छ्वास।

४ हर्षचरित—एक सास्कृतिक अध्ययन (डॉ० वासुदेवशरण अग्रवाल, प्रथम स०, १९५३ ई०)—पृ० ६।

५ जैन-साहित्य और इतिहास (नाथूराम प्रेमी, द्वितीय स०, १९५६ ई०)—पृ० २०९-१०।

६ वही, पृ० ३४८ की पाद-टिप्पणी।

७ 'शुक्ल-अभिनन्दन-ग्रथ (वही, इतिहास-पुरातत्त्व-खण्ड)—पृ० १९९-२००।

८ जैन-साहित्य और इतिहास (वही)—पृ० २४६ की पाद-टिप्पणी।

आठवीं शती

कर्णरीपा

आपके नाम 'कनेरिन', 'आर्यदेव'[1], 'वैरागीनाथ' आदि भी मिलते हैं। कुछ लेखक 'आर्यदेव' और 'कर्णरीपा' को अलग-अलग व्यक्ति मानते हैं। आपका निवास-स्थान नालदा बतलाया गया है।[2] आपके गुरु सिद्ध सरहपाद के शिष्य नागार्जुन थे। सिद्धों की परम्परा मे आपका स्थान १८वाँ है।

तिब्बती 'स्तन्-ग्युर्' में आपके २६ ग्रंथ मिलते है, जिनमें अपभ्रंश या पुरानी हिन्दी मे रचित केवल एक 'निर्विकल्प-प्रकरण' नामक ग्रंथ ही है।

उदाहरण

जहि मण इन्दिअ (प) वण हो णठा।
ण जाणमि अपा कँहि गइ पइठा ॥ध्रु०॥
अकट करुणा डमरुलि बाजअ
आजदेव णिरासे राजइ ॥ध्रु०॥
चान्दरे चान्दकान्ति जिम पतिभासअ
चिअ विकरणे तहि टलि पइसइ ॥ध्रु०॥
छाड़िअ भय घिण लोआचार
चाहन्ते चाहन्ते सुण विआर
आजदेवें सअल विहरिउ
भय घिण दुर णिवारिउ[3]॥ध्रु०॥

---

१. एक 'आर्यदेव' शून्यवाद के आचार्य नागार्जुन के शिष्य भी हो गये हैं, किन्तु वे इनसे भिन्न व्यक्ति थे।
२. गंगा-पुरातत्त्वांक, (जनवरी, १९३३ ई०)—पृ० २२२।
३. वही, पृ० २२२।

कंकालीपा

आपके नाम 'कोकलिपा', 'ककलिपा', 'ककरिपा' भी मिलते हैं।[१] आप मगध-निवासी शूद्र थे।[२] चौरासी सिद्धों में आपका स्थान सातवाँ है। तिब्बती 'स्तन्-ग्युर्' में अपभ्रंश या पुरानी हिन्दी में लिखे आपके एक ही ग्रंथ 'सहजानन्तस्वभाव' का पता चलता[३] है।

आपकी रचना का कोई उदाहरण नहीं मिला।

❀

भुसुकपा

भुसुकपा के अतिरिक्त 'भुसु', 'भुसुकुपा' और 'शान्तिदेव' भी आपके नाम मिलते हैं। अपनी रचना में आपने एक स्थान पर अपनेको 'राउत' (राजकुमार) भी कहा है। "शान्तिदेव किसी राजा के पुत्र थे। राजा का नाम मंजुवर्मा था। ... शिक्षा की समाप्ति पर गुरु ने मध्यदेश जाने का आदेश किया। वहाँ वह अचलसेन नाम रखकर 'राउत' हो गया।"[४] कहते हैं, एक बार मगध-नरेश देवपाल ने आपको अस्तव्यस्त वेष भूषा को देखकर आपको 'भुसुक' कह दिया था तभी से आप 'भुसुकपा' कहलाने लगे। आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी का कहना है कि भूमि में बिल बनाकर शयन करने के कारण आपका यह नाम पड़ा।[५] आचार्य नरेन्द्रदेव ने भी आपका नाम भुसुक लिखा है।[६] आचार्य द्विवेदीजी का अनुमान है कि नाथ-सिद्धों के 'बिलेशयनाथ' बिल

१. पुरातत्त्व-निबन्धावली (श्री राहुल, १९३७ ई०)—पृ० १४८ की पाद-टिप्पणी।
२. गंगा-पुरातत्त्वांक (वही)—पृ० २२१।
३. वही—पृ० २६०।
४. बौद्ध-धर्म-दर्शन (आचार्य नरेन्द्र देव, प्रथम सं०, १९५६ ई०)—पृ० १७३।
५. बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् के सप्तम वार्षिकोत्सव के सभापति-पद से किया गया डॉ० ह० प्र० द्विवेदी का भाषण (मार्च १९५८ ई०)—पृ० ?
६. बौद्ध-धर्म-दर्शन (वही)—पृ० १७३।

मे शयन करनेवाले प्रभु) आपका ही दूसरा नाम है।[१] कुछ विद्वानो ने तिब्बती अनुश्रुतियो के आधार पर आपका जन्म-स्थान सौराष्ट्र या महाराष्ट्र बतलाया है। आचार्य नरेन्द्रदेवजी के अनुसार तारानाथ का कहना है कि आप सुराष्ट्र के राजा के लडके थे।[२] म० म० हरप्रसाद शास्त्री आपके पदो की भाषा-परीक्षा करके इस निष्कर्ष पर आये है कि आपका जन्म बगाल मे किसी स्थल पर हुआ होगा।[३] किन्तु महापण्डित राहुल साकृत्यायन इन सारे अनुमानो मे विश्वास नही करते और कहते है कि वस्तुत आपका जन्म नालन्दा के पास के प्रदेश मे एक क्षत्रिय-राजवश मे हुआ था।[४] डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी भी इसी मत का समर्थन करते है।[५] म० म० हरप्रसाद शास्त्री स्वय भी इस बात को स्वीकार करते है कि भुसुक ने बहुत दिनो तक मगध और नालदा मे रहकर मजुवज्र के निकट उपदेश पाया था।[६] आचार्य नरेन्द्रदेवजी के लेखानुसार "जब उनका भुसुक का) युवराज-पद पर अभिषेक हुआ, तब उनकी माता ने बताया कि राज्य केवल पाप मे हेतु है। माँ ने कहा—तुम वहाँ जाओ, जहाँ बुद्ध और बोधिसत्त्व मिलें। मजुवज्र के पास जाने से तुम को निःश्रेयस् की प्राप्ति होगी।

'१२ वर्षों तक वह गुरु के समीप रहा और मजु श्रीज्ञान का प्रीति-लाभ किया।"[७]

चौरासी सिद्धो मे आपका स्थान ४१वाँ है। 'पुरातत्त्व-निबन्धावली' मे श्रीराहुल ने भुसुकपा के समकालीन राजा देवपाल का समय ८०९-४९ ई० माना है।

तिब्बती 'स्तन्-ग्युर्' मे आपके लिखे दस ग्रथ मिलते है, जिनमें छह शान्तिदेव के नाम से और शेष भुसुकपा के नाम से है। अपभ्रश या पुरानी हिन्दी में आपकी एक ही रचना 'सहजगीति' मिलती है।

उदाहरण

काहेरि घेणि मेलि अच्छहू कीस।
बेढिल हाक पडअ चउदीस॥
अप्पणा मांसे हरिणा बइरी।
खणह ण छाडअ भूसुकु अहेरी।[८]
णिशि अंधारी मूसा करअ अचारा।
अमिअ-भखअ मूसा करअ अहारा॥
मार रे जोइया ! मूसा-पवना !
जेण तूटइ अवणा-गवणा॥[९]

❀

१. आचार्य द्विवेदीजी का उक्त भाषण—पृ० २।
२. बौद्धधर्म-दर्शन (वही)—पृ० १७३।
३ बौद्धगान ओ दोहा (म० म० हर प्रसाद शास्त्री, द्वितीय स० भाद्र १३५८ पदकर्त्तादेर परिचय—पृ० २३।
४. गगापुरातत्वाक (वही)—पृ० २४९ और पुरातत्त्व-निबन्धावली, (वही)—पृ० १७५।
५. आचार्य द्विवेदीजी का उक्त भाषण—पृ० २।
६. बौद्धगान ओ दोहा (वही), (पदकर्त्तादेर परिचय)—पृ० २३।
७. बौद्धधर्म-दर्शन, (वही)—पृ० १७३।
८ हिन्दी-काव्यधारा (राहुल, प्रथम सं०, १९४५ ई०)—पृ० १३२।
९. वही—पृ० १३२।

लीलापा

आपका नाम 'लीलावज्र' भी मिलता है। आपका निवास-स्थान मगध बतलाया गया है।[१] आप सिद्ध सरहपा के शिष्य और जाति के कायस्थ थे। श्रीविनयतोष भट्टाचार्य ने लीलावज्र नाम के एक सिद्ध की चर्चा करते हुए उन्हे भगवती लक्ष्मीङ्कर और विलासवज्र का शिष्य तथा दारिकपा और प्रसिद्ध कवि करुणाचल को लीलावज्र का शिष्य माना है।[२]

श्रीभट्टाचार्य द्वारा उल्लिखित लीलावज्र यदि आपही है, तो आपकी प्रसिद्धि 'वज्राचार्य' के रूप मे थी और आपने बहुतेरे ग्रथो की रचना की थी, जिनमे लगभग नौ के अनुवाद तिब्बती 'स्तन्-ग्युर्' मे सुरक्षित है। इनमे अपभ्रंश या पुरानी हिन्दी मे लिखा एकमात्र 'विकलपरिहार-गीति' ग्रंथ है।

चौरासी सिद्धो मे आपका स्थान दूसरा है। आपकी रचना का कोई उदाहरण नही मिला।

❀

लुइपा

लुइपा के अतिरिक्त लूहिपा' और 'मत्स्यान्त्राद'[३] आदि भी आपके नाम मिलते है। तिब्बती 'स्तन् ग्युर्' मे आपको 'भगलदेशवासी'[४] कहा गया है। म० म० हरप्रसाद शास्त्री[५] तथा डॉ० विनयतोष भट्टाचार्य[६] ने उसी उल्लेख के आधार पर आपको बंगाली (राढदेश-निवासी) माना है। किन्तु महापण्डित राहुल साकृत्यायन आपको मगधदेशवासी ही मानना उचित समझते है।[७] उन्होने लिखा है कि आप महाराज धर्मपाल (७७०-८०६ ई०) के दरबार मे लेखक के रूप मे नियुक्त थे। आप जाति के कायस्थ थे।

आपके गुरु शवरपा बतलाये गये है। कहते है, एक बार जब धर्मपाल अपने राज्य वारेन्द्र प्रदेश मे थे, तब सिद्ध शवरपाद भी विचरण करते हुए उधर जा निकले और एक दिन राजा के यहाँ भिक्षा के लिए पहुँचे। आपको वही शवरपा के दर्शन हुए और

१. गंगा-पुरातत्त्वाक (वही)—पृ० २२१।
२. Budhist Esoterism (Benoytosh Bhattacharya, 1932), P. 78
३ नाथ-सम्प्रदाय (आचार्य डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी, १९५० ई०)—पृ० ४१।
४. डॉ० धर्मवीर भारती ने अपने 'सिद्ध-साहित्य' में लिखा है—'तन्जूर में इन्हें बांगाली कहा गया है—पृ० ५१।
५ बौद्धगान ओ दोहा (वही, पदकर्त्तादेर परिचय)—पृ० २१,।
६. Budhist Esoterism (वही)—P. 69
७. गंगा-पुरातत्त्वाक (वही)—पृ० २२१।

उनमे प्रभावित होकर आप उनके शिष्य हो गये। आपके शिष्यो मे प्रमुख दारिकपा और डोंगीपा कहे गये है, जो क्रमश उत्कल (उडीसा) के राजा और मत्री थे। सिद्धो की परम्परा मे आपका स्थान सर्वप्रथम माना जाता है और आप 'आदिसिद्धाचार्य' कहे जाते है। आप ही 'योगिनी-सहचर्या' के प्रवर्त्तक भी कहे गये है।

स्तन् ग्युर्' मे आपके सात ग्र थ मिलते है, जिनमे पाँच अपभ्र श या पुरानी हिन्दी मे है। इन ग्र थो के नाम इस प्रकार है (१) अभिसमय-विभङ्ग, (२) तत्त्वस्वभाव दोहाकोष, (३) बुद्धोदय, (४) भगवदभिसमय और (५) लुइपाद-गीतिका।

उदाहरण

काश्रा तरुवर पञ्च बिडाल।
चञ्चल चीए पइट्ठो काल॥
दिढ करिश्र महासुह परिमाण।
लुई भणइ गुरु पुच्छिश्र जाण॥
सश्रल समाहिहि काह करिश्रइ।
सुख-दुखे तें निचित मरिश्रइ॥
छड़िश्रठ छंद बांध करण कपटेर श्रास।
सुण्ण-पक्ख भिडि लेहु रे पास॥
भणइ लुई श्राम्हे झाणे दिट्ठा।
धमण-चमण वेणि उपरि बइट्ठा॥[1]

❀

शबरपा

आपके नाम 'शवरापा', 'महाशवर', 'शवरेश्वर' या 'शबरीश्वर, 'नव-सरह' आदि भी मिलते है। कहते हैं, शवरो (कोल-भीलो) की तरह वेश-भूषा होने के कारण आप 'शवरपा' कहे जाने लगे। 'लोकी' (पद्मावती) और 'गुना' (ज्ञानवती) नामकी आपकी दो बहने थी, जिनसे आपने महामुद्रा की साधना की थी। आप जाति के क्षत्रिय थे।

'सिद्ध-साहित्य' के लेखक आपका जन्म-स्थान बगाल मानते है।[2] किन्तु महापण्डित राहुल साकृत्यायन ने आपका जन्म-स्थान एक स्थान पर विक्रमशिला[3] और दूसरे स्थान पर मगध[4] बतलाया है। वस्तुत आप इन्ही मे से किसी स्थान के निवासी होगे। सिद्ध कण्हपा ने आपका स्मरण बडे सम्मान और श्रद्धा के साथ किया है।

---

१. हिन्दी-काव्य-धारा (वही)—पृ० १३६—१३८।
२ सिद्ध-साहित्य (धर्मवीर भारती, प्रथम स०, १९५५ ई०)—पृ० ५०।
३. पुरातत्त्व-निबन्धावली (वही)—पृ० १४८।
४. गगा-पुरातत्त्वाक (वही)—पृ० २२१।

इसा से यह स्पष्ट हो जाता है कि आप बड़े प्रभावशाली सिद्ध थे। चौरासी सिद्धो मे आपका स्थान पाँचवाँ और सिद्ध-सरहपा की शिष्य-परम्परा मे तीसरा माना गया है। किसी-किसी ने आपके गुरु का नाम 'नागार्जुन' भी बतलाया है। आपका प्रमुख केन्द्र-स्थान आन्ध्र का 'श्रीपर्वत' था। आपने ही वज्रयोगिनी-साधना का प्रवर्त्तन किया था। आपके शिष्यो मे पालवशी राजा धर्मपाल (सन् ७७०-८०६ ई०) के प्रमुख लेखक सिद्ध लुहिपा ही वतलाये जाते है।[१]

तिव्वती 'स्तन्-ग्युर्' मे आपके २६ ग्रंथ मिलते है[२], जिनमे निम्नलिखित केवल छह ही अपभ्रंश या पुरानी हिन्दी मे लिखित है—(१) चित्तगुह्य गम्भीरार्थ-गीति, (२) महामुद्रा-वज्रगीति (३) शून्यता-दृष्टि, (४) षडगयोग, (५) सहज-सवर-स्वाधिष्ठान और (६) सहजोपदेश-स्वाधिष्ठान।

उदाहरण

गअणत गअणत तइला वाड्ही हेञ्चे कुराडी।
कण्ठे नैरामणि बालि जागन्ते उपाडी॥ ध्रु०॥

छाडु छाड माआ मोहा विषमे दुन्दोली।
महासुहे विलसन्ति शवरो लइआ सुणमेहेली॥ ध्रु०॥

हेरि ये मेरी तइला बाडी खसमे समतुला।
षुकडए सेरे कपासु फटिला॥ ध्रु०॥

तइला वाडिर पासेर जोहणा वाडो ताएला।
फिटेलि अन्धारि रे आकाश फुलिआ[३]॥ ध्रु०॥

१. महापंडित राहुल सांकृत्यायन ने लिखा है कि १०वीं शताब्दी में भी एक शबरपा हुए थे, जो मैत्रीपा या अवधूतीपा के गुरु थे। —पुरातत्त्व-निबंधावली (वही)—पृ० १७१।

२. श्री राहुलजी का कहना है कि दसवीं शताब्दी के शबरपा के ग्रंथ इन्हीं में शामिल हैं। (वही)—पृ० १७३।

३. गंगा-पुरातत्त्वांक (वही)—पृ० २४८।

सरहपा

आपका नाम 'राहुलभद्र' था। सिद्धि प्राप्त करने के पश्चात् आप 'सरहपा' कहलाये। सरहपा के अतिरिक्त 'सरोजवज्र', 'सरोरुहवज्र', 'पद्म' तथा 'पद्मवज्र' भी आपके नाम मिलते है।[१] कहते है, आपने शर (वाण) वनानेवाली किसी कन्या को 'महामुद्रा' वनाकर सिद्धि-लाभ किया और स्वय भी शर वनाने का काम करने लगे थे। इसी कारण आप 'सरह' कहलाये। एक दूसरी तिव्वती अनुश्रुति के आधार पर आपका जन्म-स्थान उडीसा वतलाया गया है।[२] महापडित राहुल साकृत्यायन ने आपका निवास-स्थान नालदा और प्राच्य देश की 'राज्ञी नगरी'[३] दोनो वतलाया है। आपका जन्म एक ब्राह्मण और डाकिनी के योग से हुआ था। महापण्डित राहुल साकृत्यायन ने 'दोहा-कोश'[४] मे ही 'राज्ञी-नगरी' के 'भगल'[५] या 'पुड्रवर्द्धन'[६] प्रदेश में होने का अनुमान किया है। उक्त स्थान विहार-राज्य के ही अन्तर्गत है।

यद्यपि वाल्य काल से ही आप वेदादि के ज्ञाता हो गये थे, तथापि अनेक वर्षों तक आप नालन्दा-विहार के छात्र रहे। यहाँ शान्तिरक्षित के शिष्य हरिभद्र भी आपके अध्यापक थे। अध्ययन की अवधि समाप्त होने पर वही प्रधान पुरोहित के रूप मे आपकी नियुक्ति हो गई। नालन्दा से अवकाश प्राप्त कर आपने अपना प्रमुख केन्द्र 'श्रीपर्वत' (जि० गुण्टूर, आन्ध्र) नामक एक स्थान पर वनाया।

आपने वौद्धधर्म की प्राचीन परम्पराओ एवं रूढिगत धारणाओ के विरुद्ध विद्रोह किया और सहज-जीवन यापन करने का उपदेश दिया। श्री राहुलजी ने आपके सम्वन्ध मे इस प्रकार लिखा है—"आप (सरह) उन चौरासी सिद्धो के आदिपुरुष है, जिन्होने लोक-भाषा की अपनी अद्भुत कविताओ तथा विचित्र रहन सहन और योग-क्रियाओ से वज्रयान को एक सार्वजनीन धर्म वना दिया। इसके पूर्व वह, महायान की भाँति,

---

१. वौद्ध गान ओ दोहा (वही, पदकर्त्तादेर परिचय)—पृ० २६।
२. सिद्ध-साहित्य (वही)—पृ० ४।
३ पुरातत्त्व-निवन्धावली (वही)—पृ० १४८।
४ दोहाकोश (श्री राहुल, प्रथम स०, १९५७ ई०)—पृ० १०।
५. (वही) भागलपुर।
६. (क) पूर्वोत्तर विहार और पश्चिमोत्तर वगाल।
(ख) देखिए 'साहित्य', वर्ष १, अक १, मार्च, १९५० ई० में श्रीमथुराप्रसाद दीक्षित का 'पुण्ड्रवर्द्धन और उसकी राजधानी' शीर्षक लेख—पृ० ४३ से ५२ तक।

संस्कृत का आश्रय ले, गुप्त रीति से फैल रहा था।'[1] इस प्रकार, आप सहजयान-सम्प्रदाय का प्रवर्त्तन कर चौरासी सिद्धो मे आदि-सिद्ध कहलाये। यद्यपि सिद्धो की प्रचलित तालिका के अनुसार आपका स्थान छठा है।

आपने प्राच्यदेश के राजा चन्दनपाल और उनकी पाँच हजार प्रजा को अपने मत मे दीक्षित किया था। यो आपके शिष्यो मे शवरपाद तथा नागार्जुन[2] प्रमुख रूप से उल्लेखनीय हैं।

तिब्बती 'स्तन्-ग्युर' मे आपके ३२ ग्रन्थ सगृहीत है। इनमे निम्नलिखित १६ ग्रन्थ अपभ्रंश या पुरानी हिन्दी मे हैं, जिनके अनुवाद भोट-भाषा मे मिलते हैं— (१) दोहाकोश-गीति, (२) दोहाकोश नाम-चर्यागीति, (३) दोहाकोशोपदेश-गीति, (४) क. ख. दोहानाम, (५) क. ख. दोहा-टिप्पण, (६) कायकोशामृतवज्र गीति, (७) वाक्कोशरुचिरस्वरवज्र-गीति, (८) चित्तकोशअजवज्र-गीति, (९) कायवाक्चित्तामनसिकार, (१०) दोहाकोश महामुद्रोपदेश, (११) द्वादशोपदेशगाथा, (१२) स्वाधिष्ठानक्रम, (१३) तत्त्वोपदेशशिखर-दोहागीतिका (१४) भावनादृष्टिचर्याफल-दोहागीति, (१५) वसन्ततिलकदोहाकोश-गीतिका, (१६) महामुद्रोपदेशवज्रगुह्य-गीति। उक्त रचनाओ मे सबसे अधिक प्रसिद्धि 'दोहाकोश' को ही मिली है।

उदाहरण

जहि मण पवण ण संचरइ, रवि-ससि णाहि पवेस।
तहि वढ चित्त विसाम करु, सरहे कहिअ उएस॥[3]
एक्क करु मा वेणिण करु, मा करु विणिण विसेस।
एक्कें रंगे रञ्जिया, तिहुअण सअलासेस॥[4]
एथु से सरसइ सोवणाह, एथु से गङ्गासाअरु।
वाराणसि पआग एथु, से चान्द - दिवाअरु॥[5]
खेत्त पिट्ठ उअपिट्ठ, एथु मइ भमिअ सिमट्ठउ।
देहासरिस तित्थ, मइ सुणउ ण दिट्ठउ॥[6]

❀

---

१ पुरातत्त्व-निबन्धावली (वही), पृ० १४७।
२. महायान के प्रवर्त्तक और सम्राट् सातवाहन के 'सुहृद्' नागार्जुन से ये भिन्न हैं। वे ईसवी-सन् के आरम्भ में हुए थे।
३ दोहाकोश (वही), पृ० १२।
४. वही, पृ० १२।
५. वही, पृ० २२।
६. वही, पृ० २२।

नवीं शती

कम्बलपा

आप 'कम्बलाम्बरपा', 'कामरीपा', 'कमरिपा' आदि नामो से भी प्रसिद्ध है। म० म० हरप्रसाद शास्त्री ने आपको बँगला-कवि माना है।[1] महापण्डित राहुल सांकृत्यायन ने आपका निवासस्थान 'ओडिविश'[2] (उडीसा) बतलाया है। किन्तु डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी के अनुसार आप वस्तुत मगध के ब्राह्मण थे और दीर्घकाल तक उड्डियान में रहे थे।[3]

आपके गुरु नालंदा के 'वज्रघण्टापा' थे, जो अनेक वर्षो तक उडीसा मे रहकर अपने धर्म का प्रचार करते रहे। कहते हैं, अपने गुरु के साथ आप भी बहुत दिनो तक वही रहे, जहाँ उडीसा के राजा इन्द्रभूति ने आपका शिष्यत्व ग्रहण किया। इन्द्रभूति के अतिरिक्त आपके शिष्यो मे 'जालधरपा' की भी गणना की जाती है। चौरासी सिद्धो मे आपका स्थान ३०वाँ है।

आप बौद्ध-दर्शन के एक अच्छे पण्डित थे। भोट-भाषा मे 'प्रज्ञापारमिता'-दर्शन पर आपके चार ग्रंथ प्राप्य हैं। तंत्र पर आपके ग्यारह ग्रंथ मिलते है, जिनमें निम्नलिखित तीन प्राचीन हिन्दी मे हे—(१) असम्बन्ध दृष्टि, (२) असम्बन्ध सर्ग-दृष्टि, (३) कम्बल-गीतिका।

उदाहरण

सोने भरिती करुणा नावी, रूपा थोइ महिके ठावी ॥ ध्रु० ॥
वाहतु कामलि गअण उवेसें, गेली जाम बहु-उइ काइसें ॥ ध्रु० ॥
खुन्टि उपाडी मेलिलि काच्छि, वाहतु कामलि सद्‌गुरु पुच्छि ॥ ध्रु० ॥
माङ्गत चाहिले चउदिस चाहअ, केडुआल नहि कें कि बाहब के पारअ ॥ ध्रु० ॥
वाम दाहिण चापी मिलि मागा, बाटत मिलिल महासुह सङ्गा ॥ ध्रु० ॥[4]

❀

---

१. बौद्धगान ओ दोहा (वही, पदकर्त्तादेर परिचय), पृ० २७।
२. गंगा-पुरातत्त्वांक (वही), पृ० २५२।
३. नाथ-सम्प्रदाय (वही), पृ० १४१।
४. गंगा-पुरातत्त्वांक (वही), पृ० २५२।

घण्टापा

आपका नाम 'वज्रघण्टापा' भी मिलता है। महापण्डित राहुल साकृत्यायन ने आपको 'वारेन्द्र' (उत्तर-बगाल) का निवासी क्षत्रिय बतलाया है। किन्तु 'चतुरशीतिसिद्धप्रवृत्ति' नामक ग्रथ (तन्जूर ८६/१) मे आपको नालन्दा-निवासी कहा गया है।[१]

आपके गुरु का नाम 'दारिकपा' था।[२] आपके शिष्यो मे प्रमुख थे—कूर्मपाद और कम्बलपाद।[३] चौरासी सिद्धो मे आपका स्थान ५२वाँ है।

तिब्बती 'स्तन्-ग्युर' (४८/७८) मे अपभ्रश या पुरानी-हिन्दी मे आपका एक ग्रथ 'आलिकालिमत्र-ज्ञान' सगृहीत है।[४] आपकी रचना का कोई उदाहरण नही मिला।

❀

चर्पटीपा

आपका नाम 'पचरीपा' भी मिलता है। श्रीराहुलजीने आपको बँहगी बेचनेवाला 'कहार' लिखा है। उन्होने ही आपका निवास स्थान चम्पा (भागलपुर) बतलाया है और आपको मीनापा का गुरु कहा है।[५] मीनापा पालवशी नरेश देवपाल के समय मे थे, अत आपका समय भी उसी के आस-पास होगा।

'नाथ-परम्परा' मे आप गोरखनाथ के शिष्य माने जाते है।[६]

चौरासी सिद्धो मे आपका स्थान ५९वाँ है।

तिब्बती 'स्तन्-ग्युर' (४८।८५) मे अपभ्रश या पुरानी-हिन्दी मे लिखा आपका एक ग्रथ 'चतुर्भूतभवाभिवासनक्रम'[७] सगृहीत है। आपकी रचना का कोई उदाहरण नही मिला।

❀

---

१. गगा-पुरातत्त्वाक (वही), पृ० २२३।
२. पुरातत्त्व-निबन्धावली (वही), पृ० १८०।
३. वही, पृ० १८२-१८३।
४. वही, पृ० २००।
५. गगा-पुरातत्त्वाक (वही), पृ० २२३।
६. नाथ-सम्प्रदाय (वही), पृ० १४४।
७. पुरातत्त्व-निबन्धावली (वही), पृ० २०८।

महयोगिनी चिता का शिष्य बतलाया है।[१] आपके शिष्यो मे प्रमुख थे कण्हपा। चौरासी सिद्धो मे आपका स्थान चौथा है। आपने 'कौल-पद्धति' का भी विशेष प्रचार किया था।

तिब्बती 'स्तन्-ग्युर' मे डोम्भिपाद के नाम से २१ ग्रथ सगृहीत है, जिनमे केवल तीन ही अपभ्रश या प्राचीन हिन्दी के है। राहुलजी के मतानुसार दो डोम्भिपा हुए है, अतः ये ग्रन्थ किसके है, कहना कठिन है। इन ग्रथो के नाम इस प्रकार है—(१) अक्षरद्विकोपदेश, (२) डोम्बिगीतिका और (३) नाडी-बिन्दुद्वारे योगचर्या। इन ग्रथो के अतिरिक्त 'सहज-सिद्धि' नामक आपका एक और ग्रथ ओरिएण्टल इस्टिच्यूट (पूना) मे सुरक्षित है।[२]

उदाहरण

गगा-जउँना-मोझे बहइ नाई। तँहि बुडिली मातंगी पोइआ लोलैँ पार करेइ ॥
वाहतु डोम्बी वाहलो डोम्बो, बाट भइल उछारा। सद्‌गुरु पाअ-प(सा)ए जाइब पुनुजिनउरा ॥
पाँच केडुआल पडन्ते माँगे पीठत काच्छी बाँधी। गअण-दुंखोले सिंचहू पाणी न पइसइ साँधी ॥
चंद-सूज्ज दुइ चका सिठि-संहार-पुलिन्दा। वाम दहिन दुइ माग न चेवइ वाहतु छंदा ॥
कवडी न लेइ वोडी न लेइ सुच्छडे पार करई। जो रथे चडिया बाहब न जा(न)इ कूलेँ कूल बुडाई ॥[३]

धामपा

आपके नाम 'धर्मपा' और 'गुण्डरीपाद'[४] भी मिलते है। किन्तु सिद्ध-साहित्य (पृ० ५६) के अनुसार डॉ० बागची गुण्डुरीपाद नाम को भ्रमात्मक बतलाते है। श्रीराहुलजी भी पुरातत्त्व-निबधावली (पृ० १८६) मे गुण्डुरीपाद को एक अलग सिद्ध मानते हैं, जिनका सिद्धो में ५५वाँ स्थान है।

आपका निवास-स्थान विक्रमशिला (भागलपुर) बतलाया गया है। आप ब्राह्मण-कुल के थे और पाल-नरेश विग्रहपाल और नारायणपाल के समकालीन कहे गये है।[५] श्रीराहुलजी के अनुसार आपके गुरु कण्हपा तथा जालधरपा थे। डॉ० सुकुमार सेन ने 'चाटिलपा' को भी आपका गुरु माना है, पर कोई प्रमाण नही दिया है।[६] चौरासी सिद्धो मे आपका स्थान ३६वाँ है।

---

१. Buddhist Esoterism (वही), P. 79.
२. सिद्ध-साहित्य (वही), पृ० ५२।
३. हिन्दी-काव्यधारा (वही), पृ० १४०।
४. बौद्ध गान ओ दोहा (वही, पदकर्त्तादेर परिचय), पृ० २५।
५ हिन्दी-काव्यधारा (वही), पृ० १६६।
६ सिद्ध-साहित्य (वही), पृ० ५६।

अपभ्रंश या पुरानी-हिन्दी मे लिखित आपके तीन ग्रंथ मिले है[1] —(१) कालिभावना-मार्ग, (२) सुगतदृष्टि-गीतिका और (३) हुँकार-चित्त-बिन्दु-भावनाक्रम ।

उदाहरण

कम-कुलिश माँझे भमई लोली ।
समता-जोएं जलिल चण्डाली ।।
डाह डोम्बिघरे लागेलि आगी ।
ससहर लइ सिंचहु पाणी ।।
णउ खरे जाला धूम ण दीसइ ।
मेरु-सिहर लइ गअण पईसइ ।।
दाढइ हरि-हर-ब्रह्मा नाडा (भट्टा) ।
दाढइ नव-गुण-शासन पाडा (पट्टा) ।।
भणइ धाम फुड लेहुरे जाणी ।
पञ्चनाले उठे (ऊध) गेल पाणी ।।[2]

❀

महीपा

आपके नाम 'महिलपा' और 'महीधरपा' भी है। 'महित्ता', 'माहीन्दा' तथा 'महिला' नाम सिद्ध-साहित्य (पृ० ५६) के अनुसार, लिपि-भेद के कारण, है। आपका जन्म-स्थान मगध बतलाया गया है।[3] आप जाति के शूद्र थे ।

आप गृहस्थावस्था से ही सत्संग की ओर विशेष रूप से प्रवृत्त थे। पीछे आपने सिद्ध 'कण्हपा' का शिष्यत्व ग्रहण कर सिद्धि प्राप्त की। चौरासी सिद्धो मे आपका स्थान ३७वाँ है।

तिब्बती 'स्तन्-ग्युर' मे आपके बहुत-से ग्रंथ मिलते हैं, जिनमे एक 'वायुतत्त्व-दोहागीतिका' ही अपभ्रंश या पुरानी-हिन्दी मे है।

उदाहरण

तीनिए पाटें लागेलि अणहअ सन घण गाजइ ।
ता सुनि मार भयकर विसअ-मंडल सअल भाजइ ।।
मातेल चीअ गअन्दा धावइ ।
निरंतर गअणंत तुसें (रवि-ससि) घोलइ ।।

---

1. पुरातत्त्व-निबन्धावली (वही), पृ० २०१।
2. हिन्दी-काव्यधारा (वही), पृ० १६६-१६८।
3. पुरातत्त्व-निबन्धावली (वही), पृ० १४१।

पाप-पुण्ण बेण्णि तोडिअ सिकल मोडिअ खम्भा-ठाणा ।
गअण-टाकली लागेलि रे चित्त पइट्ठ णिवाणा ॥
महरस पाने मातेल रे तिहुअन सअल उपखी ।
पंच विसअ-नायक रे विपख कोवि न देखी ॥
खर रवि-किरण सतापे रे गअणाङ्गण गइ पइठ ।
भणन्ति महिआ मइ एथु बुडन्ते किम्पि न दिठ ॥[1]

मेकोपा

आप मंगल' (भागलपुर) के निवासी वणिक् बतलाये गये है ।[2] चौरासी सिद्धो मे आपका स्थान ४३वाँ है ।

तिब्बती स्तन्-ग्युर' मे अपभ्रंश या पुरानी हिन्दी मे लिखित एक ग्रंथ 'चित्त-चैतन्य-शमनोपाय' मिलता है । आपकी रचना का कोई उदाहरण नही मिला ।

विरूपा

आपके नाम 'विरूपाद', कालविरूप' और 'धर्मपाल' भी मिलते है ।[3] आपका निवास-स्थान त्रिउर बतलाया गया है । महापण्डित राहुल साकृत्यायन 'त्रिउर' को देवपाल का देश मगध' मानते है ।[4] कुछ लेखको ने 'त्रिपुर' को 'त्रिपुरा' माना है ।[5]

यह ठीक नही ज्ञात होता ।

आपने गुरु सिद्ध नागबोधि से 'श्रीपर्वत' पर दीक्षा ली थी ।[6] आपके शिष्यो मे प्रमुख थे सिद्ध डोम्बिपा और कण्हपा । आपकी शिक्षा नालन्दा, बिहार मे हुई थी । शिक्षा के उपरान्त आप ने श्रीपर्वत, देवीकोट, उडीसा, चीन आदि कई स्थानो का पर्यटन किया । आपके जैसे पर्यटक कम ही 'सिद्ध' हुए है । चौरासी सिद्धो मे आपका स्थान तीसरा है । आप 'यमारितन्त्र' के भी प्रवर्त्तक कहे जाते है ।

---

1. हिन्दी-काव्यधारा (वही), पृ० १६४ ।
2. गंगा-पुरातत्त्वांक (वही), पृ० २२३ ।
3. सिद्ध-साहित्य (वही), पृ० ५८ ।
4. गंगा-पुरातत्त्वांक (वही), पृ० २२१ ।
5. सिद्ध-साहित्य (वही), पृ० ५८
6. पुरातत्त्व-निबन्धावली (वही), पृ० १७८

तिब्बती 'स्तन्-ग्युर्' में आपके १८ ग्रंथ मिलते हैं, जिनमें आठ ही अपभ्रंश या पुरानी हिन्दी के हैं। उनके नाम इस प्रकार हैं—(१) अमृतसिद्धि, (२) दोहाकोश, (३) दोहाकोश-गीति-कर्मचण्डालिका, (४) विरूप-गीतिका, (५) विरूप-वज्रगीतिका, (६) विरूप-पदचतुरशीति, (७) मार्गफलान्विताववादक और (८) सुनीष्प्रपञ्चतत्त्वोपदेश।

उदाहरण

एक से शुण्डिनि दुइ घरे सान्धअ,
चीअण वाकलअ वारुणी बान्धअ ॥ ध्रु० ॥
सहजे थिर करी वारुणी सान्धे,
जे अजरामर होइ दिट कान्ध ॥ ध्रु० ॥
दशमि दुआरत चिह्न देखइआ,
आइल गराहक अपने बहिआ ॥ ध्रु० ॥
चउशठि घड़िये देट पसारा,
पइठेल गराहक नाहि निसारा ॥ ध्रु० ॥
एक स दुली सरुइ नाल,
भणन्ति विरुआ थिर करि चाल ॥ ध्रु० ॥[1]

वीणापा

कहते हैं, आप वीणा बजा-बजाकर अपने पद गाया करते थे, इसी कारण आपका नाम 'वीणापा' पड़ा। महापण्डित राहुल सांकृत्यायन ने आपका जन्म स्थान 'गौडदेश' (बिहार) बतलाया है।[2] पालवंशी नरेशों की एक उपाधि 'गौड़ेश्वर' भी थी। उनके आदि पूर्वज बंगाल-निवासी थे। वे लोग बंगाल और बिहार दोनों के शासक थे। धर्मपाल के समय से वे बिहार में ही रह गये थे और उनकी राजधानी पटना जिले के बिहारशरीफ में थी। इसीलिए श्रीराहुलजी ने गौड़ को बिहार माना है।[3]

म० म० हरप्रसाद शास्त्री ने आपको 'विरूपा' का अनुचर बतलाया है।[4] आप भद्रपा के शिष्य कहे गये हैं।[5] 'सिद्ध-साहित्य' (पृ० ५८) के अनुसार आप [illegible] के शिष्य थे। मिश्रबंधुओं के अनुसार आप [illegible] के भी शिष्य थे।[6] चौरासी सिद्धों में आपका स्थान ११वां है।

१. पुरातत्त्व-निबन्धावली, (वही), पृ० १७६।
२. गंगा-पुरातत्त्वांक (वही), पृ० २२१।
३. 'पालवंशी राजा गौड़ेश्वर कहे जाते थे। उनकी राजधानी पटना जिले के बिहारशरीफ में थी। नालन्दा के पास होने के कारण, भोटिया-ग्रंथों में, अक्सर उन्हें नालन्दा का राजा भी कहा गया है।'—पुरातत्त्व-निबन्धावली (वही), पृ० १५७।
४. बौद्धगान ओ दोहा ([illegible]), पृ० ३१।
५. गंगा-पुरातत्त्वांक (वही) पृ० २२१।
६. मिश्रबन्धु-विनोद ([illegible], प्रथम भाग, चतुर्थ सं०, १९९४ वि०), पृ० ८१।

तिव्वती 'स्तन्-ग्युर्' मे आपके तीन ग्रंथ मिलते है, जिनमे 'वज्रडाकिनी-निष्पन्न-क्रम' ही अपभ्रंश या पुरानी हिन्दी का ज्ञात होता है।

उदाहरण

सुज लाउ ससि लागेलि तान्तो, अणहा दाण्डी वाकि कि अत अवधूती ।। ध्रु० ।।
बाजइ अलो सहि हरु अवीणा, सुन तान्ति धनि विलसइ रुणा ।। ध्रु० ।।
आलिकालि वेणि सरि सुणेआ, गअवर समरस सान्धि गुणिआ ।। ध्रु० ।।
जवे करह करहक लेपि चिउ, बातिश तान्ति धनि सएल विआपिउ ।। ध्रु० ।।
नाचन्ति वाजिल गान्ति देवी, बुद्धनाटक विसमा होई ।। ध्रु० ।।[१]

❀

दसवीं शती

कंकणपा

आपके नाम 'कोकणपा' और 'कोकदत्त' भी मिलते है।[२] आप विष्णुनगर (मगध) के एक राजवंश मे उत्पन्न हुए थे।[३] महामहोपाध्याय प० हरप्रसाद शास्त्री ने आपको कम्बल या कम्बलाम्बरपा का वंशधर कहा है।[४] चौरासी सिद्धो मे आपका स्थान २९वाँ है। तिब्बती 'स्तन्-ग्युर्' मे अपभ्रंश या पुरानी हिन्दी मे लिखित आपका एकमात्र ग्रंथ 'चर्यादोहाकोशगीतिका' संगृहीत है।

उदाहरण

सुने सुन मिलिआ जबे॑, सअल धाम उइआ तबे॑ ।। ध्रु० ।।
आच्छु हुं चउखण सबोही, माझ निरोह अणुअर बोही ।। ध्रु० ।।
विंदु-णाद णहि ए पइठा, अण चाहन्ते आण विणठा ।। ध्रु० ।।
जथो आइले॑सि तथा जान, मासं, थामी सअल विहाण ।। ध्रु० ।।
भणई कङ्कण कलएल सादे॑, सर्व विच्छुरिल तथतानादे॑[५] ।। ध्रु० ।।

❀

---

१. गंगा-पुरातत्त्वांक (वही), पृ० २५० ।
२. सिद्ध-साहित्य (वही), पृ० ५७ ।
३. गंगा-पुरातत्त्वांक (वही), पृ० २५७ और सिद्ध-साहित्य (वही), पृ० ५७ ।
४. बौद्धगान ओ दोहा (वही, पदकर्त्तादेर-परिचय), पृ० २७ ।
५. गंगा-पुरातत्त्वांक (वही), पृ० २८७ ।

चमरिपा

आपका निवास-स्थान विष्णुनगर[1] (मगध) बतलाया गया है। आप जाति के चर्मकार और प्रमुख सिद्ध जालंधर के शिष्य माने जाते हैं।[2] आप पालवंशी राजा महिपाल (९८८— १०३८ ई०) के समय में हुए। चौरासी सिद्धों में आपका स्थान १४वाँ है। तिब्बती 'स्तन्-ग्युर्' में अपभ्रंश या पुरानी हिन्दी में रचित आपका एकमात्र ग्रंथ 'प्रज्ञोपायविनिश्चय-समुदय' संगृहीत है। आपकी रचना का कोई उदाहरण नहीं मिला।

❀

छत्रपा

महापण्डित राहुल सांकृत्यायन ने आपका निवास-स्थान एक जगह सन्धोनगर[3] और दूसरी जगह भिगुनगर[4] बतलाया है। अनुमान के आधार पर आपका भिगुनगर-निवासी ही होना ठीक ज्ञात होता है। यह स्थान मगध में कहीं था। आप जाति के शूद्र थे। चौरासी सिद्धों में आपका स्थान तेईसवाँ है।

तिब्बती 'स्तन् ग्युर्' में आपका अपभ्रंश या पुरानी हिन्दी में रचित एकमात्र ग्रंथ 'शून्यता-करुणा-दृष्टि' मिलता है। आपकी रचना का कोई उदाहरण नहीं मिला।

❀

---

1. यह 'विष्णुनगर', हमारे अनुमान के अनुसार, 'गया' जिले का वर्तमान 'विष्णुपुर' गाँव है, जहाँ से बहुत-सी प्राचीन बुद्ध मूर्तियाँ प्राप्त हुई हैं और जो पटना-संग्रहालय में सुरक्षित हैं।
2. गंगा-पुरातत्त्वांक (वही), पृ० २२१।
3. पुरातत्त्व-निबंधावली (वही), पृ० १५०।
4. गंगा-पुरातत्त्वांक (वही), पृ० २२२।

तिलोपा

सिद्धि प्राप्त करने के पूर्व आपका नाम 'भिक्षु प्रज्ञाभद्र' था। कहते है, सिद्धाचार मे आप तिल कूटा करते थे, इसी कारण आपका नाम 'तिलोपा' पडा। आप पालवंशी राजा राज्यपाल द्वितीय और विग्रहपाल द्वितीय (९०८-४०-६०-९८० ई०) के समय में हुए थे। डॉ० विनयतोष भट्टाचार्य ने आपका जन्म-स्थान 'चिटागाँव' बतलाया है।[१] वस्तुतः आपका जन्म मगध के किसी 'भिगुनगर' नामक स्थान मे एक ब्राह्मण-कुल में हुआ था।[२] आप कही लुईपा के वशज और कही 'राजवशोत्पन्न' बतलाये गये है।[३] आपके गुरु विजयपा या अन्तरपा और आपके शिष्य नारोपा (नरोपन्त) कहे गये है।[४] आपने एक तेलिन योगिनी से समागम कर सिद्धि लाभ की थी[५], जिस कारण कुछ दिनो तक आप संघ से निष्कासित हुए थे।[५] यवनो के प्रति विरोध की भावना भी आप मे अत्यधिक थी[६], ऐसा कहा जाता है। चौरासी सिद्धो में आपका स्थान २२वाँ है।

तिब्बता 'स्तन्-ग्युर्' मे आपके ग्यारह ग्रन्थ सगृहीत है, जिनमें निम्नलिखित चार अपभ्रंश या पुरानी हिन्दी मे है—(१) अन्तर्बाह्य-विषय-निवृत्ति-भावना-क्रम, (२) करुणाभावनाधिष्ठान, (३) दोहाकोश और (४) महामुद्रोपदेश।

उदाहरण

तित्थ तपोवण म करहु सेवा।
देह सुचीहि ण सन्ति पावा॥ १९॥
बम्हा-विहुणु-महेसुर देवा।
बोहिसत्व मा करहू सेवा॥ २०॥
देव म पूजहु तित्थ ण जावा।
देवपुजाही मोक्ख ण पावा॥ २१॥
बुद्ध अराहहु अविकल चित्तें।
भव णिव्वाणे म करहु थित्तें॥ २२॥[७]

❀

१. Buddhist Esoterism (वही), P. 82.
२. हिन्दी-काव्यधारा (वही), पृ० १७२।
३. सिद्ध-साहित्य (वही), पृ० ६०।
४. पुरातत्त्व-निबन्धावली, (वही), पृ० १९४।
५. सिद्ध-साहित्य (वही), पृ० ६०।
६. वही, पृ० ६०।
७ हिन्दी-काव्यधारा (वही), पृ० १७४।

थगनपा

आपका नाम 'स्वगण' भी मिलता है[१]। आपका निवास-स्थान 'पूर्व-भारत' बतलाया गया है[२]। महामहोपाध्याय हरप्रसाद शास्त्री ने आपको 'कर्णरीपा' (आर्यदेव) का वंशज माना है[३]। कर्णरीपा नालंदा के निवासी थे। अत, आप भी मगध-निवासी ही थे। आप जाति के शूद्र थे। आपके शिष्यों मे 'शान्तिपा' ही प्रमुख बतलाये जाते हैं। चौरासी सिद्धो मे आपका स्थान १९वाँ है।

तिब्बती 'स्तन्-ग्युर्' मे अपभ्रंश या पुरानी हिन्दी मे लिखित आपका एकमात्र ग्रन्थ 'दोहाकोश-तत्त्वगीतिका' ही संगृहीत है। आपकी रचना का कोई उदाहरण नही मिला।

❀

दीपंकर श्रीज्ञान

आपके नाम 'चन्द्रगर्भ', 'गुह्यज्ञानवज्र' और 'अतिशा' भी मिलते हैं।

म० म० हरप्रसाद शास्त्री ने आपको 'बंगाल-निवासी' बतलाया है[४]। तिब्बती-ग्रन्थो मे आपका जन्म-स्थान भारत की पूर्व दिशा का सहोर (भागलपुर) लिखा है[५]। वस्तुत,

आपका जन्म विक्रम-मनिपुर[६] (भागलपुर) के काननध्वज राजप्रासाद मे, सन् ९८० ई० मे, हुआ था[७]। सहोर या सबोर माडलिक-राज्य के राजा कल्याणश्री आपके पिता और प्रभावती आपकी माता थी। आप अपने माता-पिता के मझले लड़के थे[८]। आपके माता-पिता ने आपका नाम 'चन्द्रगर्भ' रखा। तीन वर्ष की अवस्था मे ही आप विक्रमशिला-विहार मे पढने के लिए भेजे गये। जब कुछ सयाने हुए, तब पास के एक पर्वत पर

---

१ बौद्धगान ओ दोहा (वही, पदकर्त्तादेर परिचय), पृ० ३२।

२. गंगा-पुरातत्त्वांक (वही), पृ० २२७।

३ बौद्धगान ओ दोहा (वही, पदकर्त्तादेर परिचय), पृ० ३२।

४ बौद्धगान ओ दोहा (वही, पदकर्त्तादेर परिचय), पृ० २२।

५ बुद्ध और उनके अनुचर (भदन्त आनन्द कौसल्यायन, प्रथम सं०, १९५० ई०), पृ० ६।

६ कुछ लोग इसे 'विक्रमणिपुर' कहते और इसकी स्थिति बंगाल में मानते हैं, जो ठीक नहीं ज्ञात होता। Journal of the Asiatic Society of Bengal (Vol LX, Part I, No 2, 1891) P 49

७ तिब्बत में सवा वर्ष (राहुल, १९४८ ई०), पृ० २०६।

८ इनके बड़े भाई का नाम 'पद्मगर्भ' और अनुज का नाम 'श्रीगर्भ' था।

महावैयाकरण 'जेतारि' से आपका साक्षात्कार हुआ, जिन्होने आपको पाँचो आरम्भिक विज्ञानो में शिक्षित कर नालदा में जाकर धर्म और दर्शन का अध्ययन करने की सलाह दी। उस समय आपकी अवस्था बारह की थी। उसी अवस्था में आप नालन्दा चले गये। वहाँ आपने स्थविरवाद के तीनो पिटको, वैशेषिक दर्शन-शास्त्र, माध्यमिक तथा योगाचार-वाद और इनके साथ चारो प्रकार के तन्त्रशास्त्रो का भी ज्ञान ग्रहण किया। इसी समय आपने एक विद्वान् ब्राह्मण को शास्त्रार्थ मे पराजित किया था। नालन्दा मे बोधिभद्र ने आपको श्रमणेर-दीक्षा दी और आपका नाम 'दीपकर श्रीज्ञान' रखा। बौद्ध योगशास्त्र की विशेष शिक्षा प्राप्त करने के लिए, वहाँ से आप कृष्णगिरि-विहार मे राहुलगुप्त के पास चले गये। इन्होने आपको उक्त शास्त्र में पारगत कर आपका नाम 'गुह्यज्ञानवज्र' रखा। कृष्णगिरि-विहार से आप राजगृह चले गये और वहाँ लगभग अठारह वर्ष की अवस्था तक अवधूतिपाद (मैत्रीपाद) से शिक्षा प्राप्त करते रहे। तत्पश्चात् आप सिद्ध नारोपा से तंत्र-मत्र की शिक्षा लेने के लिए पुन विक्रमशिला गये और लगभग उनतीस वर्ष की अवस्था तक उन्ही के पास रहे। तदुपरान्त, इकतीस वर्ष को अवस्था मे, आपने वज्रासन-विहार (बोधगया) मे जा शीलरक्षित[१] से उपसम्पदा (भिक्षु-दीक्षा) प्राप्त की। उपसम्पदा प्राप्त कर आपने बौद्धधर्म के सर्वश्रेष्ठ केन्द्र स्वर्णदीप (सुमात्रा)[२] के स्थविर-आचार्य चन्द्रकीर्त्ति[३] के पास जाने का निश्चय किया। लगभग चौदह मास तक समुद्र-मार्ग से यात्रा करते हुए आप स्वर्णदीप पहुँचे। वहाँ बौद्धधर्म के विशेषाध्ययन के लिए आचार्य चन्द्रकीर्त्ति के चरणो मे बैठकर आपको बारह वर्षों तक ज्ञानार्जन करना पडा। उक्त विशेषाध्ययन समाप्त कर रत्नदीप आदि देशो को देखते हुए आप मगध लौट आये। मगध के बौद्धो ने इस बार आपका बडे उल्लास के साथ स्वागत किया। मगध के राजा न्यायपाल (लगभग १०२४—४१ ई०)[४] के अनुरोध पर आपने विक्रमशिला का महापंडित होना स्वीकार किया। इसी समय डाहला के कलचुरि गागेयदेव के लडके क ने मगध पर चढाई कर दी। आपने उसे समझाया कि जब सीमान्त पर तुर्क-आतक उपस्थित है, तब पारस्परिक युद्ध करना उचित नही। इस प्रकार, आपने दोनो राजाओ के बीच मे पडकर सधि करवा दी (१०४१ ई०)[५]। विक्रमशिला से कुछ दिनो पर, लगभग १०४२ ई० में

१. कुछ लेखकों के अनुसार शीलरक्षित उदन्तपुरी (वर्त्तमान विहारशरीफ, जिला पटना) के महा-सघिकाचार्य थे और इन्होंने ही आपका नाम दीपकर श्रीज्ञान रखा था। देखिए—Journal of the Asiatic Society of Bengal (वही), P. 50, तथा 'बुद्ध और उनके अनुचर' (वही), पृ० ६१।

२. श्रीभदन्त आनन्द कौसल्यायन स्वर्णदीप को सुमात्रा न मानकर पेगु (लोअर वर्मा) मानते हैं। देखिए 'बुद्ध' और उनके अनुचर' वही, पृ० ६१।

३. महापंडित राहुल साकृत्यायन और श्रीजयचन्द्र विद्यालकार ने सुमात्रा के आचार्य का नाम 'चन्द्रकीर्ति' के बदले धर्मपाल लिखा है।

४. श्रीजयचन्द्र विद्यालकार ने इस राजा का नाम 'नयपाल' लिखा है। विहार—एक ऐतिहासिक दिग्दर्शन (जयचन्द्र विद्यालकार और पृथ्वीसिंह मेहता, १९४० ई०), पृ० १८१।

५. विहार एक ऐतिहासिक दिग्दर्शन (वही), पृ० १८१।

तिब्बत के (पहले ल्हल्लामा येशिस होड और फिर उनके भतीजे कानकूब)[1] राजा के बार-बार के अनुरोध पर, ६१ वर्ष की अवस्था मे आप 'नग्-चो' के साथ अनेक कष्ट झेलते हुए तिब्बत पहुँचे। तिब्बत की सीमा पर ही वहाँ के राजा ने आपका बडा शानदार स्वागत किया। बौद्धधर्म का सर्वश्रेष्ठ पडित जानकर उसने आपको 'अतिशा' की उपाधि दी। तिब्बत मे आप इसी नाम से आज भी प्रसिद्ध है। वहाँ धर्म-सुधार के साथ आपने अनेक ग्रन्थो की रचना की और अनुवाद-कार्य भी सम्पन्न किया। कहते है, 'ल्हासा' के निकट ने-थन्' नामक स्थान मे, सन् १०५३-५४ ई० मे, ७३ वर्ष की अवस्था मे, आपका निर्वाण हुआ[2]।

प्रसिद्ध है कि आपने ३५ से अधिक धर्म और दर्शन पर तथा ७० से अधिक छोटे-बडे ग्रन्थ तन्त्र पर रचे थे। तिब्बती 'स्तन्-ग्युर्' मे अपभ्रंश या पुरानी हिन्दी मे रचे आपके निम्नलिखित पांच ग्रन्थ सगृहीत हैं—(१) दोहाकोशतत्त्व-गीतिका, (२) चर्यागीति, (३) धर्म-गीतिका (४) धर्मधातु-दर्शनगीति और (५) वज्रासन-वज्रगीति।

आपकी रचना का कोई उदाहरण नही मिला।

❀

नारोपा

आपके नाम 'नाडपा', 'नाडकपा', 'नरोपन्त' आदि भी मिलते है। श्रीराहुलजी ने उनका समय 'महिपाल' राजा का समय माना है। आपका जन्म मगध के एक ब्राह्मण-कुल मे हुआ था[4]। आपके पिता कश्मीरी थे और किसी काम से मगध मे रहने लगे थे, जहाँ आपका जन्म हुआ था। आप भिक्षु बनकर 'नालन्दा' विहार मे पढते थे। वही आपकी अद्भुत प्रतिभा का परिचय लोगो को मिला। पीछे आपने अपनी असाधारण मेधाशक्ति के कारण अनेक विद्याओं मे पारगत होकर प्रसिद्धि प्राप्त की। अध्ययन समाप्त कर आप 'विक्रमशिला' के पूर्वद्वार के महापण्डित हुए। तिब्बत का निमन्त्रण पा आपने उस देश का भ्रमण किया था।

आप तिलोपा के शिष्य तथा शान्तिपाद और दीपकर श्रीज्ञान के गुरु थे। तिब्बत के सर्वोत्तम

---

१ गगधरा (नवम्बर, १९१७ ई०), पृ० २६६।

२ [illegible] 'नग्-चो' ने तिब्बती-भाषा में लिखा था, जो [illegible] उपलब्ध है। —बुद्ध और उनके अनुचर (वही), पृ० ६[illegible]।

Journal of the Asiatic Society of Bengal (वही) P 51—[illegible]

४ [illegible] (वही), पृ० [illegible]

कवि और प्रमुख दुभाषिया 'मर्-वा' (जे-चुनूमि-ल्हारे-पो) आपके शिष्य थे[१]। इनके अतिरिक्त प्रज्ञारक्षित, कनकश्री और मनकश्री (माणिक्य) भी आपके ही शिष्यो में गिने जाते है।[२] चौरासी सिद्धो में आपका स्थान २०वाँ है।

तिब्बती 'स्तन्-ग्युर्' में आपके २३ ग्रंथ मिलते है, जिनमें निम्नलिखित दो ही अपभ्रंश या पुरानी हिन्दी के है—(१) नाडपडित-गीतिका और (२) वज्रगीति।

आपकी रचना का कोई उदाहरण नही मिला।[३]

❀

शलिपा

आपका नाम 'शीलपा' और 'सियारी' भी मिलता है। महापण्डित राहुल साकृत्यायन ने आपको 'शृगालीपा' से अभिन्न माना है।[४] प० हजारीप्रसाद द्विवेदी उक्त 'शृगालीपा' को 'सियारी' से अभिन्न मानते है।[५] आप शूद्रकुलोत्पन्न थे और पालवशी राजा महीपाल (९८८-१०३८ ई०) के समय में वर्त्तमान थे। आपका जन्म-स्थान महापण्डित राहुल साकृत्यायन ने एक स्थान पर मगध[६] और दूसरे स्थान पर 'विघसुर'[७] माना है। यह 'विघसुर' अभीतक अज्ञात है। चौरासी सिद्धो मे आपका स्थान २१वाँ है।

तिब्बती 'स्तन्-ग्युर्' मे आपके अपभ्रंश या पुरानी हिन्दी मे लिखित ग्रंथ 'रत्नमाला' का तिब्बती-अनुवाद सुरक्षित है। आपकी रचना का कोई उदाहरण नही मिला।

❀

१. पुरातत्त्व-निबन्धावली (वही), पृ० १९५ की पादटिप्पणी।

२. तिब्बत में सवा वर्ष (वही), पृ० २११।

३. डॉ० बागची द्वारा उद्धृत 'चर्यागीति' में 'ताडकपा' के नाम से एक गीति मिलती है, जिसे महापण्डित राहुल साकृत्यायन 'नारोपा' द्वारा रचित ही मानते हैं। यदि सचमुच 'न', 'त' का लिपि-भ्रम हुआ है, तो इसे नारोपा की ही रचना माननी चाहिए।

अपणो नाहिं सो काहेरि शङ्का, ता महा मुदेरी टूटि गेलि कथा ॥ध्रु०॥
अनुभव सहज मा भोलरे जोई, चोकोट्टि विमुका जइसो तइसो होइ ॥ध्रु०॥
जइसने अछिले स तइछन अच्छ। सहज पिथक जोइ भान्ति माहो वास ॥ध्रु०॥
वाण्ड कुरु सन्तारे आणी। वाक पथातीत काहि वखाणी ॥ध्रु०॥
भणइ ताडक एथु नाहिं अवकाश। जो' बुझइ तागलें गलपास ॥ध्रु०॥

—पुरातत्त्व-निबन्धावली (वही), पृ० १९५-१९६।

४. गगा-पुरातत्त्वाक (वही), पृ० २२२।

५. नाथ-सम्प्रदाय (वही), पृ० १४२।

६. गंगा-पुरातत्त्वाक (वही), पृ० २२२।

७. पुरातत्त्व-निबन्धावली (वही), पृ० १४९।

शान्तिपा

आपका नाम 'रत्नाकर शान्ति' भी मिलता है। श्रीराहुलजी के मतानुसार आप मगध के एक ब्राह्मण-कुल मे उत्पन्न हुए थे।[1] डॉ० धर्मवीर भारती लामा तारानाथ के कथन के आधार पर आपको क्षत्रिय मानते है।[2] चौरासी सिद्धो मे सबसे अधिक पर्यटनशील आप ही थे। आपने उदन्तपुरी-विहार (विहार-शरीफ, पटना) के सर्वास्तिवाद-सम्प्रदाय मे सन्यास-ग्रहण किया। वहाँ अध्ययन समाप्त कर आप विक्रमशिला पहुँचे और महापण्डित 'जेतारि' के पास अध्ययन करने लगे। यही सिद्ध 'नारोपा' (नाडपा) से आपका सम्पर्क हुआ, जिनका आपने आगे चलकर शिष्यत्व ग्रहण कर लिया। विक्रमशिला की शिक्षा पूरी कर आप सोमपुरी विहार (पहाडपुर, राजशाही) के स्थविर हुए। यहाँ से आप मालवा चले गये। उधर ही सात

वर्षो तक योगाभ्यास करते रहे। पुन जब आप विक्रमशिला पहुँचे, तब आपको सिहल के राजा का निमत्रण मिला। उस निमंत्रण पर सिंहल जाकर आप छह वर्षो तक धर्म-प्रचार करते रहे। वहाँ से विक्रमशिला वापस आने पर राजा महीपाल के विशेष आग्रहवश आपने 'विक्रमशिला-विहार' के पूर्वद्वार का पण्डित होना स्वीकार किया।

आप बडे प्रकाण्ड विद्वान् थे। इसी कारण आप अपने युग के 'महापण्डित' और 'कलिकालसर्वज्ञ' कहे गये है। राहुलजी ने आपको वज्रयानी सिद्धो मे सबसे प्रकाण्ड पण्डित कहा है।[3] आपके गुरु सिद्ध जालन्धरपा माने जाते हैं। आप सिद्ध नारोपा (नाडपा) के भी शिष्य थे। आपके शिष्यो मे प्रमुख थे दीपकर श्रीज्ञान और अद्वयवज्र (अवधूतापा, मैत्रीगुप्त)।[4] कहते है, सौ वर्षो से अधिक की आयु मे आपने शरीर छोडा। चौरासी सिद्धो मे आपका स्थान १२वाँ है।

तिब्बती 'स्तन्-ग्युर्' में आपके तीस से ऊपर ही ग्रथ सगृहीत हैं, जिनमे एक 'सुखदु खद्वय-परित्यागदृष्टि' अपभ्रंश या पुरानी हिन्दी मे है।

उदाहरण

तुला धुणि धुणि आँसुरे आँसु,
आँसु धुणि धुणि णिरवर सेसु ॥ ध्रु० ॥
तउषे हेरुअ ण पाविअइ,
सान्ति भणइ किण सभावि अइ ॥ ध्रु० ॥

---

१. गंगा-पुरातत्वांक (वही), पृ० २२१।

२. सिद्ध-साहित्य (वही), पृ० ५९।

३. पुरातत्त्व-निबन्धावली (वही), पृ० १९६।

४. सिद्ध-साहित्य (वही), पृ० ५।

तुला धुणि धुणि सुने अहारिउ,
पुन लइओं अपना चटारिउ ॥ ध्रु० ॥
बहल बट दुइ मार न दिशअ,
शान्ति भणइ वालाग न पइसअ ॥ ध्रु० ॥
काज न कारण जएहु जअति,
सएँ सँवेअण बोलथि सान्ति ॥ ध्रु० ॥[1]

❀

ग्यारहवीं शती

गयाधर[2]

आपका निवास-स्थान वैशाली (बसाढ, जिला मुजफ्फरपुर) बतलाया गया है।[3] आप कायस्थ-कुलोत्पन्न थे। आपके गुरु का नाम 'अवधूतिपा' था।

'शाक्य ये-शेस्' के निमत्रण पर, १०४५ ई० मे, आप बौद्ध-धर्म एव साहित्य के प्रचारार्थ तिब्बत गये थे। वहाँ आपने 'सपुटी-तन्त्र' के अनुवाद मे उनकी सहायता भी की थी। तिब्बत मे पाँच वर्षो तक रहकर आपने स्वतन्त्र रूप से भी अनेक तन्त्र-ग्रथो का भोट-भाषा मे अनुवाद किया था।[4] वहाँ से भारत लौटते समय आपको पाँच-सौ तोले सोना विदाई मे मिला था। प्रसिद्ध सिद्ध 'तिब्रूपा' आपके ही पुत्र थे।

तिब्बती 'स्तन्-ग्युर्' मे अपभ्रंश या पुरानी हिन्दी मे लिखित आपका मौलिक ग्रथ 'ज्ञानोदयोपदेश' सगृहीत है। इसके अतिरिक्त आपने जिन ग्रथो का भोट-भाषा मे अनुवाद किया था, उनमे तीन के नाम इस प्रकार है—

(१) बुद्धकपाल-योगिनी-तन्त्र, (२) वज्रडाक-तन्त्र और (३) हेवज्रतन्त्रराजक।[5]

आपकी रचना का कोई उदाहरण नही मिला।

---

१ गगा-पुरातत्त्वाक (वही), पृ० २५६।

२. आपका चित्र हमें बुद्ध-जयन्ती-समारोह-समिति (वैशाली) के प्रमुख कार्यकर्त्ता श्रीनगेन्द्रजी से प्राप्त हुआ है।

३. तिब्बत में बौद्ध-धर्म (श्रीराहुल, १९९० वि०), पृ० ३७।

४. तिब्बत में आज भी 'छु-चें' (ब्रह्मपुत्र) नदी के तट पर वह स्थान बतलाया जाता है, जहाँ प० गयाधर ने 'डोग्-मी-लो-च-वा' के साथ पाँच वर्षो तक रहकर अनेक ग्रथों का भोट-भाषा में अनुवाद किया था।

५. वही, (परिशिष्ट—६), पृ० ई।

चम्पकपा

आपका निवास-स्थान चम्पा (भागलपुर) बतलाया गया है।[1] किन्तु डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी आपका निवास-स्थान 'चम्पारण-देश' (आधुनिक चम्पारन) मानते हैं।[2] चौरासी सिद्धो मे आपका स्थान ६०वाँ है।

तिब्बती 'स्तन्-ग्युर्' मे अपभ्रंश या पुरानी हिन्दी मे रचित आपका एक ग्रंथ 'आत्म-परिज्ञान-'दृष्ट्युपदेश' सगृहीत है।

आपकी रचना का कोई उदाहरण नही मिला।

❀

चेलुकपा

आपका निवास-स्थान भगल (भागलपुर) बतलाया गया है।[3] आप जाति के शूद्र और अवधूतीपा (मैत्रीपा) के शिष्य थे। चौरासी-सिद्धो मे आपका स्थान ५४वाँ है।

तिब्बती 'स्तन्-ग्युर्' मे अपभ्रंश या पुरानी हिन्दी मे रचित आपका एक ग्रंथ 'षडगयोगोपदेश'[4] सगृहीत है। आपकी रचना का कोई उदाहरण नही मिला।

---

१. गगा-पुरातत्त्वाक (वही), पृ० २२३।

२. नाथ-सम्प्रदाय (वही), पृ० १४१।

३. गंगा-पुरातत्त्वांक (वही), पृ० २२३।

४. पुरातत्त्व-निबन्धावली (वही), पृ० २००।

जयानन्तपा

आपका नाम 'जयनन्दीपा' भी मिलता है।

आप भगल (भागलपुर) के निवासी ब्राह्मण बतलाये गये है।[१] कहते है, आप वहाँ के राज-मत्री थे।

आपके तिव्वत जाने का भी उल्लेख मिलता है। वहाँ आपके दुभाषिया 'सेङ्गेर्ग्यल' थे।

चौरासी सिद्धो मे आपका स्थान ५८वाँ है। आपके गुरु और शिष्य का नाम ज्ञात नही है। तिव्बती 'स्तन्-ग्युर्' मे अपभ्र ग या पुरानी हिन्दी मे रचित मभवत आपके ही दो ग्र थ सगृहीत है—'तर्कमुद्गरकारिका' और 'मध्यमकावतारटीका'।[२]

उदाहरण

पेखु सुअणे अदश जइसा, अन्तराले मोह तइसा ।। ध्रु० ।।
मोह-विमुक्का जइ माणा, तवेँ तूटइ अवणा गमणा ।। ध्रु० ।।
नौ दाढइ नौ तिमइ न च्छिजइ, पेख मोअ मोहे बलि बलि बाझइ ।। ध्रु० ।।
छाअ माआ काअ समाणा, वेणि पाखेँ सोइ विणा ।। ध्रु० ।।
चिअ तथतास्वभावे षोहिअ, भणइ जअनन्दि फुडअण ण होइ ।। ध्रु० ।।[३]

निर्गुणपा

आपका निवास-स्थान 'पूर्वदेश' बतलाया गया है।[४] पूर्वदेश से राहुलजी का तात्पर्य भगल और पुड्रवर्द्धन से है।[५] आप जाति के शूद्र थे। चौरासी सिद्धो मे आपका स्थान ५७वाँ है।

तिव्वती 'स्तन्-ग्युर्' मे अपभ्र श या पुरानी हिन्दी मे रचित आपका एक ग्र थ 'शरीर-नाडिका-बिन्दुसमता'[६] सगृहीत है। आपकी रचना का कोई उदाहरण नही मिला।

❀

१. गगा-पुरातत्त्वाक (वही), पृ० २५७।
२. पुरातत्त्व-निवन्धावली (वही), पृ० १६४।
३. वही, पृ० १६४।
४. गगा-पुरातत्त्वाक (वही), पृ० २२३।
५. दोहाकोश (वही), पृ० १०।
६. पुरातत्त्व-निवन्धावली (वही), पृ० २०२।

लुचिकपा

आप भगलदेश (भागलपुर) के निवासी ब्राह्मण थे।[1] आपके गुरु-शिष्य का पता नही है। चौरासी-सिद्धो मे आपका स्थान ५६वाँ है।

तिब्बती 'स्तन्-ग्युर्' में अपभ्रश या पुरानी हिन्दी मे रचित आपका एक ग्रथ 'चण्डालिका-बिन्दुप्रस्फुरण'[2] सगृहीत है। आपकी रचना का कोई उदाहरण नही मिला।

❀

बारहवीं शती

कोकालिपा

आप चम्पारन के एक राजकुमार बतलाये गये है।[3] चौरासी सिद्धो मे आपका स्थान ८०वाँ है।

तिब्बती 'स्तन्-ग्युर्' में अपभ्रश या पुरानी हिन्दी मे रचित आपका एकमात्र ग्रथ 'आयु-परीक्षा' सगृहीत है।[4] आपकी रचना का कोई उदाहरण नही मिला।

---
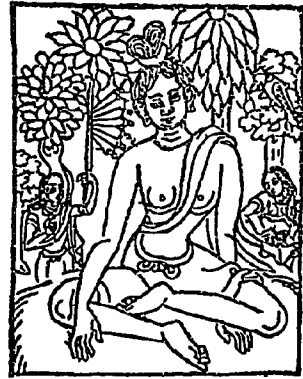
१. गगा-पुरातत्त्वाक (वही), पृ० २२३।
२. पुरातत्त्व-निबन्धावली (वही), पृ० २०३।
३ गंगा-पुरातत्त्वांक (वही), पृ० २२४।
४. पुरातत्त्व-निबन्धावली (बही), पृ० २००।

आपका निवास-स्थान भंगलदेश (भागलपुर) बतलाया गया है।[१] आप शूद्रकुलोत्पन्न थे। चौरासी सिद्धो मे आपका स्थान ७८वाँ है। तिब्बती 'स्तन्-ग्युर्' में अपभ्रंश या पुरानी हिन्दी मे रचित एकमात्र ग्रन्थ 'बोधिचित्तवायुचरण-भावनोपाय' ही सगृहीत है। आपकी रचना का कोई उदाहरण नही मिला।

❀

विनयश्री

आपका निवास-स्थान 'पूर्वी-मिथिला' बतलाया गया है।[२]

आपका सम्बन्ध विक्रमशिला, नालन्दा और जगतल्ला के बौद्ध विहारो से था। मुसलमानो द्वारा, उन विहारो के नष्ट किये जाने पर आप अपने गुरु 'शाक्य-श्रीभद्र' तथा अन्य व्यक्तियो के साथ १२०३ ई० मे तिब्बत पहुँचे। उस समय आपकी अवस्था ३५ वर्षो से कम नही थी। अनेक वर्षो तक आप वहाँ बौद्धधर्म के प्रचार मे लगे रहे और सम्भवतः आपने अपनी जीवन-लीला भी वही समाप्त की।

आपने तिब्बत मे अपने गुरु शाक्य-श्रीभद्र को अनेक भारतीय ग्रन्थो के भोट-भाषा मे अनुवाद करने मे सहायता पहुँचाई थी। जगतल्ला-विहार के पडितो—विभूतिचन्द्र, दानशील, सुगतश्री, सघश्री (नैपाली) आदि साथियो के साथ आपके तिब्बत के 'सस्क्य-विहार' मे भी रहने का उल्लेख मिलता है।[३] वहाँ आपके हाथ के लिखे कितने ही पृष्ठ महापण्डित राहुल साकृत्यायन को मिले थे। उन पृष्ठो पर १२-१३वी सदी के लिखे गीत है। उन गीतो की सख्या केवल १५ है। उनके पाठ भ्रष्ट है, जिससे इन गीतो के विनयश्री द्वारा लिखित होने मे सदेह है।[४]

उदाहरण

राहुएँ चान्दा गरसिअ जावें।
　　गरुअ संवेअण हल सहि तावें ॥ ध्रु० ॥
भणइ विनयश्री नोख विनाणा।
　　रवि सॉजोएँ चान्द गहणा।

---

१. गगा-पुरातत्वाक (वही), पृ० २२४।
२. दोहाकोश, (वही, भूमिका), पृ० १८।
३. तिब्बत में बौद्ध-धर्म (वही), पृ० ४४।
४. दोहाकोश (वही, भूमिका), पृ० १६।

बान्ध गरसिल्ले आन्त न दिशइ ।
 सएल बिएक रूअ पडिहारइ ॥
साव् गरासिउ आध राती ।
 न तहि इन्वी बिसअ बिआती ॥
कइसो आपु व गइणा भइल्ला ।
 सम गरासें अथवण गइल्ला ॥ ध्रु० ॥[१]

❀

तेरहवीं शती

हरिब्रम्ह

आपका निवास-स्थान 'विहार' कहा गया है ।[२]

आप मिथिला के कर्णाट-राजवंश के अतिम, अर्थात् छठे राजा महाराज हरिसिहदेव (लगभग १२९८-१३२४ ई०)[३] के आश्रित कवि थे। महाराज हरिसिहदेव के विद्वान् मन्त्री, सप्तरत्नाकर[४]-रचयिता, महासाधिविग्रहोक प० चण्डेश्वर ठाकुर की प्रशसा मे आपकी कुछ पक्तियाँ उपलब्ध होती है।

उदाहरण

"जहा सरअ-ससि-बिब, जहा हर-हार हस ठिअ,
 जहा फुल्ल सिअ कमल, जहा सिरि खंड खड किअ ।
जहा गग-कल्लोल, जहा रोसाणिअ रूप्पइ,
 जहा दुग्धवर सुद्ध फेण फँफाइ तलप्पइ ।
पिअपाअ पसाए दिट्ठि पुणि, णिहुअ हसइ जइ तरुणि जण ।
 वरमति चंडेसर कित्ति तुअ, तत्थ पेक्ख हरिबंभ भण[५] ॥१०८॥

❀

१. दोहा कोश (वही, भूमिका), पृ० ३६३ ।

२. हिन्दी-काव्यधारा (वही), पृ० ४६४ ।

३. बिहार—एक ऐतिहासिक दिग्दर्शन (वही), पृ० २०८-२०९ ।

४. इनके नाम इस प्रकार हैं—कृत्यरत्नाकर, दानरत्नाकर, व्यवहाररत्नाकर, शुद्धिरत्नाकर, पूजा-रत्नाकर, विवादरत्नाकर, तथा गृहस्थरत्नाकर, इन रत्नाकरों के अतिरिक्त कृत्यचिन्तामणि और शैव-मानसोल्लास नामक दो और ग्रन्थ पं० चण्डेश्वर ठाकुर के मिलते हैं ।

५. हिन्दी-काव्य-धारा (वही), पृ० ४६४-४६६ ।

चौदहवीं शती

अमृतकर

आपका नाम 'अमिअकर' भी मिलता है। आपका निवास-स्थान मिथिला था।[१] आप कायस्थ-बलाइन-वश मे उत्पन्न हुए थे तथा मिथिला के महाराज शिवसिह के प्रधान-मत्री थे। आपके पिता का नाम प्रीतिकर (उपनाम चन्द्रकर) था। आपके पितामह सूर्यंकर क्षत्रियकुलभूषण हरिसिहदेव के मत्री थे। आपके पूर्वज श्रीधरदास भी महाराज नान्यदेव के मत्री थे।

आप महाराज शिवसिह के परम विश्वास-पात्र थे। कहते है, एकबार दिल्लीश्वर के आदेशानुसार यवन-सेना जब महाराज शिवसिंह को बन्दी करके दिल्ली ले गई थी, तब आप उन्हे मुक्त करने के उद्देश्य से दिल्लीश्वर के अधीनस्थ बिहार-प्रान्त के नवाब से पटना मे मिले थे। उक्त नवाब से आपने अपने महाराज को बन्दी-गृह से मुक्त करने की भरपूर चेष्टा की, किन्तु असफल रहे।

आपकी प्रशसा मे महाकवि विद्यापति का एक पद उपलब्ध हुआ है, जिससे आपकी नीति-निपुणता, विद्वत्ता, सज्जनता, परोपकारिता आदि गुण प्रकट होते है।[२] आपके द्वारा मैथिली मे रचित एक पद 'रागतरगिणी' और दो-दो पद विद्यापति-पदावली की नैपाली-पोथी तथा रामभद्रपुर पोथी मे मिलते है।

उदाहरण

(१)

दुइ दिस भमि भमि लोचन आव।
तेसरि दोसरि कतहु न पाव॥ १॥
लगहि अछलि धनि विहि हरि लेल।
ललित लता सागरिका भेलि॥ २॥
हरि-हरि विरहे छुइल बछराज।
वदन मलान कओन करु आज॥ ३॥
चान्दन सीतल ताहेरि, काए।
तखने न भेलि ए हृदय मोहि लाए॥ ४॥
ते अधिकाइलि मानस-आधि।
धक धक कर मदनानल धाधि॥ ५॥

---

१. महाकवि विद्यापति (प० हरिनन्दन ठाकुर 'सरोज', प्रथम स०, १९४० ई०), पृ० १२।

२ नीति निपुण गुण नाह, अक मैं आगर।
कोप-काव्य-व्याकरण, अधिक अधिकारक सागर॥
सबकर कर सम्मान सबहु सो नेह बढ़ाविअ।
विप्रदीन अतिदुखी सबहुँ का विपत्ति छोड़ाविअ॥
कायस्थ मोंह सुरसिद्ध भउ, चन्द्र तुलाइव शशिधर।
'कविकण्ठहार' कल उच्चरइ, अमिअ बरसइ अमिअकर॥
—वही, पृ० १२।

भनइ अमिअकर नागरि नाम।
आकवि कण्ठहि सिरिजल काम।। ६ ।।[1]

(२)

सुरत समापि सुतल वरनागर पानि पयोधर आपी।
कनकसम्भु जनि पूजि पुजारें धएल सरोरुहे झापी।।
सखि हे मालति केलि विलासे।
मालति रभिअवितालि अगोरलि पुनुरतिरङ्गक आसे
वदन मेराए धएलन्हि मुखमण्डलेँ कमले मिलल जनि चन्दा
भमर चकोर दुअओ अलसाएल पीवि अमिअ मकरन्दा
भनइ अमिअकर सुनु मधुरापति राधाचरित अपारे।।
राजा सिवसिंह रूपनराएन लखिमा देइ कण्ठहारे।[2]

*

उमापति उपाध्याय

प० चेतनाथ झा[3] तथा डॉ० ग्रियर्सन[4] ने आपका जन्म-स्थान 'कोइलख' (दरभगा) बतलाया है। यह ग्राम दरभगा जिले के 'भौर' परगना मे आज भी वर्त्तमान है। कुछ विद्वानो ने आपका जन्मस्थान मँगरौनी (दरभंगा) बतलाया है, जो ठीक नही।[5]

आपके पिता का नाम रत्नपति उपाध्याय और आपकी माता का नाम रत्नावती था, ऐसा कुछ विद्वानो का विचार है। आप एक अद्वितीय धर्मशास्त्री विद्वान् थे, जिसके कारण आपको 'महामहोपाध्याय कविपण्डितमुख्य' की उपाधि प्राप्त हुई थी। आपने अपने को विष्णु के दशम अवतार स्वरूप 'हरिहरदेव' नामक किसी राजा का आश्रित बतलाया है और यह भी कहा है कि आपके आश्रयदाता तलवार से यवन-रूपी वन का नाश करनेवाले थे।[6] मिथिला के इतिहास में इन गुणो से सम्पन्न इस नाम के किसी राजा का पता नही चलता।

---

१. विद्यापति-गीत-सग्रह (डॉ० सुभद्र झा, १९५४ ई०, Appendix-A) पद स० १०, पृ० घ।

२. रागतरंगिणी (बलदेव मिश्र, १९९१ वि०), पृ० ८४-८५। यह पद किंचित् परिवर्त्तन के साथ श्रीनगेन्द्रनाथ गुप्त की 'विद्यापति की पदावली' में विद्यापति के नाम पर संगृहीत है। उक्त संग्रह में भनिता इस प्रकार है—

भनइ अमिकर सुनह मधुरपति राधा चरित अपारे।
राजासिवसिंह रूपनारायन सुकवि भनथि कण्ठहारे।।

वही, पद स० ३१७, पृ० १९२।

३. पारिजात-हरण (पं० चेतनाथ झा, प्रथम सं०, शाके १८३९, भूमिका), पृ० ११।

४. Journal of the Bihar and Orissa Research Society (Vol III, Part I), P. 25.

५. पुस्तक-भण्डार-जयन्ती-स्मारक-ग्रथ (१९४२ ई०), पृ० ४०३।

६. 'आदिष्टोऽस्मि यवनवनच्छेदकरालकरवालेन विच्छेदगतचतुर्वेदपथप्रकाशकप्रतापेन भगवतः श्रीविष्णोर्दशमावतारेण हिन्दुपतिश्रीहरिहरदेवेन यथा उमापत्युपाध्यायविरचितं नवपारिजात-मङ्गलाभिनीय वीररसावेश शमयन्तु भवतो भूपालमण्डलस्य"—Journal of the Bihar and Orissa Research Society (वही), P. 28.

अत कुछ लोग नैपाल-स्थित सप्तरी परगने के अन्तर्गत इसी नाम के, १७वी सदी के, एक छोटे-से स्वतन्त्र राजा को आपका आश्रयदाता बतलाते है।[१] इसी प्रकार, कुछ विद्वानो ने मध्यप्रदेश के बुन्देलखण्ड-स्थित गढमण्डला के राजा 'हिन्दुपति' को, जो हृदयशाल के पौत्र छत्रसाल के पुत्र थे, आपका आश्रयदाता कहा है।[२] किन्तु डॉ० ग्रियर्सन तथा आधुनिक प्रामाणिक विद्वान् उक्त मतो को युक्तिसगत नही मानते और अनेक प्रमाणो के साथ कर्णाट-वश के अतिम राजा हरिसिंहदेव को ही आपका आश्रयदाता बतलाते है।[३]

आपकी केवल एक ही रचना (पारिजातहरण) पुस्तकाकार में मिली है, जो सस्कृत-प्राकृत-मैथिली-मिश्रित एक 'कीर्त्तनिया नाटक' है। यह लोकभाषा (मैथिली)-मिश्रित संस्कृत-नाटको मे सबसे प्राचीन माना जाता है। उक्त रचना के अतिरिक्त आपके कुछ स्फुट पद भी मैथिली में मिलते है, जिनकी प्रामाणिकता सदिग्ध है।

उदाहरण

(१)

अनगनित किंशुक चारु चपक बकुल बकुहुल फुल्लियाँ।
पुनु कतहु पाटलि पटलि नीकि नेवारि माधवि मल्लियाँ।।
कर जोरि रुकुमिनि कृष्ण संग वसंत-रंग निहारहीं।
रितु रमल सिसिर समापि रसमय रमथि संग बिहारहीं।।
अति मंजु बंजुल पुंज मिंजल चारु चूअ बिराजहीं।
निज मधुहिँ मातलि पल्लवच्छबि लोहितच्छाबि छाजहीं।।
पुनु केलि-कलकल कतहु आकुल कोकिला-कुल कूजहीं।
जनि तीनि जग जिति मदन नृप-मनि बिजय-राज सुराजहीं।।
नव मधुर मधु रसुमुगुध मधुकर निकर-निक-रस भावहीं।।
जनि मानिनि जन मान भंजन मदन गुरु गुन गावहीं।।
बह मलय निरमल कमल परिमल पवन सौरभ सोहहीं।
रितुराज रैबत सकल दैबत सुनिहु मानस मोहहीं।।
जदुनाथ साथ बिहार हरखित सहस सोदस नायिका।
मन गुरु उमापति सकल-नृप पति होथु मंगल नायिका।।७।।[४]

---

१. पारिजातहरण (वही, भूमिका), पृ० १५-१६।

२. A History of Maithili literature (J. Mishra, 1949, Vol I), PP. 306-307.

३. (क) Journal of the Bihar and Orissa Research Society (Vol. III, Part IV), PP. 453-537.
(ख) वही (Vol. XLIII, Part I & II), PP. 42-43।
(ग) 'हिन्दुस्तानी' (त्रैमासिक, अप्रैल १६२५ ई०), पृ० ११५-११६।
(घ) 'साहित्य' (त्रैमासिक, जुलाई १६५६ ई०), पृ० ४४-४५।

४. Journal of the Bihar and Orissa Research Society (Vol. III, Part I), PP. 30-31.

(२)

अरुन पुरुब दिसि बहलि सगरि निसि
गगन मगन भेल चन्दा।
मुनि गेलि कुमुदिनि तइओ तोहर धनि
मूनल मुख अरविन्दा ॥२२॥

कमल बदन कुवलय दुहु लोचन
अधर मधुरि निरमाने।
सगर सरीर कुसुम तुअ सिरिजल
किए तुअ हृदय पखाने ॥२४॥

मानिनि।
असकति कर कंकन नहि परिहसि
हृदय हार भेल भारे।
गिरि सम गरुअ मान नहि मुंचसि
अपरुब तुअ बेवहारे ॥२६॥

मानिनि।
अवगुन परिहरि हरखि हेरु धनि
मानक अवधि बिहाने।
हिमगिरि-कूमरि चरन हृदय धरि
सुमति उमापति भाने ॥२८॥[१]

※

---

१. Journal of the Bihar and Orissa Research Society (वही), PP. 44-46
यह पद किंचित् परिवर्त्तन के साथ श्रीनगेन्द्रनाथ गुप्त की 'विद्यापति ठाकुर की पदावली' में विद्यापति के नाम पर सगृहीत है। उक्त सग्रह में भनिता इस प्रकार है—

अवगुन परिहरि हेरह हरखि धनि
मानक अवधि विहाने।
राजा सिवसिंह रूपनरायन
कवि विद्यापति भाने ॥ ८ ॥

—वही, पद सं० ३६६, पृ० १८७।

गणपति[1] ठाकुर

आप महाकवि विद्यापति के पिता और दरभगा जिले के 'बिसफी' ग्राम-निवासी थे। आपके पिता का नाम 'जयदत्त' था। 'श्रीकर' की पुत्री गागो देवी (गगादेवी) से आपका विवाह हुआ था। कहते है, आपने कपिलेश्वर महादेव की आराधना करके विद्यापति-जैसा पुत्र-रत्न पाया था। आप मिथिला के राजा गणेश्वर के सभा-पण्डित थे।

आप सस्कृत के वडे प्रकाण्ड विद्वान् थे। आपका रचा एकमात्र संस्कृत-ग्रथ 'कृत्य-चिन्तामणि' प्राप्त है। आपने मैथिली-भाषा मे कुछ पद भी रचे थे।

उदाहरण

मधुकर विमल कमल पर रावे।
जनिकर मधुर-मधुर रस पावे॥
पवन - परस कर दलतल दूरे।
जनि धरि कोमल अधर अधारे॥
रमण जगत कत फूले।
एहन रस-रभस नहि भेट धूले॥
सरस सुधारस बस रस - मूले।
रसल वसल मधुपति करथि कलोले॥
सुन पति गनपति कवि भाने॥
रसल वसल जन पुनु धरथि धेआने॥[2]

❀

ज्योतिरीश्वर ठाकुर

आपको 'कविशेखराचार्य' की उपाधि मिली थी।

आपने अपने को 'श्रीमत्पल्ली-ग्राम' वासी वतलाया है।[3] इस ग्राम का पता निश्चित रूप से अभी तक कुछ ज्ञात नही हुआ है, किन्तु यह स्थान मिथिला मे ही रहा होगा। आपके पिता का नाम धीरेश्वर और पितामह का नाम रामेश्वर था। आप कर्णाटवशी राजा हरिसिंहदेव (सन् १२९८-१३२४ ई०) के दरवार में थे।

---

१. १५वीं शती के 'कविराज भानुदत्त' के पिता भी एक 'गणपति' थे। कहीं-कहीं इनका नामोल्लेख 'गणेश्वर' और 'गणनाथ' के रूप में भी मिलता है। इनके पिता का नाम 'म० म० महादेव' था। संभवतः, ये अपने पिता के सबसे छोटे लड़के थे। विद्वानों ने इन्हें प्रख्यात कवि एवं नैयायिक कहा है। कवि के रूप में इन्हें 'ढक्कवि' की उपाधि प्राप्त थी। 'सुभाषित-सुधारत्न-भाण्डागार' के लेखक ने इन्हें 'महामोद' नामक कृति का रचयिता वतलाया है। किन्तु परम्परा से ये 'रस-रत्न दीपिका' नामक ग्रंथ के रचयिता माने गये हैं। सम्भव है, इन्होंने मैथिली में भी कुछ पदों की रचना की हो।
—Patna University Journal (vol III, No 1 & 2, Sep. 1946-Jan. 47), P. II

२. 'साहित्य' (वही, अक्टूबर १९५७ ई०), पृ० ४५।

३. बिहार-रिसर्च सोसायटी (पटना) में सगृहीत हस्तलिखित 'धूर्त्तसमागम' प्रहसन की प्रस्तावना के आधार पर।

आप एक बडे विद्वान् और सगीत-शास्त्रज्ञ थे। काव्य-शास्त्र में भी आपकी गहरी पैठ थी, जिसके कारण आप 'अभिनव-भरत' कहे जाते थे। विभिन्न भाषाओ एवं उपभाषाओ का भी आपका अच्छा अध्ययन था। आप शिव के उपासक थे। आपकी तीन रचनाएँ अभीतक प्राप्त हुई हैं। वे हैं—धूर्त्त-समागम[1] (प्रहसन), पंचसायक[2] (काम-शास्त्र) और वर्ण-रत्नाकर (गद्य-काव्य)।[3] इनमें प्रथम दो सस्कृत और अंतिम प्राचीन मैथिली में है। ज्ञात होता है कि आपकी काव्य-रचना उत्कृष्ट कोटि की होती थी, जिसके कारण आपको 'कवि-शेखराचार्य' की उपाधि प्राप्त हुई थी। मैथिली में लिखित आपका 'वर्ण-रत्नाकर' हिन्दीमे गद्य-काव्य का सर्वप्रथम और सर्वश्रेष्ठ ग्रंथ माना जाता है।

उदाहरण

(१)

॥ अथ चन्द्रमावर्णना ॥

निशाक नाहकाक शङ्खवलय अइसन अकाश० दीक्षित (क) कमण्डल अइसन० चन्द्रकान्तक प्रभा अइसन० तारकाक सार्थवाह अइसन० शृङ्गार समुद्रक कल्लोल अइसन० कुमुदवनक प्राण अइसन० पश्चिमाचलक तिलक अइसन० अन्धकारक मुक्तिक्षेत्र अइसन० कन्दर्पनरेन्द्रक यश अइसन० लोक लोचनक रसायन अइसन० एवम्विध चन्द्र उदित भउअह।[4]

(२)

॥ अथ सरोवर वर्णना ॥

शरतक चान्द अइ (स) न निर्म्मल० बौद्धपक्ष अइसन आपातभीषण० उदयनक सिद्धान्त अइसन प्रसन्न० योगीक चित्त अइसन सौम्य० हरिश्चन्द्रक त्याग अइसन अगाधसरोवर देखु॥ पुनु कइसन देखु॥ कमल० कोकनद० कल्हार० कुवलय० कुमुद तें उपशोभित० वेश्याक कटाक्षगाय इतस्ततोगामी० भावलम्पट भ्रमर तें उपशोभित[5]

---

१. यह रचना प्रकाशित हो चुकी है। इसके अनुवाद अन्य भाषाओं में भी हुए हैं। इसी के आरम्भ में नदी द्वारा अपना परिचय दिलाते हुए आपने पिता और पितामह का नामोल्लेख किया है और अपने को सकल सगीत-विद्याओं का विशेषज्ञ, अभिनवभरत, सम्पूर्ण भाषा और उपभाषाओं का ज्ञाता, सरस्वती-कंठाभरण और श्रीमत्पल्ली-ग्रामवासी कहा है।

२. यह रचना भी प्रकाशित है। इसकी एक प्राचीन हस्तलिखित प्रति पटना-विश्वविद्यालय में सुरक्षित है। 'धूर्त्तसमागम' की तरह इसमें भी आपने बड़े गौरव के साथअपने को शिव का उपासक, चौंसठ कलाओं का निधि, संगीत, आगम और सत्प्रमेय की रचना-चातुरी में शिरोमणि, प्रख्यात तथा कविशेखराचार्य उपाधि-प्राप्त लिखा है।

३. यह ग्रंथ एशियाटिक सोसायटी (बंगाल) के संग्रहालय में सुरक्षित है। आरम्भ, मध्य और अंत के कुछ पृष्ठों के न रहने के कारण यह खंडित है। इसका प्रकाशन भी एशियाटिक सोसायटी से ही, डॉ० सुनीति कुमार चटर्जी तथा पं० बबुआजी मिश्र के सम्पादकत्व में, हो चुका है। यह आठ कल्लोलों में विभक्त है। सात कल्लोलों के नाम हैं—नगर वर्णना, नायिका वर्णना, आस्थान वर्णना, ऋतु वर्णना, प्रयाणक वर्णना, भट्टादि वर्णना और कला वर्णना। आठवें कल्लोल का नामकरण नहीं मिलता।

४. श्रीज्योतीश्वर ठाकुर-प्रणीत 'वर्ण-रत्नाकर' (डॉ० सुनीतिकुमार चटर्जी तथा प० बबुआजी मिश्र, १९४० ई०, तृतीयः कल्लोलः), पृ० १७।

५. वही (पंचमः कल्लोलः), पृ० ३९।

(३)

॥ अथ विद्यावन्त वर्णना ॥

गुजर परि वेटरा एक मन्था बन्धने० हिरा धारक कजिआ चारि कान परिहले सारु सोनाक टाड चारि वाहु परिहने० चतुःसमे अंगराग कएने० सफर उच्च पाढि समेत तासमण्डलक त्रिसह पछेओरा एक दोवल कइ उएड उपर कइ चलओले० मकलाक पटा एक परिहने० एक खंपा भाण्डो कान्ध पालने० विदातओ अस्थान भीतर भउ०[1]

(४)

॥ अथ पुनर्भोजन वर्णना ॥

महर रात्री भितर बिआरीक अवसर भेल० चोरगाहि ठाओ निपल० तदनन्तर अपूर्व्व पीढी एक ठाम धरल० सेवकें पटादेल० वधा रत्नमण्डित नायकेकेदेल० वाणेश्वर तमारु सुवर्णघटित रत्नरचित चौरा० तदनन्तर अठ पहरि पानि कप्पूरक वासल सुन्दरी देल० नायके पएर पखालल शुचो भए वैसलाह "[2]

❀

दामोदर मिश्र

आपके जन्म-स्थान का कुछ निश्चित पता नही चलता। ओइनवारवशीय राजा कीर्त्ति सिंह के सभा-पडित होने के कारण अनुमान किया जाता है कि आपका जन्म मिथिला मे ही कही हुआ होगा। आपने 'वाणी-भूषण' नामक एक छन्दोग्रंथ की रचना की थी, जिसमे कीर्त्तिसिंह का भी उल्लेख हुआ है। आपका लिखा मैथिली का एक पद भी प्राप्त होता है।

उदाहरण

रतिमुखि समुख न करु अतिमान। हसि कए वए मधुर मधुवान ॥
आरति न करह रतिसुखबाध। एहि अवसर न गुनिअ अपराध ॥
हठ न उचित अति अलपहुँ दोस। सगरिओ रइनि गमओलह रोस ॥
गुनमति भए न करिअ अज्ञान। अरुण उगल आब होएत बिहान ॥
सुनु सुवदनि 'दामोदर' भान। एकर समाधर होएत निदान ॥[3]

❀

१. वही (षष्ठः कल्लोलः), पृ० ४६।
२. वही (अष्टम कल्लोलः), पृ० ६८-६९।
३. मैथिली-गीत-रत्नावली (बदरीनाथ झा, प्रथम सं०, २००६ वि०), पद सं० ५, पृ० ३।

विद्यापति ठाकुर

आपकी गणना हिन्दी के मूर्द्धन्य कवियो में है। मैथिली के तो आप सर्वश्रेष्ठ कवि हैं। मिथिला के घर-घर में आपके गीतो का प्रचार है। बंगाल[१], आसाम, उडीसा, नेपाल आदि स्थानो मे भी आपके गीत गाये जाते है। इस प्रकार, समस्त उत्तर-पूर्व भारत के आप अत्यन्त लोकप्रिय कवि हुए। इतना लोकप्रिय कवि मिथिला में शायद ही कोई दूसरा हुआ हो। यो तो आप भारत के विश्वविख्यात कवियो में एक है।

आपका जन्म दरभंगा जिले के बिसफी-ग्राम के एक प्रतिष्ठित ब्राह्मण-कुल में हुआ था।[२] पीछे यह ग्राम आपको मिथिला के राजा शिवसिंह की ओर से उपहारस्वरूप मिला।

आपके पूर्वपुरुष उच्च कोटि के विद्वान्, मिथिला-राजदरबार के पण्डित एवं मंत्री रह चुके है। आपके पिता सुप्रसिद्ध संस्कृत-ग्रंथ 'कृत्यचिन्तामणि' के रचयिता और महाराज गणेश्वर के सभापण्डित गणपति ठाकुर थे। आपने पं० हरिमिश्र से शिक्षा प्राप्त की थी, जिनके भतीजा सुप्रसिद्ध नैयायिक पं० पक्षधर मिश्र आपके सहपाठी थे। बचपन से ही आप अपने पिता के साथ महाराज गणेश्वर के दरबार में आते-जाते थे। पीछे कीर्त्तिसिंह के दरबार मे भी जाने-आने लगे। कीर्त्तिसिंह के बाद मिथिला की राजगद्दी पर क्रमशः भवसिंह, देवसिंह, शिवसिंह, पद्मसिंह, लखिमा देवी, विश्वास देवी, हरिसिंह, नरसिंह, धीरमती, धीरसिंह और भैरवसिंह बैठे, जिनके दरबार में भी आप वर्त्तमान थे। इसीसे प्रतीत होता है कि आप एक दीर्घजीवी पुण्यात्मा पुरुष थे।

आप पचदेवोपासक थे। आप बहुत बड़े शिव-भक्त भी थे। स्वय शिव का, भृत्य के रूप में, 'उगना' के नाम से आपके यहाँ रहने की कथा प्रसिद्ध है।

'व्यवहार-प्रदीपिका', 'दैवज्ञबानव' आदि ज्योतिष-ग्रन्थो के रचयिता 'हरपति' आप ही के पुत्र थे। हरपति के अतिरिक्त 'नरपति' और वाचस्पति नाम के आपके दो और पुत्र[३] थे। प्रसिद्ध कवयित्री 'चन्द्रकला' आपकी ही पुत्रवधू थी।

---

१. बगाल में आपके गीतों का इतना अधिक प्रचार हुआ कि अनेक बगाली कवियों ने इनके अनुकरण पर रचनाएँ कीं। बगीय विद्वानों ने मुक्तकंठ से इस बात को स्वीकार किया है कि आपकी प्रतिभा से समस्त वंग-साहित्य उज्ज्वल और सजीव हुआ। आज भी बगला-भाषाभाषी आपको अपना कवि मानकर गौरवान्वित होते हैं।

२. An Introduction to the Maithili Language of North Bihar Containing a Grammar, Chrestomathy & vocabulary (Grierson, Extra no. to Journal of the Asiatic Society of Bengal, Vol. LI, Part I, for 1882), P. 34

यह स्थान जरैल-परगना (दरभगा) के बेनीपट्टी थाने में, कमतौल स्टेशन से चार मील की दूरी पर है।

३. लोककठ से सगृहीत आपके एक पद के आधार पर कुछ विद्वान् आपकी 'दुल्लहि' नामक एक पुत्री का उल्लेख करते हैं। किन्तु इसमें मतभेद भी है। देखिए 'साहित्य' (वही, अक्टूबर, १९५७ ई०), पृ० ४५—४९।

आप कवि, कहानीकार, भू-वृत्तान्त-लेखक, इतिहासज्ञ, सगीतज्ञ और धर्मव्यवस्थापक भी थे। आपकी रचनाएँ तीन भाषाओ में मिलती हैं—सस्कृत, अवहट्ट (अपभ्र श) तथा मैथिली। सस्कृत में विभिन्न विषयो पर आपकी रचनाओ की सख्या १३ के लगभग है।[१] अपभ्र श या पुरानी हिन्दी मे आपकी दो रचनाएँ प्राप्त है—कीर्त्तिलता और कीर्त्तिपताका। कुछ लेखको के अनुसार कीर्त्तिलता को आपकी प्रथम रचना होने का श्रेय प्राप्त है। इसमे महाराज कीर्त्तिसिंह की वीरता, दानशीलता तथा राजनीतिज्ञता का विशद वर्णन है। कीर्त्तिपताका मे महाराज शिवसिंह की कीर्ति एव उनके आचरण का वर्णन है।[२]

मैथिली में ग्र थ के रूप मे आपकी कोई रचना नही मिलती। इस भाषा के अन्तर्गत आपके द्वारा रचे वे पद आते है, जो आपने समय-समय पर लिखे थे। ये पद तीन कोटि के है। प्रथम कोटि मे वे पद आते है, जो शृ गार-रस-सम्बन्धी है। ऐसे पदो में अधिकाश राधा-कृष्ण के नाम आये हैं। द्वितीय कोटि में भक्ति-विषयक पद है। इस कोटि में शिव-पार्वती, राधा-कृष्ण, गगा आदि के प्रति कवि ने अपनी भक्ति-भावना का प्रदर्शन किया है। तृतीय कोटि में कुछ ऐसे पद है, जिनमे फुटकर विषयो की चर्चा है।[३]

उदाहरण

(१)

मान बिहूना भोअना सत्तक देर्ज्ज राज।
सरण पइट्ठे जीअना, तीनू काअर काज॥[४]

(२)

अवसओ उद्यम लच्छि बस अवसओ साहस सिद्धि।
पुरुष विअक्खण जंचलइ तं तं मिलइ समिद्धि॥[५]

---

१. आपकी संस्कृत-रचनाओं के नाम इस प्रकार हैं—(१) भू-परिक्रमा, (२) पुरुष-परीक्षा, (३) लिखनावली, (४) विभाग-सार, (५) वर्षकृत्य, (६) गयापत्तलक, (७) शैव-सर्वस्वसार, (८) शैव-सर्वस्वसार-प्रमाणभूत-पुराण-संग्रह, (९) गगावाक्यावली, (१०) दानवाक्यावली, (११) दुर्गाभक्ति-तरगिणी, (१२) गोरक्ष-विजय और (१३) मणिमंजरी। अन्तिम दोनों नाटिकाएँ हैं। इनके गीत मैथिली में हैं।

२. कीर्त्तिलता और कीर्त्तिपताका इन दोनों की हस्तलिखित प्राचीन प्रतियाँ दरबार-लाइब्रेरी (नैपाल) में सुरक्षित हैं। कीर्त्तिलता का प्रकाशन म०म० हरप्रसाद शास्त्री, डॉ० बाबूराम सक्सेना तथा श्रीशिवप्रसादसिंह के सम्पादन में हो चुका है।

३. विद्यापति के पदों के कई संग्रह ग्र थाकार में अब प्रकाश में आ गये है। इनमें श्रीव्रजनन्दन-सहाय 'व्रजवल्लभ', श्रीनगेन्द्रनाथ गुप्त, प० शिवनन्दन ठाकुर, श्रीरामवृक्ष बेनीपुरी, डॉ० विमान-विहारी मजूमदार, डॉ० सुभद्र झा, डॉ० शहीदुल्ला आदि विद्वानों द्वारा सम्पादित सग्रह प्रमुख हैं। बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् से भी विद्यापति की सस्कृत और अपभ्र श में रचित कृतियों के अतिरिक्त एक प्रामाणिक पद-सग्रह प्रकाशित करने की योजना कार्यान्वित हो रही है।

४. कीर्त्तिलता (बाबूराम सक्सेना, द्वितीय सं०, २०१० वि०), पृ० २०।

५. वही, पृ० २६।

(३)

मध्यान्हे करी वेला संमद साज सकल पृथ्वीचक्र करेओ वस्तु विकाएँ आएवाज। मानुसोक मीसि पीसि वर आँगे आँग, उँगर आनक तिलक आनकाँ लाग। यात्राहूतह परस्त्रीक वलया भाँग। ब्राह्मणक यज्ञोपवीत चाण्डाल हृदय लूल, वेश्यान्हि करो पयोधर जटीक हृदय चूर। घने सञ्चर घोल हाथि, बहुत वापुर चूरि जाथि। आवर्त विवर्त रोलहो, नअर नहि नर समुद्र ओ॥[१]

(४)

अवरु वैचित्री कहओ का जन्हि केस धूप धूम करो रेखा ध्रुवहु उप्पर जा काहू काहु अइसेनओ सङ्गत करे काजरे चान्द कलङ्क। लज्ज कित्तिम कपट तारुन्न। धन निमित्ते घर पेम, लोभे विनअ, सोभागे कामन। विनु स्वामी सिन्दूर परा परिचय अपामन।[२]

(५)

ततहि धाओल दुहु लोचन रे जेंहि पथे गेलि वननारि।
आसा-लुबुधल न तेजए रे कृपणक पाछु भिखारि॥१॥ ध्रुव॥
सहजहि आनन सुन्दर रे भौह निवित (निमीलित) आखि।
पंकज मधुकर मधु पिबि रे उड़ए पसारलि पाखि॥२॥
आजे देखलि धनि जाइते रे रूप रहल मन लागि।
रूप लागल मन धाओल रे कुच कञ्चन गिरि सान्धि॥३॥
ते अपराधे मनोभव रे ततए धएल जनि वान्धि॥४॥
विद्यापति कवि गाविह रे गुण बुझ रसिक सुजान॥५॥
राजाहुँ रूप नरायण रे लखिमा देवि रमान॥६॥[३]

(६)

पुरुब भमर सम कुसुमे कुसुमे रम, पेअसि करए कि पारे।
डर न रावल पहु परतख भेलनहु, ओर धरि भेल विचारे।
भल न कएल तोहें सुमखि सरूप कोहोकँ, लेपन पिअ अपराधे।
सेहे सआनी नारि पिअगुणे परचारि, वेकतैओ दोस लुकावे।
निसि निसि कुमुदिनिससधर पेम जिमि, अधिक अधिक रस पावे।
भनइ विद्यापति अरे रे वरजुवति, अवहु करिअ अवधाने।
राजा सिवसिंह रूपनरायन, लखिमा देवि रमाने।[४]

---

१. कीर्त्तिलता (वही), पृ० ३०।
२. वही, पृ० ३४।
३. विद्यापति-गीत-संग्रह (वही), पृ० ७४।
४. विद्यापति-विशुद्ध पदावली (पं० शिवनन्दन ठाकुर, १९४१ ई०), पृ० ८३।

(७)

तातल सैकत वारिबिन्दु सम सुतमितरमणी समाजे।
तोहे बिसरि मन ताहे समरपल अब मझु हब कोन काजे ॥२॥
माधव हम परिणाम निराशा।
तुहु जगतारण दीन दयामय अतये तोहारि बिशोयासा ॥४॥
आध जनम हम निंदे गमाओल जरा शिशु कतदिन गेला।
निधुबने रमणी रसरङ्गे मातल तोहे भजब कोन बेला ॥६॥
कत चतुरानन मरि मरि जाओत न तुया आदि अवसाना।
तोहे जनमि पुन तोहे समाओत सागर लहरि समाना ॥८॥
भनथे विद्यापति शेष शमन भय तुया बिनु गति नहि आरा।
आदि अनादिक नाथ कहाओसि अब तारण भार तोहारा ॥१०॥[१]

(८)

कखन हरब दुख मोर हे भोलानाथ।
दुखहि जनम भेल दुखहि गमाएब, सुख सपनेहु नहि भेल हे भोलानाथ ॥
आछत चानन अबर गंगाजल, बेलपात तोहि देब, हे भोलानाथ ॥
यहि भवसागर थाह कतहु नहि, भैरव धरु कर आए हे भोलानाथ ॥
भन विद्यापति मोर भोलानाथ गति, देहु अभय वर मोहि हे भोलानाथ ॥[२]

❀

पन्द्रहवीं शती

कंसनारायण[३]

आपका निवास-स्थान मिथिला कहा गया है[४]।

आप ओइनवार-वंश के अंतिम राजा थे। विद्वानों का विचार है कि मैथिली-कवियों के आश्रयदाताओं में शिवसिंह के बाद आपका ही स्थान है। आपके दरबार में रहनेवाले कवियों में गोविन्द ठाकुर[५], काशीनाथ, रामनाथ, श्रीधर आदि के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

---

१. विद्यापति ठाकुर की पदावली (श्रीनगेन्द्रनाथ गुप्त, १९१० ई०), पद सं० ८३६, पृ० ४२४।

२. विद्यापति (मित्र-मजूमदार, हिन्दी-संस्करण, २०१० वि०), पद सं० ७७७, पृ० ५०७।

३. डॉ० विमानविहारी मजूमदार का कथन है कि सुगाँव अथवा ओइनीवंश के अन्तिम राजा लक्ष्मीनाथ का ही विरुद 'कंसनारायण' था। श्रीनगेन्द्रनाथ गुप्त ने लिखा है कि विद्यापति ने अपनी पुरुष-परीक्षा में अपने आश्रयदाता शिवसिंह को 'लक्ष्मीपति' कहा है। अतः, संभव है कि लक्ष्मीनाथ शिवसिंह का ही दूसरा नाम हो।—Patna University Journal (Vol. IV, No. 1, Jan. 1949), PP. 8, 9 तथा 10.

४. A History of Maithili Literature (वही), P. 220.

५. इनका परिचय इसी पुस्तक में यथास्थान प्रकाशित है।

आपके स्फुट पदो का सग्रह 'कसनारायण-पदावली'[१] के नाम से मिला है। वैसे लोचन-कृत 'रागतरगिणी' तथा विद्यापति-पदावली की नेपाली प्रति मे भी आपके दो-दो पद सगृहीत है।

उदाहरण

(१)

तनु सुकुमार पयोधर गोरा,
कनक लता जनि सिरिफल जोरा,
देखलि कमलमुखि बरनि न जाइ,
मन मोर हरलक मदन जगाइ,
भौंहाँ धनुष धएल तसु आगू,
तीष कटाख मदन शर लागू।
सवतरु सुनिअ ऐसन वेबहारा,
मारिअ नागर उबर गमारा।।
कंसनारायन कौतुकगावै,
पुनफले पुनमत गुनमति पावै।[२]

(२)

साए साए पिआकें कह विनती।
इह ओ वसन्तरितु ओतहिगमावथु एतएक भलि नहिं रीति।
घन मलयज रस परसें लागविस दुसह सुनिअ पिकनादे।।
अनलबरिस ससि निन्दओनहोअनिसिएतए आओर परमादे।
जेसवे विपरित सेसवे कहबकत के पतिआएत आने।।
जखने आओब हरि हमहि निवेदब जओराखत पँचवाने।।
सुमुखि समाद समादरे समदल नसिरासाह सुरताने।।
नसिराभूपति सोरमदेइपति कंसनराएन भाने।।[३]

१. इसमें आपके अतिरिक्त अन्य कवियों के पद भी सगृहीत हैं। इसकी एक प्राचीन हस्तलिखित प्रति दरबार-लाइब्रेरी (नैपाल) में सुरक्षित है। इसी प्रति की प्रतिलिपि डॉ० जयकान्त मिश्र (प्रयाग-विश्वविद्यालय) ने मँगवाई है।

२. रागतरंगिणी (वही), पृ० ७७।

३. रागतरंगिणी (वही), पृ० ६७। इस पद से ज्ञात होता है कि आप हुसेनशाह के पुत्र, बंगाल के सुल्तान नासिरुद्दीन नसरत शाह (सन् १५१८—३१ ई०) के समकालीन थे।

कृष्णदास

आपका नाम 'कृष्ण कारखदास' भी मिलता है।

आप दरभगा जिले के रोसडा नामक स्थान के निवासी थे।[१] आप कबीरपंथी थे और कबीर-पथ मे आपने 'कबीर-वचनवशीय' नामक एक नई शाखा चलाई थी, जिसका प्रमुख मठ रोसडा मे है। आपके द्वारा चलाई गई उक्त शाखा के साधु आज भी देश मे चारो ओर मिलते है।

आपके द्वारा रचित तीन छोटी-छोटी पुस्तके है—'विचार-गुणावली', 'त्रियाबोध' तथा 'आदि-उत्पत्ति'।[२] ये पुस्तके अवधी-भाषा में कबीर और उनके शिष्य धर्मदास के प्रश्नोत्तर के रूप मे लिखी गई है। इनमें प्रयुक्त छंद है—दोहा, चौपाई तथा सोरठा। कहते हैं, आपके द्वारा रचित 'कबीर-बीजक की टीका' तथा और भी हस्तलिखित पुस्तक उक्त रोसडा मठ में सुरक्षित है।

उदाहरण

धर्मदास तुम्ह सन्त सुजाना, एतना बात पुछौ मैं तो आना।
सत सुक्रीत अग्या मोहि दीन्हा जीव छोड़ाए काल सोलीन्हा॥
नर नारी जीव सकल जहाना, भ्रम वसो जीव काल समाना।
पाचम जनम राजा परवासा, बहुतो करहो भोग बोलासा॥
राजा घर होए कन्या कुमारी, जानहो ताहो बहुत नरनारी।
सखी सह लोन कर्त रंगराता, मातुपीता तेहि सुन्दर भ्राता॥[३]

गजसिंह

आप मिथिलाधिपति महाराज भैरवसिंह के पुत्र और असमति देवी के पति पुरुषोत्तम देव 'गरुड़नारायण' के आश्रित कवि थे।[४]

महाकवि विद्यापति के एक पद के आधार पर आप उनके समसामयिक माने गये है।

आपने कुछ मैथिली-पदो की रचना की थी, जिनमें दो 'रागतरगिणी' मे सगृहीत है। आपके एक-दो पद लोककठ मे भी मिलते हैं।

---

१. 'कबीर-वचनवंशीय मठ' रोसडा (दरभंगा) के वर्त्तमान महन्थ श्रीबलदेवदासजी से प्राप्त सूचना के आधार पर।

२. इन तीनों की हस्तलिखित प्रतियाँ बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् के हस्तलिखित-ग्रन्थ शोध-विभाग के सग्रहालय में सगृहीत हैं।

३. हस्तलिखित 'त्रियाबोध' से।

४. A History of Maithili Literature (वही), PP. 202-203.

उदाहरण

(१)

युगल शैल सिम हिमकर देखल एक कमल दुइ जोति रे ।
फूलल मधुरिफुल सिन्दुरे लोटाएल पाँतिबैसलि गजमोति रे ।।
आज देखल जत के पतिआएत अपुरुब बिहि निरमान रे ।
बिपरित कनक कदलि तरें शोभित थलपंकज के रूप रे ।।
गजसिंह भन एहु पूरब पुनतह ऐसन भजए रसमन्त रे ।
बुझए सकल रप नृप पुरुषोत्तम असमति देइ केर कन्त रे ।।[१]

(२)

हास बिसरि मुखशशि भेल मन्दा ।
अमिअ न वरिसए बिरसक चन्दा ।।
हे अनुरागिनि बाला बिरहेँ विकल फिरु हे ।
बलय ढरकि खसु हार भेल भारे ।।
निकरुन मनमथ पुनु पुनु मारे ।।
अरुण नयन दुहु बह बहु नोरा ।
मोतिसङ्ग जनि निचल चकोरा ।
धैरज धए रहु 'गजसिंह' भाने ।
नृप पुरुषोत्तम गुणक निधाने ।।[२]

❀

गोविन्द ठाकुर

आप मिथिलाके भदौरा-ग्राम-निवासी और ओइनवार-वश के अंतिम राजा 'कंसनारायण' के दरबार के प्रमुख कवि थे ।[३]

आपके पिता का नाम केशव ठाकुर और माता का नाम सोना देवी था । 'मत्र-कौमुदी' (१५२९ ई०) के लेखक देवनाथ ठाकुर आपके ही पुत्र थे ।

---

१. रागतरंगिणी (वही), पृ० ७२ । श्रीनगेन्द्रनाथ गुप्त की 'विद्यापति ठाकुर की पदावली' में यह पद विद्यापति के नाम पर संगृहीत है । भनिता इस प्रकार है—

भनइ विद्यापति एहु पूरब पुन तह ऐसनि भजए रसमन्त रे ।

बुझए सकल रस नृप शिवसिंह लखिमादेइकर कन्त रे ।।७।। वही, पद स० १६, पृ० ११ ।

२. मैथिली-गीत-रत्नावली (वही), पद स० २२, पृ० १२ ।

३. A History of Maithili Literature (वही), पृ० २२ । 'कंसनारायण—पदावली' में उपलब्ध १२ संख्यक पद में 'गोविन्द' नाम के एक कवि ने अपना आश्रयदाता कमलादेवी के पति वासुदेव नरेश को बतलाया है—(गोविन्द भन अरविन्द देवी कमला रमण रसबुझ वासुदेव नरेश) । कहा नही जा सकता, ये गोविन्द यही थे अथवा कोई दूसरे ।

आपने 'काव्य-प्रकाश' और 'काव्य-प्रदीप' की टीका लिखी थी। इसके अतिरिक्त 'कंसनारायण पदावली' मे मैथिली मे रचित ग्यारह पद ऐसे मिलते है, जिनके रचयिता भी आप ही कहे जाते है। उक्त पदो मे से सात[१] में तो कवि के नाम के साथ उनके आश्रयदाता (कंसनारायण) का नाम आया है और शेष चार[२] मे केवल कवि का नाम।

उदाहरण

(१)

साए साए काँ लागि कौतुके देखल निमिष लोचन आधे ॥
मोर मन मृग मरम वेधल विषम वान वेआधे।
गोरस विरस वासि विसेषल छिकेहु, छाडल गेहा ॥
मुरलि धुनि सुनि मन मोहल विकेहु, भेल संदेहा।
तीर तरङ्गिनि कदंब कानन निकट जमुना घाटे।
उलटि हेरैते उबटि परल चरन चीरल काटे।
सुकृत सुफल सुनह सुन्दरि गोविन्द बचन सारे।
सोरमरमन कंसनराएन मिलत नन्द कुमारे ॥[३]

(२)

उमत जमाए सखि हे करु।
उचित न विहि तोहि, की देखि लिखल मोहि, गौरि कुमारि रहथु बरु।
धन सम्पति हर, एकओ न थिक घर, की देखि धेरज मन धरु ॥
बाघ-छाल परिहन, ललित उरग बन, के परिछए, देखि सखि डरु।
ललित गौरि छवि, भनथि 'गोविन्द' कवि लोचन नीर निरखि डरु ॥[४]

चन्द्रकला

आप तरौनी ग्राम (दरभगा) की रहनेवाली थी।[५]

आप महाकवि विद्यापति की पुत्रवधू थी। विद्यापति के तीन पुत्रो मे आपके पति कौन थे इसका निश्चय नही हो सका है। विद्वानो का अनुमान है कि विद्यापति के द्वितीय पुत्र, प्रसिद्ध ज्योतिष-ग्रंथ 'देवज्ञ-बाधव' के रचयिता 'हरपति' ही आपके पति थे।[६]

---

१. ५५, ५७, ५६, १०१, १०२, १०७, तथा १२५ संख्यक पद।
२. ७२, ६६, १३६ तथा १४६ सख्यक पद।
३. रागतरंगिणी (वही), पृ० १००-१०१। श्रीनगेन्द्रनाथ गुप्त की 'विद्यापति ठाकुर की पदावली' मे भनिता बदलकर यह पद विद्यापति के नामपर सगृहीत है। भनिता इस प्रकार है—
सुकृति सुफल सुनइ सुन्दरि विद्यापति वचन सारे।
कंसदलन नारायन सुन्दर मिलल नन्द कुमारे ॥८॥
वही, पद सं० ५६, पृ० ३२।
४. मैथिली-गीत-रत्नावली (वही), पद सं० ८, पृ० ४-५।
५. महाकवि विद्यापति (वही), पृ० ७।
६. वही, पृ० ७।

आप परम विदुषी और संस्कृत की प्रकाण्ड पण्डिता थी। लोचन-कृत 'रागतरंगिणी' मे आपके द्वारा रचित एक पद संगृहीत है। इस पद के अन्त मे लोचन ने टिप्पणी दी है— 'इति विद्यापतिपुत्रवध्वा'।

उदाहरण

स्निग्ध कुञ्चित कोमलङ्कचगण्डमण्डित कोमलम्।
अधरविम्बसमानसुन्दर सरदृचन्द्र निभाननम्॥

जय कम्बुकण्ठ विशाललोचन सारमुज्वल सौरभम्।
बाहुबल्लि मृडाल पङ्कज हारशोभित ते शुभम्॥

शोभय सुन्दरिममहृदयं गद्गद हास सुदति निपुणम्।
उरपीन कठिन विशालकोमल यति युग्म निरन्तरम्॥

श्रीफलाकमला विचित्र विधातु निर्म्मल कुचवरम्।
श्यामा सुवेषा त्रिवलि रेखा जघन भार विलम्बिते॥

मत्तगजकर जघन युगवर गमन गतिवरटाजिते।
सुललित मन्द गमन करइ, जनि पतिसङ्ग वरटा भमइ॥

अतिरूपयौवन प्रथम सम्भव कि वृथा कथया प्रिये।
तेजह रूप विमोह परिहर शोक चिन्तित चिन्तये॥

उपयाव मदन व्याधि दुस्सह दहए पावक सेवनम्।
पवन दिसे दिसे दहए पावक युग्म दारजमम्बरम्॥

श्यामासवन्दिते ‒ अतिसमय गीत सुशोभिते।
आत्मवान समान सुन्दरि धार वर्षति सिञ्चये॥

सिञ्चह सुन्दरि ममहृदयम्, अधरसुधामधुपानमियम्।
चन्द्र कवि जयदेव मुद्रित मानतेज तोहें राधिके॥

वचन ममधर कृष्ण अनुसर किन्तु कामकला शुभे।
चन्द्रकलाहे वचन करसो, मानिनि माधव अनुसरसी॥[१]

❋

१. रागतरंगिणी (वही), पृ० ५३-५४। लोककण्ठ में 'चन्द्रकला' के नाम पर एक और पद मिलता है, किन्तु वही पद कुछ परिवर्त्तित-परिवर्द्धित रूप में 'विद्यापति' के नाम पर भी प्राप्त है। अतः, यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता कि वस्तुतः वह पद किसका है। पद इस प्रकार है—

चानन भेल विषम शर रे, भूषण भेल भारे।
सपनहु ने हरि आएल रे, गोकुल गेल द्वारे॥
खन खन हरी विलोकए रे, खन करए पुछारी।
ऊधो जाए मधेपुर रे, कहु इ परचारी॥
'चन्द्रकला' नहि जीवत रे, बध लागत भारी॥

चतुर्भुज[१]

आपका नाम 'चतुर चतुर्भुज' भी कहा जाता है। किन्तु, वस्तुत 'चतुर' अश का आपके वास्तविक नाम का विशेषणमात्र समझना चाहिए।

आपका निवास-स्थान मिथिला कहा गया है।[२]

आपने सस्कृत मे 'तात्पर्य-वर्णन' (महाभारत की टीका), 'गीतगोपाल' तथा 'हरिचरित' नामक ग्र थो की रचना की थी। इनमे अन्तिम ग्र थ की रचना श्रीहर्ष के 'नषधचरित' की परम्परा मे हुई है। मिश्रबन्धुओ ने आपके एक और ग्र थ 'भवानी-स्तुति' की चर्चा की है।[३] मैथिली मे कृष्ण-सम्बन्धी भी बहुत-से पदो की रचना आपने की थी, जिनमे से बारह 'कसनारायण-पदावली' मे सगृहीत है। आपका एक पद 'रागतरगिणी' मे भी मिलता है।

उदाहरण

(१)

साँझक अविथ भागें विहिजान, विमुखें पापवड अछए गेलान।
हमरेओ कन्त वसए परदेश, अथिक पथिक देखिमोहि कलेस॥
पथिकवास भमि अनतए लेह, हमरा दोसर तेसर नहि गेह।
चतुरचतुरभुज ई रस जानि, कौसले अभिमत करए सजानि॥[४]

(२)

नव तनु नव अनुराग। माधव। नव परिचय रस जाग॥
दुहु मन वसु एक काज। माधव। आँतर भए रहु लाज॥
दिन दिन दुहु-तनु छीन। माधव। एकओने अपन अधीन॥
विनय न एको भाख। माधव। निअ निअ गौरव राख॥
हृदय धरिअ जत गोए। माधव। नयन बेकत तत होए॥
चतुर 'चतुर्भुज' भान। माधव। प्रेम न होए पुरान॥[५]

❀

---

१. डॉ० जयकान्त मिश्र ने अपने ग्रथ में इस नाम के तीन कवियों की चर्चा की है। उन्होंने एक को 'साहित्य-विलास' (काव्य-प्रकाश के पचम अध्याय की टीका) का रचयिता, दूसरे को 'अद्भुत-सागर' का प्रणेता और तीसरे को 'विद्याकर-सहस्रकम्' नामक ग्रंथ में उल्लिखित व्यक्ति कहा है।
A History of Maithili Literature (वही), PP. 211-212 तथा 417.

२. (मिश्रबन्धु-विनोद), मिश्रबन्धु तृतीय भाग, द्वितीय सं०, १९८५ वि०, पृ० ६६६।

३. वही, पृ० ६६६।

४. रागतरंगिणी (वही), पृ० ११०।

५. मैथिलीगीत-रत्नावली (वही), पद स० ३५, पृ० १६।

जीवनाथ

आप मिथिला के निवासी थे। आपका जो एक पद 'रागतरंगिणी' में मिला है, उसके आधार पर मेधादेइ के पति 'रूपनारायण' ही आपके आश्रयदाता थे।[1]

आपके कुछ पद लोककठ में भी मिलते है, जिनमे शिव के विभिन्न रूपो का वर्णन है।

उदाहरण

सखि मधुरिपु सन के कतए सोहाओन
जे दिअ तन्हिक उपाम हे।
तसु मननेओछन सरद सुधानिधि
पङ्कज के लेत नाम हे॥ध्रु०॥
सखि आज मधुरिपु देखल मोञे हटिआ
लोचन जुगल जुडएला।
अधरवाँहि लोचने जखनें निहारलन्हि
वाँक कइए भौंह भङ्गा॥
तखनुक अवसर जागल पचसर
थानें थानें गेल अङ्गा।
दरसन लोभे पसार देल हमें
सखिमुखे सुनि वड रसी॥
तखने उपजुरस भेलिहुँ परवस
विसरलि दुधहुँ कलसी।
दानकलपतरु भेदिनि अवतरु
नृप हिन्दू सुलताने॥
मेधादेइपति रूपनराएन
प्रणवि जीवनाथ भाने (हे)।[2]

*

१. 'रूपनारायण' नाम के कई राजा हो गये हैं। महाकवि विद्यापति के आश्रयदाता महाराज शिवसिंह को भी 'रूपनारायण' कहा जाता था। कुछ विद्वानों की राय है कि इन्हीं की एक पत्नी 'मेधादेवी' थीं। इसी आधार पर डॉ० विमानविहारी मजूमदार आपको शिवसिंह का समकालीन मानते हैं।
—Patna University Journal (vol. IV, No. 1, Jan 1949), P. 6.

२. रागतरंगिणी (वही), पृ० १११-१२।

दशावधान ठाकुर[१]

आपका निवास-स्थान मिथिला में था। आपने मैथिली मे कुछ पदों की रचना की थी। उन पदो मे एक 'रागतरंगिणी' मे सगृहीत है।

उदाहरण

उपरे पयेधर नखरेख सुन्दर मृगमद पङ्के लेपला ।।
जनि सुमेरु ससिखण्ड उदित भेल जलधरजालें झाँपला
अभिरानि हे कपट करह कौं लागी।
कोन पुरुष गुने लुबुध तोहरमन रयनि गमओलह जागी ।।
कारनें कओने अधर भेल धूसर पुनु कोनें आरत देला।
दूधक परसें पवार धवल भेल अरुन मजिठ भएगेला ।।
नविपनारि गजें गंजि नडाडलि परसलि सूर किरने।
ऐसन देखिय कपट करह जनु वेकत नुकाओब कओने ।।
दसअवधान भन पुरुवपेम गुनि प्रथम समागम भेला।
आलमसाह प्रभुभाविनि भजिरहु कमलिनि भमर भुलला।।[२]

❀

(कविराज) भानुदत्त[३]

आपका नाम 'भानुकर' भी मिलता है।

आप दरभंगा जिले के 'सरिसव' ग्राम-निवासी थे।[४] आपके पिता का नाम गणपति[५] और पितामह का नाम म०म० महादेव था। आपका विवाह 'विवादचन्द्र' और 'पदार्थ-चन्द्र' के रचयिता प्रसिद्ध विद्वान् म०म० प० मिसरू मिश्र की बहन से हुआ था। आपके

---

१. 'दशावधान' शब्द का अर्थ 'दस वस्तुओं पर एक साथ अवधान रखनेवाला 'व्यक्ति' होता है। इस गुणवाचक शब्द का प्रयोग अनेक व्यक्तियों की उपाधि के रूप में भी किया गया है। कुछ विद्वान् इसे महाकवि विद्यापति की एक उपाधि मानते हैं। किन्तु डॉ० जयकान्त मिश्र के पास की 'कंसनारायण-पदावली' में एक नाम 'दशावधान ठाकुर' आया है, जिससे यह स्पष्ट हो जाता है कि यह किसी व्यक्ति की उपाधि न होकर उसका नाम है। 'पञ्जी-प्रबंध' में विद्यापति के समकालीन एक 'नरपति ठाकुर' नाम के कवि मिलते हैं, जिनका विरुद 'दशावधान' था। इनके पिता रुचिकर ठाकुर बताये जाते हैं। महाकवि विद्यापति के एक पुत्र भी नरपति ठाकुर थे। पता नहीं इनका विरुद क्या था।

२. रागतरंगिणी (वही), पृ० ८६।

३. आपके सम्बन्ध में विशेष विवरण के लिए देखिए प० रमानाथ झा (दरभंगा) का लेख 'Kaviraja Bhanudatta'—Patna University Journal (vol. III, Nos. 1 & 2, Sept. 1946-Jan. 47), PP. 1-14

४. वही, पृ० १४।

५ 'रस-पारिजात' में इनका नाम 'गणेश्वर' और 'गीता-गौरीपति' में 'गणनाथ' मिलता है।
—वही, पृ० ११।

एक पुत्र का भी पता चलता है, जिसका नाम जनार्दन उपनाम 'जानू') था। कुछ विद्वान् कृष्णमिश्र-रचित 'प्रबोधचन्द्रोदय' नाटक के टीकाकार म०म० रुचिकर को भी आपका पुत्र बतलाते हैं।

आपने अपनी एक कृति में चार-चार राजाओ के प्रति श्रद्धाञ्जलियाँ अर्पित की है। उनके नाम इस प्रकार हैं—'निजामशाह', 'राजावीरभान', 'राजाकृष्ण' तथा सग्रामशाह'। यह निश्चित रूप से नही कहा जा सकता कि इनमे आपके आश्रयदाता कौन थे।

संस्कृत में आपके चार ग्रंथ मिलते है—'रस-मजरी'[1], 'रस-तरगिणी', 'रस-पारिजात[2] और 'कुमार भार्गवीय चम्पू'। आपने मैथिली मे भी पदो की रचना की थी, जिनमें से एक, जो मिथिला-नरेश नरसिह के पुत्र तथा धीरसिंह और भैरवसिह के सौतेले भाई चन्द्रसिह के प्रति है, विद्यापति-पदावली की नेपाली पोथी मे सगृहीत है।

उदाहरण

कुमुद्‌बन्धु मलीन भासा
चारु चम्पक बन विकासा
शुद्ध पंचम गाव कलरव
कलय कण्ठी कुंज रे॥
रे रे नागर जो न देखव
छोड़ अंचल जाव पथ
नहि पथिक संचर
लाज डर नहि तो पराणी
दे मेराणी रे॥
सुनिअ वृन्दाजनक रोरा
चक चक्को विरह थोरा
निसि विरामा सघन
हकइत मुछना रे॥
धोए हलु जनि कएल उजल
अबहु न बल्लभ तुअ मनोरथ
काम पुरओ रे॥
हृदय उखलु मोतिम हारा
निफुल फुलु मालति माला
चन्द्रसिंह नरेस जीवओ
भानु जम्पए रे॥[3]

❀

१. इस ग्रंथ पर अनन्त मिश्र ने १६३६ ई० में 'व्यग्यार्थकौमुदी' नामक व्याख्या लिखी थी।

२. इस ग्रंथ का प्रकाशन पं० बदरीनाथ झा के सम्पादन में, मोतीलाल बनारसीदास (लाहौर) के यहाँ से १९३९ ई० में हुआ था।

३. विद्यापति (वही), पृ० ६०८। श्रीनगेन्द्रनाथ गुप्त की 'विद्यापति ठाकुर की पदावली' में यह पद कुछ परिवर्त्तनों के साथ विद्यापति के नाम पर संगृहीत है।—वही, पद सं० ३२२, पृ० १६४।

मधुसूदन[१]

आप मिथिला निवासी थे।[२] आपने मैथिली मे कुछ पदो की रचना की थी। आपका मैथिली मे रचा एक पद 'रागतरंगिणी' मे संगृहीत है।

उदाहरण

कोपर वचनें कन्ते देल कान,
की पर-कामिनि हरल गेआन।
की तन्हि बिसरल पुरुबक नेह,
की जीवन आवे पडल सँदेह॥
की परिनत भेल पुरुबक पाप,
की अपराधे कएल बिहि साप।
की सखि कओन करब परकार,
की अविनय देँहु परल हमार॥
की हमें कामकला एक घाटि,
की बहु समयक दूहे परिपाटि।
मधुसूदन भन मने अवधारि,
की धैरजें नहि मिलब मुरारि॥[३]

❀

माधवी

आप मिथिला-निवासिनी महिला थी।[४] प्रसिद्ध है कि आप चैतन्यदेव (सन् १४८५-१५२७ ई०) के समय मे हुई थी। उन दिनो आपकी अधिक रचनाएँ नही प्राप्त होती, किन्तु इतना निश्चय है कि आपने कुछ बड़े ही ललित पदो की रचना की थी।

उदाहरण

राधा माधव विलसहि कुँजक माझ
तनु तनु परस परल रस पीवइ
कमलिनी मधुकर राज
× × ×
सचकित नागर कांपइ थर थर
शिथिल होयला सब अंग।
गद्गद् [illegible] [illegible] भेगे अदरस
मन होयत तुअ संग॥

---

१ [illegible] इस नाम के दो-तीन [illegible] का पता चलता है, जिनकी रचनाएँ [illegible] हैं। यह कहना कठिन है कि आपने संस्कृत में कौन-सा रचना की थी।
२ A History of Maithili Literature (वही), P. 212।
३ [illegible] (वही) पृ० १०२।
४ [illegible] (द्वि० [illegible], प्रथम सं०, १९५३ ई०), पृ० २१४।

सो धनि चंद मुख नैन किये हेरबै
सुनबै अमियमय बोल।
इहं माँझे हिरदै ताप किये मेटब,
सोइ करब किये कोल॥
आइसन कतहु विलपति माधव,
सहचरि दूरहि हँसी।
अपरूप प्रेम विषादित अन्तर,
कह ताहि माधवी दासी॥[1]

❀

यशोधर

आपकी उपाधियाँ 'नव-कविशेखर' और 'कविशेखर' भी मिलती है। आपका निवास-स्थान मिथिला था। आप बगाल के नवाब हुसैनशाह (सन्१४९३-१५१९ई०) के समय मे हुए थे। 'रागतरंगिणी' में आपका एक पद उद्धृत है।

उदाहरण

तोहँ हँमँ पेम जतेदुरें उपजल, सुमर विसे परिपाटी।
आबे पर रमनि रङ्गरस भुलला है, कओंन कला हमें घाटी॥
भमर वर मोरे बोले बोलब कन्हाइ।
विरहतन्त जदि जान मनोभव, को फल अधिक जनाइ॥
सुनिअ सुमेरु साधुजन तुलना, सवकाँ महिमा घने।
तन्हि निज लोभें ठाम जदि छाड़ब, गरिमा गहवि कओंने॥
पुरुषहृदय जल दुअओ सहजें चल, अनुबधें बाधे थिराइ।
से जदि न थिर रह सहलें धारें वह, उचे ओ नीच पथे जाइ॥
भनइ जसोधर नर कविशेखर, पुहवी तेसर कोँहाँ।
साह हुसेन भृङ्ग सम नागर, मालति सेनिक ताँहाँ।[2]

❀

---

१. मध्यकालीन हिन्दी-कवयित्रियाँ (वही), पृ० २१४।

२. रागतरगिणी (वही), पृ० ६७। श्रीनगेन्द्रनाथ गुप्त की 'विद्यापति ठाकुर की पदावली' में यह पद कुछ परिवर्त्तन के साथ, भनिता बदलकर विद्यापति के नाम पर संगृहीत है। भनिता इस प्रकार है—

भनइ विद्यापति नव कविशेखर पुहुवी दोसर कहाँ।
साह हुसेन भृङ्ग सम नागर मालति सेनिक जहाँ॥१०॥
—वही, पद स० ४८४, पृ० २४५।

रुद्रधर उपाध्याय

आप मिथिला-निवासी थे। आपके पिता का नाम 'लक्ष्मीधर' था। आप सस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान् थे। सस्कृत मे आपके लिखे 'श्राद्ध-विवेक', 'पुष्पमाला', 'वर्षकृत्य', 'व्रत-पद्धति', 'शुद्धि-विवेक' आदि ग्रंथ मिलते है। आपने कुछ मैथिली-पदो की भी रचना की थी, जिनमे से एक विद्यापति-पदावली की नैपाली-पोथी मे प्राप्त है।

उदाहरण

बोलितहु साम साम पए बोलितह
नहि से से त बिसवासे।
अइसन पेम मोर विहि विघटाओल
दूना रहलि दुरासे॥
सखि हे कि कहब कहइ न जाए।
मन्द दिवस फल नयाहि न पारिअ
अपटहि कुपुत कन्हाइ॥
जलहु कथन जओ भरमहु बोलितहु
जलथल थपितहु वेदे।
अनुपम पिरिति पराइति पललै
रहत जनम धरि खेदे॥
अइसना जे करिअ से नहि करवे
कवि रुद्रधर एहु भाने॥[1]

❀

लक्ष्मीनाथ[2]

रचनाओ मे आपका नाम 'लखिमिनाथ' मिलता है, जो, आपके मूल नाम का ही विकृत रूप है। आप मिथिला के निवासी थे।[3] आपने मैथिली मे वहुत-से पदो की रचना की थी। उक्त भाषा के आप बडे ही लोकप्रिय कवि हो गये है। विद्यापति-पदावली की नैपाली-पोथी मे आपका एक, और 'कसनारायण-पदावली' मे आपके चार[4] सुन्दर पद सगृहीत है।

---

१. विद्यापति (वही), पृ० ६०६। श्रीनगेन्द्रनाथ गुप्त की 'विद्यापति ठाकुर की पदावली' में यह पद विद्यापति के नाम पर संगृहीत है। श्रीगुप्त महोदय ने अन्त में एक पंक्ति इस प्रकार जोड़ दी है—

राजा सिवसिंह रुपनारायन, लखिमादेवि रमाने ॥८॥

—वही, पद सं० ५०१, पृ० २५३ ॥

२. इस नाम के कई व्यक्ति मिथिला में हो गये हैं। सुगौंव अथवा ओइनीवश के अन्तिम राजा का भी यही नाम था, किन्तु पद-रचना में वे अपना नाम 'कसनारायण' रखा करते थे।

३. A History of Maithili Literature (वही), P. 218

४. ३३, ३६, ५२, और १०३ सख्यक पद।

उदाहरण

माधव ए बेरि दुरहि दुर सेवा ।
दिन दस धैरज धरु यदुनन्दन
हमे तप बरि बरु देवा ।।[१]
करइ कुसुम बेकत मधु न रहते
हठ जनु करिअ मुरारि ।
तुअ अह दाप सहए के पारत
हमे कोमल तनु नारि ।।
आइति हठ जनो करबह माधव
जनो आइति नहि मोरी
कानि बंदरि उपभोग न आओत
उहे की फूल पओवइ तोलो ।।
एतिखने अमिअ बचन उपभोगह
आरति अदिने देवा ।
लखिमिनाथ भन सुन यदुनन्दन
कलियुग निते मोरि सेवा ।।[२]

❀

(परमहंस) विष्णुपुरी[३]

अपनी रचनाओ मे आपने अपने को कही 'तीरभुक्तिपरमहस' आर कह। 'तीरभुक्ति सन्यासी' कहा है। संन्यास के पूर्व आपका नाम 'रामपति' या 'रमापति' था।[४]

आप दरभंगा जिले के तरौनी-ग्राम-निवासी थे।[५]

---

१. इस चरण का यह पाठान्तर भी मिलता है—'दिन दस धैरज धरु यदुनन्दन हमेहि उमगि रस देवा'।

२. विद्यापति (वही), पृ० ६०६। श्रीनगेन्द्रनाथ गुप्त की 'विद्यापति ठाकुर की पदावली' में यह पद विद्यापति के नाम पर संगृहीत है।—वही, पद स० १६३, पृ० ८४।

३. इसी नाम का विकृत-रूप 'विधुपुरी' भी कहीं-कहीं मिलता है। आपके विशेष परिचय के लिए देखिए प० रमानाथ झा का लेख 'Parmhansa Vishnupuri; His identity and age.—Patna University Journal (vol. I, No. 2, Jan. 1945), PP.7-20. तथा श्रीयुत् मंजूलाल मजूमदार का लेख 'सतविष्णुपुरी जी और उनकी भक्ति रत्नावली' 'हिन्दुस्तानी' (वही, जनवरी १९३८ई०), पृ० १-१६।

४. सन्यास के पूर्व के आपके दो और नामों (विष्णुशर्मा और वैकुण्ठपुरी) की चर्चा कुछ लेखकों ने की है —देखिए 'विष्णुभक्तिरत्नावली' (कलकत्ता-संस्करण) की प्रस्तावना (Patna University Journal)

५. Patna University Journal (वही), P. 11, आपके नाम पर उक्तग्राम में 'विष्णुपुरैनी डीह' आज भी प्रसिद्ध है।

आप श्रीधर के पौत्र और रतिधर के पुत्र थे। आपकी माता का नाम 'मौरा' था। कहते है, सन्यास लेने के बाद आपने एक विवाह किया था। महादेव नाम के आपके एक पुत्र की चर्चा मिलती है, जो आपकी इसी द्वितीय पत्नी से उत्पन्न कहे जाते है। दरभगा-राज के सस्थापक म०म० महेश ठाकुर आपके निकट सम्बन्धियो में थे। 'चैतन्य-चरितामृत' के लेखक कृष्णदास कविराज ने आपको माधवेन्द्रपुरी का, 'गौडज्ञानोद्देशदीपिका' के लेखक कवि कर्णपुर ने आपको जयधर्म का और हिन्दी-विश्वकोषकार ने आपको मदन-गोपाल का शिष्य कहा है। प्रथम मत में विश्वास करनेवालो का कहना है कि वृद्धावस्था मे आपका साक्षात्कार महाप्रभु चैतन्यदेव से भी हुआ था। 'प्रेमचन्द्रिका' के रचयिता श्रीपरमानन्दपुरी आपके मित्र कहे जाते है।

आपकी गणना बगाली वैष्णव-धर्म के प्रवर्त्तको मे होती है। आपका तथा आपकी रचनाओ का जितना अधिक प्रभाव उक्त धर्म पर पडा, उतना कम ही व्यक्ति अथवा रचना का पडा होगा।

आप सस्कृत के प्रकाड पडित थे। सस्कृत में लिखा आपका एक ग्रथ 'विष्णु-भक्ति-रत्नावली'[१] मिलता है। इसकी रचना के सम्बन्ध मे तीन विभिन्न किवदन्तियाँ है। तीनो से निष्कर्ष-रूप मे यह ज्ञात होता है कि आपने इसकी रचना पुरी (पुरुषोत्तमक्षेत्र) के श्रीजगन्नाथदेवजी के चरणो पर अर्पित करने के लिए की था।[२] मैथिली मे भी आपने कुछ पदो की रचना की थी। आपके द्वारा रचित एक पद विद्यापति-पदावली की नैपाली-पोथी मे प्राप्त है।

उदाहरण

(१)

प्रथम बएस जत उपजल नेह।
एक पराण दौ एकजनि देह॥
तहसन पेम जदि् विसरह भोर।
काठक चाहिक विहि तञ्ञ तोर॥
ए प्रभु इ कुवन तेजह नारि।
तोह बिनु नागर कञोन तुहारि॥

---

१. इस ग्रंथ का बंगला में अनुवाद १५वीं शती में ही 'कृष्णदास लौरिया' नामक व्यक्ति ने किया था। कलकत्ता से बंगाब्द १३१८ में पं० मनमोहन वन्द्योपाध्याय, द्वारा किया हुआ उसका एक बँगला अनुवाद भी प्रकाशित हुआ। १९१२ ई० में प्रयाग के पाणिनि-ऑफिस से भी इसके प्रकाशित होने की सूचना मिली है।

२. 'हिन्दुस्तानी' (वही), पृ० ३। हिन्दी-विश्वकोषकार ने इसी नाम के एक अन्य कवि की चर्चा करते हुए उन्हें 'भगवद्भक्ति-रत्नावली,' 'भागवतामृत' 'हरिभक्ति-कल्पलता,' और 'वाक्य-विवरण' नामक चार ग्रंथों का रचयिता बतलाया है। किन्तु श्रीमंजुलाल मजूमदार का अनुमान है कि वे आपसे अभिन्न व्यक्ति रहे होंगे।—वही, पृ० ३।

सुपुरुष चिन्हिक एहे परिणाम।
जेसन प्रथम तैसन अवसान॥
टुटल पेम नहि लाग एक ठाम।
विष्णुपुरी कह बुझसि विराम॥[१]

(२)

हे सखि हे सखि कहिओ न जाहे। नन्दक अङ्गना कइसन उछाहे॥
नन्दक नन्दन त्रिभुवन सारे। यशोदें पाओल ननुजे कुमारे॥
मन भेल हरखित देखि तनुरूपे। जनि भेल उदित दीप अंधकूपे॥
आसलता पल्लव जनिदेला। मेदिनि सुरतरु-आँकुर भेला॥
'विष्णुपुरी' कह सुनह गोआरी। परम जोति अवतरल मुरारी॥[२]

❀

श्रीधर

आपकी रचनाओ में आपका नाम 'सिरिधर' मिलता है, जो आपके मूल नाम का ठेठ-रूप है।

आपका निवास-स्थान मिथिला था। आप महाराज कंसनारायण के दरबार में थे। आपका लिखा 'विद्याविनोद-नाटक-तत्र' नामक एक ग्रथ नैपाल के राजगुरु, हेमराज के पुस्तकालय मे मिला है। आपने मैथिली मे भी कुछ पदो की रचना की थी, जिनमें एक विद्यापति-पदावली की नैपाली पोथी मे सगृहीत है।

उदाहरण

का लागि सिनेह बढ़ाओल, सखि अहनिसि जागि।
भल कए कपट अतुलओलन्हि हम अबला बध लागि॥
मोरे बोलें बोलब सुमुखि हरि परिहरि मने लाज।
सहजहि अथिर जौबन धन तहु जदि बिसरए नाह।
भेलहु धनक कुसुमसम जीवन गेलेहि उछाह॥
पिया बिसरल तह सबे लटहु
कवि सिरिधर हेन भान।
कंसनराएन नृपवर मोरदेवि रमान॥[३]

❀

१. विद्यापति (वही), पृ० ६०५।
२. मैथिली-गीत-रत्नावली (वही), पद स० ७, पृ० ४।
३. विद्यापति (वही), पृ० ६०६।

हरपति

महाकवि विद्यापति के द्वितीय पुत्र होने के कारण आपका निवास-स्थान दरभंगा-जिले का बिसफी-ग्राम माना जाता है। कहा जा चुका है कि कुछ विद्वानो के अनुसार आप प्रसिद्ध कवयित्री 'चन्द्रकला' के पति थे।[१] आप ज्यौतिष-शास्त्र के प्रकाण्ड विद्वान् कहे गये है। उक्त विषय पर सस्कृत में आपके लिखे दो ग्र थ मिलते है—'व्यवहार-प्रदीपिका' तथा 'दैवज्ञ बान्धव'।[२] प्रथम ग्र थ मे आपने अपने को 'मुद्राहस्तक' (सिक्के की मुहर रखनेवाला) कहा है।

आपने मैथिली मे भी कुछ पदो की रचना की थी।

उदाहरण

(१)

विधिवस नयन पसारल हरिक सिनेह।
गुरुजन गुरुतर डरे सखि, उपजल जिवहुँ सन्देह।
दुरजन भीम भुजंगम बम कुवचन विष सार।
तेंह तीखें विषे जनि मारवल लाग परम कनियार।
परिजन परिचय परिहर हरिहर परिहर पास।
सगर नगर बढ़ पुरजन घरेघरे कर उपहास।
पहिलुक पेमक परिभव दुसह सकल जग जान।
धैरज धनि धर मने गुनि कवि 'हरपति' भान।[३]

(२)

करु परसन मुख रे। होअओ हृदय-सुख रे।
न गोअ वदन-विधु रे। बरिसओ मृदु मधु रे।
न करु कसिस धनु रे। हनए मदन तनु रे।
हमे अनुगत जानि रे। बिहुँसि मिलह धनि रे।
तोहर हमर चित रे। दुइ रह अनुचित रे।
कवि 'हरपति' कह रे। पिय रसवश रह रे॥[४]

*

१. देखिए इसी पुस्तक में कवयित्री 'चन्द्रकला' का परिचय।

२. इस ग्रंथ में लेखक का नाम 'हरदत्त' लिखा है। इसी कारण कुछ विद्वान् इसे 'हरपति' का ग्रंथ होने में सदेह करते हैं।

३. विद्यापति-पदावली (श्रीकुमुद विद्यालकार, प्रथम सं०, २०११ वि०, भूमिका), पृ० ११। श्रीनगेन्द्रनाथ गुप्त की 'विद्यापति ठाकुर की पदावली' में यह पद भनिता बदलकर विद्यापति के नाम पर सगृहीत है। भनिता इस प्रकार है—पहिलुक पेमक परिभव दुसह सकल जन जान। धैरज धनि धर मने गुनि कवि विद्यापति भान ॥४॥ —वही, पद स० २७२, पृ० १३८।

४. मैथिली-गीत-रत्नावली (वही), पद स० ४, पृ० ३।

सोलहवीं शती

कृष्णदास[1]

सुप्रसिद्ध कवि गोविन्ददास के पिता होने के कारण आप दरभंगा जिले के लोहना-ग्राम-निवासी माने जाते है। गोविन्ददास के अतिरिक्त आपके तीन पुत्र[2] और थे। वे भी विद्वान् और कवि हुए। आपने मैथिली मे कुछ पदो की रचना की थी।

उदाहरण

वर देखह सखि आइ। हेमव जगत जेहि लएलाह जमाइ॥
पाँच वदन शिर जटा। एक पञ् सोभए ललाट शशिफोटा॥
विपरित लोचन तीनी। ताहि में एक बरए अगिनी॥
बयस बरख लाख चारी। बारि मोरि भोरि गौरी कुमारी॥
एहन मिलल धिआ नाहे। कोन परि होएत गौरि निरबाहे॥
कर जोड़ि भन कृष्णदासा। गौरि-सहित हर पूरथु आशा॥[3]

गदाधर

आपका नाम 'गजाधर' भी मिलता है, जो आपके मूल नाम का विकृत रूप है।

आप मिथिला-निवासी और मिथिला के लक्ष्मीनारायण के धर्माधिकरणिक थे। आपके ही वश मे बनैली-राज्य (पूर्णिया) के संस्थापक राजा दुलार चौधरी हुए। आपने मैथिली में कुछ पदो की रचना की थी।

उदाहरण

आसलता हम लाओल सजनी प्रेम पटाओल आनि।
उठितहिं अँकुर भाङ्गल, किदहुँ दैवसँ कानि।
कतए गेलाह से बालम, जनि बिनु जगत अन्हार॥
अपन करम दोसेँ सुन्दर, उसरल मदन-पसार।
चान-चऊगुन तनि मुख रुचिर अंग अमलान॥
खन्जन सम दुहु लोचन, हेरिताहिँ हरए गेआन।
अधर सुधा-मधु-सागर, वचन अमिअ-रस-सार।
सुमिरि तनिक गुण गौरव, नयन बहए जलधार॥
राए 'गदाधर' गाओल, मदन सहित अनुराग।
प्रियजन बिनु जगजीवन, केवल गरुअ अभाग॥[4]

१. इस नाम के एक कवि १५वीं शती में भी हो गये हैं। उनका परिचय इसी पुस्तक में यथास्थान मुद्रित है।

२. इनके नाम इस प्रकार है—गंगादास, हरिदास और रामदास। गोविन्ददास के अतिरिक्त इन सभी के भी परिचय यथास्थान दिये गये हैं।

३. मैथिल-गीत-रत्नावली (वही), पद सं० २३, पृ० १३।

४. वही, पद सं० १०, पृ० ५-६।

गोविन्ददास[१]

आप मैथिली के एक असाधारण कवि, संस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान्[२] और भगवान् कृष्ण के अनन्य भक्त थे।[३]

आपका जन्म दरभंगा जिले के लोहना नामक ग्राम के एक श्रोत्रिय ब्राह्मण-कुल में हुआ था।[४] आपके पिता का नाम कृष्णदास झा था। आप चार भाई थे।[५] चारो प्रसिद्ध विद्वान् और कवि हुए। आपने अपनी रचनाओ मे कही-कही 'भूपनरोत्तम' की चर्चा की है। कहा नही जा सकता, ये कौन थे। मैथिली-साहित्य में महाकवि विद्यापति के बाद आपका ही स्थान है। आपके द्वारा रचित 'कृष्णलीला' नामक एक काव्य-ग्रंथ की चर्चा सुनी जाती है,[६] किन्तु उसकी कोई प्रति अभीतक उपलब्ध नही हो सकी है। आपके बनाये बहुत-से फुटकर पद निश्चय ही मिले है। उन पदो के अर्थगाभीर्य तथा उनकी ललित एव श्रुतिमधुर शब्द-योजना का मैथिली-साहित्य मे एक विशेष स्थान है। विद्यापति के पदो की तरह बँगला-भाषाभाषियो ने आपके पदो को जितना अपनाया और प्रचारित किया उतना और किसी ने नही। यही कारण है कि उन पदो पर बँगला-भाषा की छाया दीखती है।

उदाहरण

(१)

भजहु रे मन नन्दनन्दन अभय चरणारविंद।
दुलभ मानुष जनम सत्संग तरह ए भवसिन्धु॥
शीत आतप बात बरषा ए दिन यामिनी जागि।
विफल सेवन कृपण दुरजन चपल सुख समलागि॥
इ धन यौवन पुत्र परिजन एतैक अछि परतीति।
कमल दल जल जीवन टलमल भजहु हरिपद नीति॥
श्रवण कीर्तन स्मरण बन्दन पादसेवन दास।
पुजन ध्यान आत्मनिवेदन गोविंददास अभिलाष॥[७]

---

१. आपके जीवन और काव्य पर दरभगा जिले के निवासी श्रीनरेन्द्रनाथ दास ने एक सुन्दर ग्रथ लिखा है, जो बिहार-राष्ट्रभाषा परिषद् से प्रकाशित होनेवाला है।

२. आपकी विद्वत्ता का पता आपके भाई रामदास जी की 'आनन्दविजय-नाटिका' से लगता है।

३ आपकी कृष्ण-भक्ति के सम्बन्ध में प्रसिद्ध किंवदन्ती के लिए देखिए 'गोविन्द-गीतावली' (श्रीमथुराप्रसाद दीक्षित, १९८९ वि०), पृ० १२।

४. गोविन्द-गीतावली (वही, भूमिका), पृ० १०।

५. भाइयों के नाम वय क्रम से इस प्रकार थे—गंगादास झा, गोविन्ददास झा, हरिदास झा और रामदास झा।

६. पारिजातहरण (वही, भूमिका), पृ० १२।

७. गोविन्द-गीतावली (वही), पृ० २।

(२)

नन्दनन्दन संग मोहन नवल गोकुल कामिनी।
तपन-नन्दिनी तीर भल बनि भुवन मोहन लाविनी॥
ता थैया थैया बाज पखाओज मुखर कंकण किंकिणी।
विलस गोविन्द प्रेम आनंद सग नव नव रंगिनी॥
चारुचित्र दुहूक अंबर पवन अञ्चल दोलिनी।
दुहु कलेवर तरल श्रमजल मोति मरकत हेम मनि॥
उरु विलोलित बाजत किंकिणी नुपुर ध्वनि संगिया।
ग्रीवडोलिनि नयन नाचनि संग रसवति रंगिया॥[1]

(३)

कुञ्चित केसिनि निरुपम वेशिनि, रस आवेसिनि भगिनि रे।
अधर सुरङ्गिनि अङ्ग तरंगिनि, सङ्गिनि नव नव रंगिनि रे।
सुन्दरि राधे आवए रे बनी।
व्रजरमणी गण मुकुट मनी॥ ध्रुव॥
कुञ्जर गामिनि मोतिम दामिनि, दामिनि चमक निहारिनि रे।
अभरण धारिणि नव अनुरागिनि, श्यामक हृदय विहारिणि रे।
नव अनुरागिनि अखिल सोहागिनि, पञ्चम रागिनि मोहिनि रे।
रास विलासिनि हास विकासिनि, गोविन्ददास चित चोरिनि रे।[2]

(४)

कुन्दन कनक कलित कर कङ्कण कालिन्दि कूल बिहारी।
कुञ्चित कच केसर कुसुमाकुल, कामिनि कर धारी।
जय जय जग जीवन यदुवीर।
जलधर जीति जोति जसु जोहिते युवतिक यूथ अधीर॥
पदुमिनि पानि परस पुलकायित परिजन प्रेम पसार।
पहिरन पीत पतनि पतिताञ्चल पद पङ्कज परचार॥
रमणी रमन रतन रुचिरानन, रञ्जित रति रस रास।
रसना रोचन रसिक रसायन रचयनि गोविन्ददास॥[3]

---

१. गोविन्द-गीतावली (वही), पृ० ६।
२. मिथिला-मिहिर (मिथिलांक, १९३६ ई०), पृ० ४१।
३. वही, पृ० ४१-४२।

दामोदर ठाकुर

आपका निवास-स्थान दरभंगा जिले का भौर-ग्राम था।[1] आपके पिता का नाम चन्द्रपति ठाकुर और पितामह का नाम देवठाकुर था। आप वर्त्तमान दरभगा-राजवश के सस्थापक महामहोपाध्याय महेश ठाकुर[2] के बडे भाई थे। आपके सभी भाई बडे विद्वान् थे और उन सब ने गाटा (छत्तीसगढ), बस्तर (मध्यप्रदेश), दिल्ली आदि कई दरबारो मे सम्मान प्राप्त किया था।

आपके द्वारा रचित कई ग्र थो की चर्चा की जाती है, जिनमे 'श्री १०८ विष्णु-प्रतिष्ठा' ही प्रमुख है। आपने मैथिली मे भी कुछ पदो की रचना की थी।

उदाहरण

जगत जननि मा गोचर मोर। के नहिं भैल शरणागत तोर ॥१॥
सब दुरित समुचित फल पाव। हमर विकल मनदशोदिश धाव ॥२॥
की तोहि पड़ल गुरु अपराध। तैं भेल सकल मनोरथ बाध ॥३॥
होहु प्रसन्न मा दूरि करु रोष। सहज छमिय सब बालक दोष ॥४॥
कर जोरि गोचर करु दामोदर भान। अपनहिं हाथ दिअ वरदान ॥५॥[3]

धीरेश्वर

आपका निवास-स्थान मिथिला था। आप मिथिला के आइनवार-वशीय महाराज रणसिंह 'दुर्लभनारायण' के पुत्र महाराज विश्वनाथ 'नरनारायण' के आश्रित कवि थे। आपने भी मैथिली मे कुछ पदो की रचना की थी, जिनमे से एक विद्यापति-पदावली की नैपाली पोथी मे सगृहीत है।

उदाहरण

मुख दरसने सुख पाओला। रस विलसि ने भेला ॥
सारद चान्द सोहाओ ना। उगतहि भय गेला ॥
हरि हरि विहि विघटाउलि। गजगामिनि बाला ॥
गुन अनुभवे मन मोहला। अवसादल देहा ॥
दुलभ लोभे फल पाओला। आवे प्राण सन्देहा ॥
मेनका देवि पति भूपति। रस परिणति जाने ॥
नर नारायण नागरा। कवि धीरेसर भाने ॥[4]

❀

१. मिथिला भाषामय इतिहास (बखशी म०म० श्रीमुकुन्द शर्मा), पृ० १६-१७।
२. इनका परिचय इसी पुस्तक में यथा-स्थान मुद्रित है।
३. मिथिला-गीत-सग्रह (भोल झा, चतुर्थ भाग), पृ० १।
४. विद्यापति (वही), पृ० ६०८। श्रीनगेन्द्रनाथ गुप्त की 'विद्यापति ठाकुर की पदावली' में यह पद किंचित् परिवर्त्तन के साथ विद्यापति के नाम पर संगृहीत है। देखिए वही, पद सं० ४३, पृ० २३।

पुरन्दर

आपका निवास-स्थान मिथिला था। आप प्रभावती देवी के पति 'जगनारायण' नाम के किसी मोरग-महीपति के दरबार मे थे। आपके नाम के पहले कही-कही 'कुमर' शब्द मिलता है, अत संभव है कि आप स्वय भी किसी राजवंश के हो। मैथिली में आपके कुछ पद मिलते है।

उदाहरण

पुरुखसार हम आनि मिलाओल हरि न चिन्हल तोहेँ राही।
नीर-विन्दु बोलि हीर उपेखल एहेन भरम होअ काही॥
सुन्दरि ! दुरि करु मन अभिरोस।
अपन अकौशल निधि विघटओलह, लएबह कओनक दोस॥
कतन कुसुम-रस मधुकर बिलसए, तेँ नहि करिअ विषाद॥
उपगत पाहुन जँ न सम्भाखिअ, मालतिकाँ अपवाद॥
अपन अपन गौरव सब राखए, कुमर 'पुरन्दर' भान।
प्रभावति देइपति मोरङ्ग-महीपति, 'जगनारायण' जान॥[१]

❀

बळवीर

आप मिथिला-निवासी थे।[२] आपने १६०८ वि० में 'डंगव-पर्व' नामक ग्रंथ बनाया, जिसमें अधिकतर दोहा-चौपाई-छद प्रयुक्त है। आपकी रचना का उदाहरण नही मिला।

❀

(कुमार) भीषम

आप मिथिला-निवासी और मोरंग के राजा (प्रभावती देवी या धर्मदेवी के पति आर धीरसिंह के पुत्र) राजा जगनारायण के आश्रित कवि थे।[३] कहते है, उक्त राजा के आश्रित कवियो मे आपका स्थान बहुत ऊँचा था। आपके नाम के पहले भी कही-कही 'कुमार' शब्द भी आया है। अत, सभव है कि आप भी किसी राजवश के ही हो।

मैथिली में आपने कुछ पदो की रचना की थी। कसनारायण-पदावली' में आपका एक, और 'रागतरगिणी' मे आपके तीन पद सगृहीत है।

उदाहरण

(१)

ससधर सहस सार वटुराव तैअओन वदन पटन्तर पाव॥
देख देख आइ, सरगक सरवस उरवसि जाइ॥ध्रुवम्॥
विविध विलोकन अति अभिराम मनहुन अवतर नयन उपाम॥
निकनिक मानिक अरुनिम जोति सहजे धवल देखिअ गजमोति॥

---

१. मैथिली-गीत-रत्नावली (वही), पद स० १२, पृ० ७।
२. मिश्रबन्धु-विनोद (प्रथम भाग, वही), पृ० २७०।
३. Patna University Journal (Vol. IV, No. 1, Jan. 1949), P. 6। आपके आश्रयदाता राजा लक्ष्मीनारायण भी बताये जाते हैं।

जातरूपात मजलें अति सेत ऐसन वसन तुलना के देत ।।
कांचिकांचि रोमावलि भास उपरतरल हारावली फास ।।
कर कौशल मनमथ मनलाए कुचसिरिफल नहि होअए नवाए ।।
करिवर उरु उपमा नहि पाव अपनहि लाजें सङ्कोचि नुकाव ।।
हरिहर प्रनयिए भीषम भान, प्रभावति पति जगनरायन जान ।।[१]

(२)

धवल जमिनि धवल हर रे धवल चाँदन चीर ।
निफलजनक विहार रे गिरिसँ विसह पिअ थोर ।।ध्रु०।।
सजनिजा नवकजौवन नवक अनुरेनबकनवअनुराग
सारिखेत समेत हेमत पिआ नहि मोर अभाग ।।
वारि सँ वरिसए गगन जल रे परसँ पँचसर सोस
गरजें चलो कलिका हि आलिङ्गओपा उसनिज नहिदोस ।।
धैरजधर धनिकन्त आओत कुमर भीषम भान
ईस विन्दक नरनाराएन पति धरमा देइ रमान ।।[२]

❀

भूपति सिंह

आपका उपनाम 'रूपनारायण' था। 'नृपनारायण', 'नृपसिंह', 'भूपनारायण' तथा 'सिंहभूपति' आदि भी आपके नाम मिलते है।

ओइनवार-वंशीय मिथिला-नरेश महाराज हरिनारायण के पुत्र होने के कारण आप मिथिला-निवासी माने जाते है। आपका राज्यकाल सन् १५४२ से ४५ ई० तक माना जाता है। आपके पुत्र महाराज 'कंसनारायण'[३] भी एक अच्छे कवि थे। आपके रचे स्फुट पद मैथिली मे मिलते है।

उदाहरण

(१)

गौरदेह सुढार सुबदनि स्याम सुन्दर नाह।
जनि जलद ऊपरँ तडित सञ्चर सरुप ऐसन आह ।।
पीठिपरु घनस्याम वेनी देखि ऐसन भान।
जनि अजरहाट कपाट करँगहि लिखनि लिखु पचवान ।।
सघन सञ्चर खन न थिर रह मनिक मेखल राव।
जनि मदन राए दोहाए दए दए जघन तसुजस गाव।
रमनि नहिं अवसाद मानय रयनिवरु अवसान।
ओजे रमनि राधा रसिक यदुपति सिंह भूपति भान ।।[४]

---

१. रागतरंगिणी (वही), पृ० ४२-४३।
२. वही, पृ० ६६।
३. इनका परिचय इसी पुस्तक में अन्यत्र मुद्रित है।
४. रागतरंगिणी (वही), पृ० ६०।

(२)

सबहुँ सखि परिबोधि कामिनि आनिदेल पहु पास रे।
जनि व्याध बाँधलि विपिन सँ मृगि तेज तीख निसास रे॥
बैसलि शयन समीप सुवदनि यतने समुखि न होए रे।
भमए मानस भेल दहोदिस देल मनमथ फोए रे।
निविड़ बन्धन नीवि कन्चुकि अधर अधिक निरोध रे।
कठिन काम, कठोर कामिनि-मान, नहि परिबोध रे॥
सकल गात दुकूल दिढ अति कतहु नहि अवकास रे।
पाणि-परसेँ प्राण परिहर पुरति की रति आस रे॥
करब की परकार आब हम किछु न होअ अवधारि रे।
कोप-कौशल करए चाहिअ हठहिं हल जिब हारि रे॥
दिवस चारि गमाए माधव करति रति-समधान रे।
बड़ाकाँ बड होअ धैरज 'सिंहपति' भू भान रे॥[1]

❀

(म० म०) महेश ठाकुर

आपका निवास-स्थान दरभंगा जिले का भौर ग्राम था।[2] आप महामहोपाध्याय प० चन्द्रपति ठाकुर के पुत्र थे। आपने प्रसिद्ध पं० पक्षधरमिश्र के शिष्य पं० शुचिधर झा से शिक्षा प्राप्त की थी। कहते है, बादशाह अकबर ने आपकी प्रतिभा और विद्वत्ता से प्रसन्न होकर आपको ही मिथिला-राज्य प्रदान किया था। इस प्रकार, आपने मिथिला में एक नये राजवश (खण्डवला-राजवंश) की स्थापना की थी।

आप स्वयं तो एक बडे विद्वान् थे ही, विद्वानो के आश्रयदाता भी थे। सन् १५६६ ई० के लगभग आपने अपने पुत्र गोपाल ठाकुर को राज्यभार सौपकर काशीवास किया था। वहाँ रहकर आपने गगा और भगवती तारा पर बहुत-सी कविताएँ की थी।

उदाहरण

(१)

जय जय जय भय भञ्जिनि भगवति! आदिशक्ति तुअ माया।
जनि नव सजल जलद तुअ तनु-रुचि, पदरुचि पङ्कज-छाया॥
मुण्डमाल-बघछाल छुरित छवि, लम्बित उदर उदारा॥
असि कुवलय कर काँती खप्पर, खर्व रूप अवतारा॥
विकट जटा-तट चान तिलक लस, भूषण भीषण नागे।
खल खल हास अकास-निवासिनि मुद्रामण्डित माँगे॥

---

1. मैथिली-गीत-रत्नावली (वही), पद स० ११, पृ० ६।
2. मिथिलाभाषामय-इतिहास (वही), पृ० ६६—६८।

तरुण अरुण सम विषम विलोचन पीन पयोधर भारे।
रकत-रकत रसना लह लह कर वदन रदन विकरारे॥
भनथि 'महेश' कलेस-निवारिणि त्रिभुवन-तारिणि! माता।
शववाहिनि दाहिनि देव! अहँ रहु कि करत कोपि विधाता॥[1]

(२)

उधारिय अधम जन जानि॥ ध्रुवम्॥
हम वनिजार पाप बटवार, सुकृत बेसाहल सुरसरिधार॥
जेहि खन देखल धवल जलधार, जीवन जन्म सुफल संसार॥
सीकर निकर परस यदि भेले, मन अनुताप पाप दुरि गेले॥
जे सब उधारल से मोर आवे, कहु मोर सुरसरि की अपरावे॥
भनथि 'महेश' नमित्तकै शीश, तोंह करुणानिधि हम निरदीश॥[2]

※

रतिपति मिश्र

आप मिथिलानिवासी थे। आज भी आपके वंशधर मिथिला में ही रहते हैं। आपके पिता का नाम रामचन्द्रमिश्र था। प्रसिद्ध दार्शनिक लालगंजवासी महामहोपाध्याय पं० शंकरमिश्र आपके ही पूर्वज थे। आपने जयदेवकवि-कृत 'गीत-गोविन्द' का मैथिली-अनुवाद किया था।[3]

उदाहरण

(१)

मानए गरुअ पयोधर हारा। विषसरि मान सरस घन सारा।
माधव धनि तुअ बिरह तरासे। तैजए वहन समदीघ निसासे।
सजल कजल दुहु लोचन गरई। जनि सरसिज सजो मृगमद हरई।
सरसिज सेज दहन सरि मानई। हरि हरि बोल मरनजनि ठानइ।
कबहु न करतले तैजए कपोले। साँझ उगल नव ससि नहि डोले।
कवि जयदेवे गीत एहो गाया। हरि परसादे परम सुख पाया।
जानकि देइ पति रसिक सुजाने। कृष्णचरणगतिरतिपति भाने॥९॥[4]

---

१. पारिजातहरण (वही, भूमिका), पृ० ६-७।
२. वही, पृ० ८।
३. इस पुस्तक की एक हस्तलिखित प्रति बिहार-रिसर्च-सोसायटी (पटना) के पुस्तकालय में और दूसरी मँगरौनी (दरभंगा) में है। इनमें पहली पूर्ण और दूसरी खण्डित है।
४. बिहार-रिसर्च-सोसायटी में संगृहीत हस्तलिखित पोथी 'गीत-गोविन्द' के मैथिली-अनुवाद से।

(२)

ओथिकि माधव! तोहरि रामा, कला आगरि सगुणधामा,
कामधनि जयपत्रिका जनि देखलि अइसनि रे।
नासिका शुक-मुक कएरहु, अधरबिम्ब प्रबालिका दहु,
दालिमी जनि बीजपांती, दशन भाँती रे।।
नयन शोभा श्रवण अवधए, चान जनि रबि-बिम्ब थप्पए,
राहु जनि पछुआर कर धनि बाँधि राखल रे॥
भ्रकुटि-शोभा काम-धनुषी, अञ्जन गुण जनि बाण सुमुखी,
नयन-बान सन्धान वपुधनि, करति कीदहुँ रे॥
हृदय कनक सरोज अवतरु, काम साजनि नाम निअधरु,
हार भार मृणाल जाँतलि प्रेम मातलि रे।।
हेरि हेरि कतबेरि कामिनि, खेढि कौतुकेँ खेपु यामिनि,
मार शर कनिआर कसि कसि, विहुँसि हँसि हँसि रे।।
गमन गरिमा जितल करिवर, मध्य केसरि मान परिहर,
चरण-युगल सरोज गञ्जए, जगत रञ्जए रे।।
कान्ह काहिनी सखी गाओल, रङ्क विधिवश रतन पाओल,
कहथि 'रतिपति' मालती मधु मधुप पीउल रे॥[१]

❀

रामनाथ

आपका निवास-स्थान मिथिला माना जाता है। आप ओइनवार-वंशीय राजा कसनारायण लक्ष्मीनाथ (सन् १५४२-४५ ई०) के आश्रित कवि थे। आपने मैथिला में कुछ पदो की रचना की थी।

उदाहरण

हास कुमुद कए तोहेँ सादर भए, नयने नेओँतल मोहि।
दए बिसवास आस जँ खण्डह, के पतिआएत तोहि।।
तिल वहँ लहु भय हृदय बदलि कए, परमासेँ बड़ पाप।
अछैत लाखकर तकर हृदय जर, धन गेलेँ परिताप॥
पर उपकार परम पद सुन्दरि! 'रामनाथ' कह सार।
सोरमदेइ पति कंसनरायण, मङ्गन नकर नकार।।[२]

❀

---

१. मैथिली-गीत-रत्नावली (वही), पद स० ४२, पृ० २३।
२. वही, पद सं० १३, पृ० ७।

रूपारूण

आपका निवास-स्थान मिथिला था।[1] आप एक बहुत बडे सत और साहित्यानुरागी थे। भगवान् रामचन्द्र को अपना जामाता मानकर उनकी उपासना करते थे। गोस्वामी तुलसीदासजी के शिष्य श्रीबेनीमाधवदास ने अपनी पुस्तक 'गोसाईं-चरित' मे लिखा है कि 'रामचरितमानस' सुनने का सर्वप्रथम सौभाग्य आपको ही हुआ था। गोस्वामीजी ने आपको ही उक्त ग्रथ सुनने को पहला और सबसे उपयुक्त अधिकारी माना। आपने यह कथा श्रीतुलसीचौरा (अयोध्या) में सुनी थी। इसके पश्चात् आपने बागमती-नदी (दरभगा) के तट पर श्रीसबलसिंह नामक भक्त को यह कथा सुनाई।

आपकी रचना का कोई उदाहरण नही मिला।

लक्ष्मीनारायण[2]

आप भी मिथिला-निवासी थे[3] और हिन्दी के सुप्रसिद्ध कवि अब्दुर्रहीम खानाखाना[4] के दरबार में रहते थे। हिन्दी मे ही आपके लिखे दो ग्रथ मिलते हैं—'प्रेमतरगिणी' और 'हनुमानजी का तमाचा'। आपकी रचना का कोई उदाहरण नही मिला।

(महाराज) विश्वनाथ 'नरनारायण'

मिथिला के ओइनवार-वशीय महाराज भैरवसिंह 'हरिनारायण' के भाई राजा रणसिंह 'दुर्लभनारायण' के पुत्र होने के कारण आपका निवास-स्थान मिथिला माना जाता ह। आपने मैथिली मे कुछ पदो की रचना की थी।

उदाहरण

गमन अवधि तुम्ह नहिल विशेष। भीत भरिअ गेल दिने दिने रेख॥
ताहि मेटि कोई ऊन सुनाये। वदन सिंचइ केह जल लोइ धाए॥

---

१. 'कल्याण' (मानसांक, अगस्त १९३८), पृ० ९०६।

२. इस नाम के एक और कवि इसी काल (१६वीं शती) में हो गये हैं। वे मिथिला के उत्तर मोरगदेश के राजा और सभवतः वहीं के निवासी थे। उन्होंने भी मैथिली में कुछ पदों की, रचना की थी, जिनमें से एक 'रागतरगिणी' में सगृहीत है। देखिए—
A History of Maithili Literature (वही), पृ० २१६ तथा रागतरंगिणी (वही), पृ० ६५।

३. मिश्रबन्धु-विनोद (वही, प्रथम भाग, १९९४ वि०, चतुर्थ स०), पृ० ३७३।

४. मुगल बादशाह अकबर के अर्थमन्त्री, सेनापति और महाकवि रहीम (सन् १५७३ से १६१३ ई० तक)।

कि कहब माधव कमलमुखी। जतने जिआओल सकल सखी॥
काहुँक नलिनि काहुँक चन्दना। कोई कहइ आएल नन्द नन्दना॥
सरस मृणाल हृदय धरि कोइ। चाँद किरणे कोइ राखए गोइ॥
केह मलयानिल बारह चीरे। कोइ करए नव किसलय दूरे॥
मधुकर धुनि सुनि कोए मुँदे कान। करतल ताले कोइ कोकिल खेदान॥
कान्त दिगन्तहि कोन कोन जाए। केह केह हरि तुम्ह गुण परथाए॥
नरनारायण भूपति भान। विजयनारायण इह रस जान॥[१]

❀

सविता

आप पहले मझौली-राज्य (गोरखपुर) के दरबारी-कवि थे, पीछे सारन जिले के नैनीजोर-ग्राम मे आकर बस गये।[२] मझाली के राजा भीमल के यहाँ आपकी बडी प्रतिष्ठा थी। कहते है, एक बार किसी कारण उक्त राजा, सम्राट् अकबर के आदेश से कैद कर दिल्ली बुला लिये गये। उन्हे छुडाने के लिए आप ही भेजे गये थे। आपने वहाँ सम्राट् अकबर को अपनी कविता सुनाकर प्रसन्न कर लिया, जिसके परिणामस्वरूप राजा भीमल मुक्त कर दिये गये। उन्होने आपसे कुछ माँगने को कहा। इसपर एक कवित्व रचकर आपने उनसे एक हजार बीघा ऐसी जमीन माँगी, जो न कभी बाढ़ से डूबे और न कभी अनावृष्टि के कारण सूख जाय।[३] राजा भीमल ने ऐसी ही जमीन आपको सारन जिले के नैनीजोर-ग्राम में दे दी, जहाँ आप बस गये।[४] आपके कोई सन्तान नही थी।[५]

आपने खड़ी बोली और भोजपुरी में कविता का थी। आपकी रचना का उदाहरण नही मिला।

❀

---

१. पदकल्पतरु (४ शाखा, वंगाब्द १३३०), पृ० १५८। इस पद में जिन 'विजयनारायण' का उल्लेख है, वे आपके पितामह महाराज नरसिंह 'दर्पनारायण' के भाई थे और उनका पूरा नाम कुमार राजसिंह 'विजयनारायण' था।

२. दिलीपपुर (शाहाबाद)-निवासी श्रीदुर्गाशंकरप्रसादसिंह द्वारा प्राप्त सूचना के आधार पर।

३. उस कवित्त का अन्तिम चरण इस प्रकार है—'कविता सविता की यही विनती, पुनि जाय उहारो न जाय सुखारी'।

४. आज भी यह ग्राम आपके वंशजों के अधीन है।

५. आपके भाई 'कविता' के वंश में 'तोफा राय', 'चन्द्रेश्वरी राय' आदि प्रसिद्ध कवि हुए, जिनके वंशज आज भी हैं।

सोनकवि

आप वर्त्तमान सहरसा जिले के परसरमा-ग्राम-निवासी थे।[१] आप क्रमशः मिथिला के महेश ठाकुर, गोपाल ठाकुर, अच्युत ठाकुर[२] आदि नरेशो के दरबार में थे। उक्त नरेशो के सम्बन्ध में लिखी आपकी कुछ कविताएँ मिलती है। प्रसिद्ध हेमकवि[३] आपके ही वशज थे। बिहार के वर्त्तमान वयोवृद्ध जगदीश कवि भी आपके ही वशज है। हेमकवि और जगदीश कवि के अतिरिक्त आपके वश मे और भी कई कवि हुए।[४]

आपकी कविताएँ 'मिथिला-राज्यप्राप्ति-कवितावली' में संगृहीत हैं।

उदाहरण

(१)

मारग कानन अनुपम शोभा। जहं गुञ्जरत मधुपमन लोभा ॥ १ ॥
कहुं गुलाब वेली बन नाना। चम्पा बाग चमेली वाना ॥ २ ॥
कहुं तड़ाग जल कुमुद सोहावन। कहुं कमलघन मन्जुल पावन ॥ ३ ॥
आम अशोक आदि बट नाना। मन्द बायुगति देव लुभाना ॥ ४ ॥
कोकिल पिक कलरव चहुं ओरा। वृत्त केहरि बारन मृग मोरा ॥ ५ ॥
लता लवङ्ग वृच्छ लपटाने। कनक शरीर नेह घनसाने ॥ ६ ॥
घटा सघन रविमण्डल छाये। नीलमगिरि मणिशिखर बनाये ॥ ७ ॥[५]

२)

तेरोई सुयस के समान ससिसान स्वच्छ, तमकि रही है तेजताई तन आपसे ॥
कविवर सोन चन्द्चमक अनन्द हौज तेरो मुख बिम्ब प्रतिभासैजूथजाप से ॥
अंक भरिलंक लौनिसंक लटकारे बंक, तैसो निकलंक फणि बैठे चुपचाप से ॥
कालीतूं चरणं से सरोज प्रतिरोज भासै ध्यावे ध्यान आकर प्रभाकर प्रताप से ॥ १ ॥[६]

❋

---

१. मिथिलाराज-प्राप्ति-कवितावली (प० श्रीजगदीश कवि, भूमिका, १९२१ ई०), पृ० २।

२. महेश ठाकुर के राज्यारम्भ का समय १५५७ ई० और अच्युत ठाकुर के राज्यावसान का समय १५७४ ई० माना जाता है।

३. इनका परिचय इसी पुस्तक में अन्यत्र यथास्थान प्रकाशित है।

४. उन कवियों के नाम इस प्रकार हैं—गणेश, प्रभाकर, श्याम, गोविन्द, कृष्ण (बुच), विश्वनाथ, डोमन, हेमन, कृष्ण तथा अचक। इनमें से कुछ के परिचय यथास्थान इसी पुस्तक में दिये गये हैं।

५. मिथिलाराज-प्राप्ति-कवितावली (वही), पृ० २।

६. वही, पृ० १०।

हरिदास

आपका जन्म दरभगा जिले के 'लोहना' नामक ग्राम मे हुआ था।[1] आपके पिता का नाम कृष्णदास झा था। आप प्रसिद्ध मैथिल-कवि गोविन्ददास के छोटे भाई थे।

आपका एक पद 'रागतरगिणी' मे सगृहीत है। इसके अतिरिक्त आपके और भी कतिपय पद लोककठ में मिलते है।

उदाहरण

(१)

देखहीं गे माइ जोगि एतय कतय।
फिरथ गौरी रँगे जतय-ततय॥
सिंगी भरि पुरलन्हि मधुरिरि वानी।
भिखिओ न लेय जोगी माँगइ भवानी॥
जहाँ-जहाँ सखि संग गौरि खेलाय।
तहाँ-तहाँ नाचय जोगी डमरू बजाय॥
जोगिआ रगिआ नितँ नितँ आव।
परतह कइ जोगि गौरि देखाव॥
भन हरिदास महादेव भेस।
गौरी भाग गंगाराम महेस॥[2]

(२)

परम ननुभे देखह माइ हे शङ्कर गौरि समाज।
वर वनिता जप तप जत कएलन्हि, भेल अभिमत आज॥
हँसि हँसि परिछनि करए मनाइनि, पुलकें पूरल हिया।
सामर सुन्दर वर तुलाएल, रतन एहनि धिआ॥
जनक कनक-वेदिहिँ बैसल, करए कन्यादान।
सुरनर मुनि कर वेदक धुनि, एहन के जग आन॥
पुलक पुरल गौरि कोरलए, शङ्कर कोबर आब।
तीनि लोकमे आनन्द मङ्गल, काहुने किच्छु सोहाब॥
तीनि लोक पति हर महेश्वर, पूरथु सकल आस।
युगेँ युगेँ वर कन्या जीवथु, भनइ कवि 'हरिदास'॥[3]

※

१. गोविन्द-गीतावली (वही, भूमिका), पृ० १०।

२. रागतरगिणी (वही), पृ० ६१-६२।

३. मैथिली-गीत-रत्नावली (वही), पद स० २५, पृ० १३-१४।

हेमकवि

आप सहरसा जिले के परसरमा-ग्रामवासी[१] सोनकवि के वशज थे। आप बहुत दिनो तक शुभकर ठाकुर, पुरुषोत्तम ठाकुर, नारायण ठाकुर, सुन्दर ठाकुर, महीनाथ ठाकुर[२] आदि मिथिला-नरेशो के दरबार मे क्रमश रहकर कविता करते रहे। आपकी कविताएँ भी 'मिथिला-राज्यप्राप्ति-कवितावली' में सगृहीत हैं।

उदाहरण

(१)

धर्म्म धराधर धारक धौल धनेस कृपा सुकलानिकरे है।
त्यौ कवि हेम अपूरब अंस उमापति आसिष मौन भरे हैं॥
पुत्र प्रबीन बडे रणधीर जिन्हे लखि शूर महान डरे हैं।
भारत भार उठायबै को महिनाथ नहीं अहिनाथ खरे हैं॥ १ ॥[३]

(२)

काली काली घन की समान भासमान फौज सजिगो हजार ये दुनालो गजबारे को।
कहै कविहेमवर अंगमें उमंग केते, चढे हैं तुरंग ऊँट ढाल तरवारे को॥
जोर घन घोर महिनाथको करोरजूथ, चले हैं चहूँधा धरम अरिन पछारे को।
स्वच्छ स्वच्छ आगे वक पंक्तियुग जात मानो, निकरे हैं दन्त द्वे मतंग मतवारे को॥१॥[४]

❀

सत्रहवीं शती

कृष्णकवि

आपका उपनाम 'प० श्री बुच' था।

आपका निवास-स्थान सहरसा जिले का परसरमा नामक ग्राम था।[५] आप सोनकवि तथा हेमकवि[६] के वशज और वर्त्तमान जगदीश कवि के पूर्वज थे। आपके पिता का नाम गोविन्द कवि था। आप उन्ही मिथिला-नरेश राघवसिंह (सन् १७०४-४० ई०) के दरबार मे रहते थे, जिन्होने भूपसिह नामक जमीदार से युद्ध मे नेपाल-तराई के परगना पचमहला को जीतकर अपने अधीन किया था। इसी युद्ध का वर्णन आपने अपनी 'राघव-विजयावली' नामक पुस्तक मे किया है।

---

१. मिथिलाराज्य-प्राप्ति-कवितावली, (वही, भूमिका), पृ० २।
२. शुभंकर ठाकुर के राज्यावसान का समय १६१६ ई० और महिनाथ ठाकुर के राज्यारम्भ का समय १६७१ ई० माना जाता है।
३. वही, पृ० २३।
४. वही, पृ० २३-२४।
५. राघव-विजयावली (प० श्रीजगदीशकवि, सन् १३२८ फसली, भूमिका) पृ० १।
६. इन दोनों कवियों के परिचय इसी पुस्तक में यथास्थान मुद्रित हैं।

उदाहरण

(१)

गज बाजनि बरूथ चलैं युत्थन के युत्थ
दल पैदल प्रबल बल कोटि को प्रमान ।
गोला घहरि-घहरि छूटै छहरि-छहरि
रण भहरि-भहरि अरि-दल घबरान ॥
चल चञ्चल चलाक बडे घोड़न पै आप
भूपसिंह समशेर तहं लागे घहरान ॥
तहं बीर बलवान प्रलय वेग के समान
रण राघव रिसान झुकि झारत कृपान ॥[१]

(२)

शंकरि शरण धयल हम तोर ।
कुकरम देखि परम यदि कोपित, यमहुँ करत की मोर ॥
सुरतरु अरतर शिवउँ ऊपर, वास हास अति घोर ।
सहस दिवस मनि चान कोटि जनि, तनु द्युतिकरत इजोर ॥
सहज खर्वअति गर्वक पूरनि, लम्बोदरि जगदम्ब ।
दनुज नाग वर सकल सुरासुर, सबकाँ तोहै अवलम्ब ॥
वामा हाथ माथ कुवलय धरु दहिन खड्गवर काती ।
पाँच कपाल भाल अति शोभित, शिर इन्दीवर पाँती ॥
फणि नेउर केउर फणि कङ्कण, हृदय हार फणि छाजए ।
सारसना फणि फणियुग कुण्डल, जटा मुकुट फणि राजए ॥
शिव शिव आशन पास योगिनी, गण पहिरन बघछाला ।
विकट वदन रसना लहलह कर नव यौवन मुण्डमाला ॥
चहुदिशि फेरव मुण्डावलि, चिता अग्नि थिक गेह ।
तीनि नयन मणिमय सब भूषण, नव जलधर समदेह ॥
शिव सनकादि आदि ब्रह्मादिक, सुर मुनि धरथि धेयाने ।
त्रिभुवन तारिणि नरक उबारिणि, सुमति कृष्णकवि भाने ॥[२]

❀

१. राघव-विजयावली (वही), पृ० २-३ ।

२. A History of Maithili Literature (वही), P. 426-27 । प० बदरीनाथ झा ने अपनी 'मैथिली-गीत-रत्नावली' में यह पद किंचित् परिवर्त्तन के साथ 'कवि कृष्णपति झा' के नाम पर उद्धृत किया है । इस कवि का परिचय वे इस प्रकार देते हैं—'(ई) पलिवाड़मूलक महाकवि रमापतिझाक, अथवा उजानवासी सुकवि नन्दीपतिझाक पिता छलाह ।'
—देखिए मैथिली-गीत-रत्नावली (वही), पद स० ५२, पृ० २९-३० तथा ७८ ।

गोविन्द[१]

आपका निवास स्थान मिथिला था।[२] आपके पिता का नाम रविकर और पितामह का नाम श्रीकर था। आप रुक्मिणी देवी के पति यादवराम के आश्रय मे रहते थे।

आपकी एक रचना 'नलचरित' मिलती है। यह उमापति के 'पारिजातहरण' की परम्परा मे लिखा एक नाटक है। इसमे कथोपकथन सस्कृत-प्राकृत मे और गीत मैथिली मे है।

उदाहरण

अपद् सकल सपद् पहु हारल न मानब कोनहुँ निवेधे।
परिहर परिजन गमन कएल वन दारुण दैव विरोधे॥ध्रुव॥
यदि न मिलब पहु दहन पैसब मोहुँ पिआ विनु कैसिन नारी।
'गोविन्द' कवि भन बुझ मधुसूदन सकल कहओ अवधारी॥[३]

दरिया साहब[४]

हिन्दी निर्गुणवादी सत-कवियो मे आपका स्थान बहुत ऊँचा है। बिहार के उक्त कोटि के कवियो मे तो आपका स्थान सर्वोपरि है।

आपका जन्म १६७४ ई० मे शाहाबाद जिले के 'धरकंधा' ग्राम के एक मुस्लिम-वश मे हुआ था[५]। आपके पिता का नाम पृथुदेवसिह या पूरनशाह था।[६] आपका विवाह नव वर्ष की अवस्था मे हुआ था। बीस वर्ष की अवस्था में आप अपनी पत्नी शाहमती या रायमती के साथ गृहत्यागी हुए।

आपने अपना एक अलग पथ चलाया था, जो आगे चलकर 'दरिया-पथ के नाम से प्रसिद्ध हुआ।[७] अपने पथ के प्रचार के लिए आपने उत्तर-भारत के कितने ही स्थानो का भ्रमण

---

१. इस नाम के एक और कवि हो गये हैं, जिन्होंने १६३६ ई० में 'गोविन्द-तत्त्व-निर्णय' की रचना की थी।

२. A History of Maithili Literature (वही), P. 222.

३. मैथिली साहित्यक इतिहास (प्रो० कृष्णाकान्त मिश्र, १९५५ ई०), पृ० १७७।

४. इस नाम के एक और सत इसी काल में, मारवाड़ में हो गये हैं, जिनकी रचनाएँ भी प्राप्त होती हैं। वे जाति के धुनियाँ थे।

५. मिश्रबन्धु-विनोद (द्वितीय भाग, द्वितीय स०, १९८४ वि०), पृ० ७७५। वहाँ की एक अँधेरी कोठरी को आज भी लोग आपका जन्म-गृह बतलाते हैं।

६ 'पीरनशाह' या 'पीरू' भी इनका नाम मिलता है। कहते हैं कि ये पहले उज्जैन-वशी क्षत्रिय थे। बाद में अपने भाई का प्राण बचाने के लिए इन्हें विवश होकर धरकंधा-निवासिनी औरगजेब की बेगम की दर्जिन की लड़की से विवाह कर इस्लाम-धर्म में दीक्षित हो जाना पड़ा।

७ इस समय आपके पथ के लगभग ११२ मठ हैं, जो मुख्यतः विहार और कुछ उत्तर-प्रदेश तथा नेपाल में हैं। इस पथ के अनुयायियों की सख्या इस समय भी हजारों है और दरियापथी साधु भी सैकड़ों की सख्या में हैं। दरियापंथियों की प्रार्थना का ढंग नमाज से मिलता-जुलता है। ये लोग 'सतनाम' का जप करते हैं।

किया था। इसी भ्रमण के क्रम में बंगाल-बिहार के तत्कालीन नवाब ने आपसे बहुत प्रभावित होकर आपको १०१ बीघे बे-लगान जमीन दी थी।

आप अपने को कबीर का अवतार मानते थे। कबीर की तरह ही आप धर्म-प्रचारक और कवि थे। उन्ही की तरह आपने मूर्त्तिपूजा, तीर्थयात्रा, जाति-पाँति, कर्मकाण्ड आदि की कटु आलोचना और भर्त्सना की थी। आपके जीवन का मुख्य उद्देश्य था सत्पुरुष या भगवान् की भक्ति द्वारा जन्म और मृत्यु के बंधन से मुक्त होकर अमर-लोक प्राप्त करना। कहते है, प्रारम्भ मे आपको अपने मत के कारण गॉव के मुखियो और पडितो का अत्यधिक विरोध सहन करना पडा था। पीछे तो बड़े-बडे धनी-मानी आपके शिष्य हुए। शाहाबाद जिले के गडनोखा-राज के तत्कालीन राजा आपके शिष्यो मे प्रथम थे। आपके शिष्य हिन्दू-मुसलमान दोनो सम्प्रदायो के व्यक्ति होते थे, जिन्हे अपनी-अपनी सामाजिक प्रथाओ के मानने की स्वतत्रता थी। आपकी अनेक शिष्याएँ भी थी। इन शिष्याओ मे एक आपकी बहन 'बुद्धिमती' भी थी। आपकी मृत्यु १०६ वर्ष की आयु में १७८० ई० मे हुई।[1]

आपके रचे मूल ग्र थो की सख्या २० है। इनमें १ सस्कृत में, १ फारसी मे तथा १८ हिन्दी मे है। हिन्दी-ग्र थो के नाम इस प्रकार है—(१) अग्रज्ञान (२) अमरसार (३) भक्तिहेतु (४) ब्रह्मविवेक (५) दरिया-सागर (६) गणेश-गोष्ठी (७) ज्ञानदीपक (८) ज्ञानमूल (९) ज्ञानरत्न (१०) ज्ञान-स्वरोदय (११) कालचरित्र (१२) मूर्त्ति-उखाड़ (१३) निर्भयज्ञान (१४) प्रेममूल (१५) शब्द या बीजक (१६) सहस्रानी (१७) विवेकसार तथा (१८) यज्ञ-समाधि।[2] इन रचनाओ के लिए आपने अवधी-भाषा को अपनाया है, किन्तु उस पर खडीबोली और भोजपुरी का भी विशेष प्रभाव दीखता है। इनमे आपने अनेक रागो के भी प्रयोग किये हैं, जिससे आपके संगीतज्ञ होने का अनुमान किया जा सकता है।

उदाहरण

(१)

उर लोचन मगु देखियै, हाजिर हाल हजूर।
प्रगट प्रताप नाम कर, प्रेम भक्ति बिन दूर॥
चीन्हु न सतगुरु देख पराहू, का मद माया विषै रस खाहू।
एह संसार माया कलवारी, मदे मताए भरम करि डारी।
खोजहु सतगुरु प्रेम समोई, उज्जल वृत्ता हंस गुन होई।
मुरचा मुकुर सिकिल करु नीकै, तेजि छल कपट साफ करु हीकै।

---

१ आज भी धरकंधा (शाहाबाद) में आपकी समाधि वर्त्तमान है।

२. इन ग्रन्थों के आधार पर इधर दरियासाहब की रचनाओं के दो-तीन सग्रह भी प्रकाशित हुए हैं। ऐसे सग्रहों में एक (सन्त कवि दरिया-एक अनुशीलन) डॉ० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री के सम्पादकत्व में बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् (पटना) से प्रकाशित हुआ है। इसका मूल्य १३) है।

नाम निसान देखु निज पलकै, जगमग जोति झलामल झलकै ।
उर अंदर जब होय उजियारा, बरै जोति दिल निरमल सारा ।
मति करु जोर जुलुम जगमाहीं निज स्वारथ रत यह भल नाहीं ।
भूलेहु जीव वध जनि करहू , बोएल क बोएल जानि परिहरहू ।
जस पिआर जिव आपनो, तस जिव सभहि पिआर ।
जानहि संत सुबुद्धि जन, जाके बिमल बिचार ॥[1]

(२)

जोरन जावन देह के, दही भया सब थीर ।
वास विमल तब पाइये, मथनी मथो सरीर ॥
ज्यों लगि प्रेम जुक्ति नहिं होई, तब लगि वास पावै नहि कोई ।
है खुसबोई घट महं भाई मथो प्रेम बासना पाई ।
छीर करु छिमा दया करु दही, मन मथनी महि ध्रित सो अही ।
सील संतोष खंभ करु भाई, सुरति निरति का नेता लाई ।
तनु करु मटुकि प्रेम करु पानी, निकले ध्रित सुबास बखानी ।
करमहि जीव मलिन जो कीन्हा, सत बिना ब्रह्म भौ छीन्हा ।
पारस प्रेम जो मइलि कटाई, सतगुर सब्द खोजो चित्त लाई ।
आगे द्रिस्टि गगन के धावै, खोजै प्रेम मुक्ति फल पावै ।
देखत झरि तहां बहुत सोहाई, परिमल अग्र बास तहां पाई ।
विना प्रेम नाहिं फूलै बारी, सींचत जल फूला फुलवारी ।
तिल पर फूल जो दिया बिछाई, घैंचि बासना तिलहिं समाई ।
तिल को तेल फुलेल भयो, मेटा तिल का नावं ।
सतगुर नाम समानेओ, बसेउ अमरपुर गावं ॥[2]

(३)

प्रेम पिवै जुग जूग जिवै जब प्रेम नहीं पसु पंछि है सोई ।
जल पूजि पखान जो मान किये एह ध्यान धरे बग चातुर वोई ।
देवल में एक देवि विराजित राजित नएन में भ्रिक सोई ।
दरिया जो कहें जब ज्ञान हुआ तबहीं दिल की दोविधा सब खोई ।
नाम के अमल जो जन माते सोई जन संत सुबूधि बखाना ।
पीवत भंग जो रंग उड़ावत सो बहु बाचक नाचु देवाना ।
सर्ग पताल खोजे महि मंडल खोजि रहा तब ब्रह्म विढाना ।
दरिया जो कहें जब ज्ञान नहीं तबहीं जम फंद के हाथ विकाना ॥[3]

---

१. संतकवि दरिया-एक अनुशीलन (डा० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री, प्रथम सं०, १९५४ ई०, पंचमखण्ड, 'ज्ञान-स्वरोदय'), पृ० १९ ।

२. वही 'प्रेममूला', पृ० ४४-४५ ।

३. वही ('शब्द'), पृ० ६३-६४ ।

(४)

गुर कहं सर्बस दीजिए, तन मन अरपे सीस।
गुर बहियां गुर देव है, गुर साहब जगदीस ॥
काया द्रुम माया लता, लपटि रहा बहु भांति।
मधुकर मालति आनि मे, पीवत है दिन राति ॥
नरक कुंड के बीच में, गोता खाहि अनेक।
बिवेकी जन कोई बांचिहै, जाके सतगुरु एक ॥
यह माया है बेसवा, बिसनी मिलै त खूब।
साधुन्ह से भागी फिरै, केते परे मजूब ॥
साधू जन मांगे नहीं, मांगि खाय सो भांड़।
सती पिसावनि ना करै, पीसि खाय सो रांड ॥[१]

❀

दलेल सिंह

आप 'दलसिंह' के नाम से भी प्रसिद्ध थे।

आपका निवास-स्थान पहले हजारीबाग का 'कर्णपुर' नामक स्थान था, पीछे रामगढ हुआ।[२] आप रामगढ के राजा थे। आपके पिता का नाम महाराज रामसिंह और गुरु का नाम 'रामभगता' था। आप स्वय तो उच्चकोटि के कवि थे ही, अनेक कवियो और साहित्यकारो के आश्रयदाता भी थे। आपके आश्रित कवियो में पदुमनदास[३] उल्लेखनीय है। आपने उनसे अपने पुत्र रुद्रसिंह के लिए विष्णुशर्मा के प्रसिद्ध सस्कृत-ग्र थ 'हितोपदेश' का हिन्दी-पद्यानुवाद करवाया था।

आपकी चार रचनाएँ उपलब्ध है—(१) राम-रसार्णव, (२) शिव-सागर (३) राज-रहस्य और (४) गोविन्द-लीलामृत।[४] इनमे प्रथम तीन रचनाएँ बड़े आकार की है। भक्ति, ज्ञान और नीति के समन्वय की अनुपम शैली आपकी रचनाओ की विशेषता है।

उदाहरण

(१)

निरखि जुगल छबि सखिन्ह कह द्रिग में बढे उछाहु।
ए भाखहि तुम जाहु उत, वे भाखहि तुम जाहु ॥
डर ते एको जाय न सकहीं। धृति गति मति मन द्रिग थकवकहीं ॥
करि साहस प्रभात अनुमानी। आई सकल सखी हरखानी ॥

---

१. सत-कवि दरिया : एक अनुशीलन (वही, 'सहस्रानी') पृ० १८१-८२-८३।

२. मन्नूलाल पुस्तकालय (गया) में सुरक्षित आपके ग्रंथ 'रामरसार्णव' के आधार पर।

३. इनका परिचय इसी पुस्तक में यथास्थान मुद्रित है।

४. इन रचनाओं की हस्तलिखित प्रतियाँ बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद, (पटना) के हस्तलिखित ग्रंथ-अनुसधान-विभाग, मन्नूलाल पुस्तकालय (गया) और नागरी-प्रचारिणी सभा (काशी) में सुरक्षित है।

राधा भ्रकुचि तनक मुसुकाई । उठि गोविन्द ढिग बैसी जाई ॥
संभ्रम ते पीताम्बर लीन्हा । कृष्णहु नीलाम्बर नहि चीन्हा ॥
मुख लजौह करि सखि दिस देखी । तिन्ह सम निरखि भाग निज लेखी ॥
अधरन्हि में रदछत छबि दयऊ । नखछत ते तन भूखित भयऊ ॥
गलित पत्ररेखा अति सोहै । बिथुरे केसपास मन मोहै ॥
सुमन मानमर्दित कुभिलाना । टुटे छुटे मुकुता मनि नाना ॥
अंगराग इत के उत गयऊ । उन्ह तन के इन्ह तन में अयऊ ।
कृष्णवद्द राधा पग केरा । जावक सोभा देत घनेरा ॥
भृगु पग कह जीतन जतु आऐ । हिदि अनुराग मनहु बहराऐ ॥
कुंकुम सिन्दुर मलय ते प्रभुतन चित्रित कीन्ह ।
इन्ह राधा हिदि में किये मनि कौस्तुभ के चीन्ह ॥[१]

(२)

कहि न सकै दलसिंघ बड चरितनिपट लघुदास ।
गुनु सज्जन सिव लै तदपि करौं कछु परगास ॥
जबते मिलेउ राधिकहि हरि मन । तबते न जुदा होए ऐको छन ॥
जिमि दिनमनि दिन तन परछाहीं । अर्थ रहै जिमि आखर माहीं ।
द्रिग पुतरी दुनहु के दोऊ । प्रकृति पुरुष जानै सभ कोऊ ॥
रग माह निर्मल जल जैसे । मिलेउ परस्पर मन दोउ तैसे ॥
मन ते मन द्रिग द्रिगन्हिते मिलेउ विचार विचार ।
जौवन कामौ एक मत भऐ लऐ सुखसार ॥[२]

❀

दामोदरदास

आप हजारीबाग के निवासी थे।[४] सम्भव है, आप रामगढ-राज्य के दरबार में रहे हो। आपके चार पुत्र थे—प्रद्युम्नदास (पदुमन),[५] हरिशकर, लालमणि और कृष्णमणि। आपकी फुटकर अथवा ग्रंथाकार कोई भी रचना नही प्राप्त होती।

❀

---

१. परिषद् के हस्तलिखित ग्रंथ-अनुसधान-विभाग में सुरक्षित हस्तलिखित 'गोविन्दलीलामृत' से।

२. वही।

३. काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित 'हस्तलिखित-हिन्दी-पुस्तकों का संक्षिप्त-विवरण' (प्रथम भाग, पृ० ६५) में इस नाम के चार और कवियों का उल्लेख है, जो १७वीं शती के आस-पास ही हुए थे।

४. 'साहित्य' (त्रैमासिक, अप्रैल १९५२ ई०), पृ० ७।

५. इनका परिचय इसी पुस्तक में यथास्थान मुद्रित है।

देवानन्द

आपकी रचनाओ मे आपके नाम के पूर्व 'आनन्द' शब्द मिलता है। सभव है, वह आपके नाम का ही अश हो।

आप दक्षिण-मिथिला के 'परहटपुर' ग्राम के निवासी थे।[१] आपके पिता का नाम रघुनाथ[२] और माता का नाम गुणवती देवी था। उमापति की परम्परा मे लिखे आपके 'उषा-हरण' नाटक की खण्डित हस्तलिखित-प्रति प्राप्य है।

उदाहरण

(१)

जय जय दुर्गे जगत जननी, दुर कए भवभए होइ दहिनी।
खने नीला खने सित निरमान, खन कुङ्कुम पङ्क तनु अनुमान।
राका विधुमुख नवविधु मरल, तत नयन सोम केश कराल।
लोहित रदन लोहित कर पान, भृकुटि कुटिल पुनु मोन धेआन।
श्रुति भुजें वसु भुजें हर दुख मोर, ऋषिहि पुरान गनल भुज तोर।
करे वर अभय खडग-जयमाल, मुकुर शूलधनु खेटक विशाल।
न जानिअ आगमे तुअ कत रूप, तेतिस कोटि देव तोहि निरूप।
पुनि पुनि हइहो देवि गोचर लेह, नाग पास बन्धन मोच देह।
आनन्दे देवानन्द नति गाव हरि चढि रिपु हनि पुरह भाव।[३]

(२)

ए धनि ए धनि सुनह सरूप। कहि न होअ वर कनैया रूप॥
त्रिभुवन दुहू नव अभिराम। देअहु न पारिय हुनक उपाम॥
रभसे वेकत कय नोअ नीअ हाव। दुअउ करे रतिरंग सुभाव॥
आनन्द देवानन्द भनभाव। दुहुकाँ सकल भेल परथाव॥[४]

---

१. A History of Maithili Literature (वही), P. 211.
२. इनकी उपाधि 'कवीन्द्र' होने से ऐसा अनुमान किया जाता है कि ये स्वय भी एक कवि रहे होंगे।
३. A History of Maithili Literature (वही), P. 301.
४. वही, पृ० ३०१।

धरणीदास

आपका नाम 'धरणीधरदास' भी मिलता है।

आपके बचपन का नाम 'गैबी' था। आप एक पहुँचे हुए सत और भक्त थे।

आपका जन्म सारन जिले के माँझी-ग्राम[१] में हुआ था।[२] आपके पिता का नाम परसरामदास[३] और माता का नाम विरमादेवी था। आप अपने माता-पिता के प्रथम पुत्र थे।[४] कहते है, अपने धर्मनिष्ठ पिता का आपके जीवन पर विशेष प्रभाव था। अत उनकी मृत्यु से आपके हृदय पर बहुत आघात पहुँचा, जिसके परिणामस्वरूप आप सासारिक कार्यो से उदासीन होकर भगवद्भजन मे अधिक लीन रहने लगे।[५] आप १७१३ वि० तदनुसार सन् १६५६ ई० मे सन्यास लेने के समय माँझी के जमीदार के यहाँ दीवान थे। प्रारम्भ मे 'चन्द्रदास' आपके गुरु हुए। वैराग्य ग्रहण करते समय आपने सेवानन्द से मत्र लिया। किन्तु इतने से आपको तृप्ति नही हुई। अत आप परमतत्त्व से परिचय कराने योग्य गुरु की खोज करने लगे। अन्त मे मुजफ्फरपुर जिले के पातेपुर-निवासी विनोदानन्द[६] के पास जाकर आपने दीक्षा ली। अपने गुरु के यहाँ से लौट आप अपने जन्म-स्थान के पास ही कुटी बनाकर भजन-भाव मे लीन रहने लगे।[७] आपने अपना प्राण-विसर्जन गगा और सरयू के संगम पर किया, जो छपरा नगर के पास है।

आपके सम्प्रदाय का नाम 'धरणीश्वर-सम्प्रदाय' है। इसमे अब भी बिहार और उत्तर-प्रदेश के बहुत-से लोग है।[८]

---

१. धरनीदासजी की बानी (द्वितीय स०, १९३१ ई०), पृ० १।

२. माँझा सरयू तट पर है। यहाँ पूर्वोत्तर-रेलवे का एक बडा पुल है, जो बिहार और उत्तर-प्रदेश (सारन और बलिया जिलों) को जोड़ता है। आपके दादा टिकैतराय एक धार्मिक व्यक्ति थे। वे मुसलमानी आक्रमण के भय से प्रयाग से माँझी चले आये थे।

३. ये एक प्रतिष्ठित व्यक्ति थे, इनके पाँच पुत्र हुए—धरणी, वेणी, लछिराम, छत्रपति और कुलपति।

४. आपके दो पुत्र और चार पुत्रियाँ थीं। दोनों पुत्र निस्सन्तान रहे, पर एक पुत्री की सन्तानों का अस्तित्व है।

५. अपने परिवार और अपने जीवन के सम्बन्ध में भी बहुत-सी बातें आपने अपने 'प्रेमप्रगास' में लिखी हैं। उसी में वैराग्य-ग्रहण-काल का भी उल्लेख है—

समत सत्रह सौ चलि गैऊ। तेरह अधिक ताहि पर भैऊ॥
शाहजहाँ छोड़ी दुनियाई। पसरी औरगजेब दुहाई॥
सोच बिसारी आत्मा जागी। धरनी धरेउ भेष वैरागी॥

६. ये रामानन्द स्वामी की परम्परा के आठवें सत थे। धरणीदासजी ने अपनी 'रत्नावली' में इनकी मृत्यु का समय १७३१ वि० (श्रावण कृष्ण-नवमी) लिखा है।

७. यह स्थान अब 'रामनगर' कहलाता है और यहाँ का मदिर 'धरणीश्वर का द्वारा'। यहाँ आपकी एक जोडी खडाऊँ आज भी देखने में आती है।

८. इसकी गद्दियाँ साढे बारह बतलाई जाती है। इनमें माँझी की गद्दी प्रमुख है। इसके अतिरिक्त बिहार में परसा, पचलखी और ब्रह्मपुर की गद्दियाँ भी प्रसिद्ध हैं। माँझी की गद्दी पर आपके बाद क्रमशः सदानन्द, अमरदास, मायाराम, रतनदास, बालमुकुन्ददास, रामदास, सीतारामदास, हरनन्दनदास और सन्तरामदास बैठे।

आपके द्वारा रचित ग्र थो मे 'प्रेम-प्रगास'[१], 'शब्द-प्रकाश'[२] और रत्नावली' प्रसिद्ध हैं। 'बोधलीला' और 'महराई' नाम की आपकी दो और छोटी रचनाएँ[३] मिलती हैं। उक्त रचनाओ मे प्रथम, अर्थात् 'प्रेम-प्रगास' मे आपने जीवात्मा और परमात्मा के मिलन की प्रेम-कहानी, सूफियो की शैली मे कही है। इसी प्रकार 'रत्नावली' मे आपने अपनी गुरु-परम्परा की बाते कही हैं और अनेक संतो के परिचय दिये हैं। 'शब्द-प्रकाश' आपकी सबसे अधिक प्रौढ रचना मानी जाती है। इसी मे आपने अपने धार्मिक विचारो एवं सिद्धान्तो को छन्दोबद्ध रूप मे व्यक्त किया है। इसकी रचना के लिए आपने खडीबोली और भोजपुरी का सहारा लिया है।

उदाहरण

(१)

ज्ञान को बान लगो 'धरनी', सोवत चौंकि अचानक जागे ॥
छूटि गयो विषया विष बंधन, पूरन प्रेम सुधा रस पागे ॥
भावत बाद् विवाद् बिखाद् न स्वाद् जहाँ लगि सो सब त्यागे ॥
मूँदि गईं अँखियाँ तब तें जबतें हिय मे कछु हेरन लागे ॥
जननी पितु बंधु सुता सुत संपति, मीत महाहित संतत जोई ॥
आवत संग न संग सिधावत, फाँस मया परिनाहक खोई ॥
केवल नाम निरंजन को जपु चारि पदारथ जाहितें होई ॥
बूझि बिचारि कहै 'धरनी' जग कोई न काहु के संग सगोई ॥[४]

(२)

'धरनी' जहँ लगि देखिये, तहँ लौं सबै भिखारि।
दाता केवल सतगुरु, देत न मानै हारि ॥
'धरनी' यह मन मृग भयो, गुरु भये ज्यों व्याध।
बान शब्द हिय चुभि गयो, दरसन पाये साध ॥[५]

(३)

पाव दुबी पउआ परम झलकार। दुरहुर स्याम तन लाम लहकार ॥
लँमहरि केसिआ पतरि करिहाँव। पीअरि पिछौरि कटि करतेन आव ॥
चंदन खोरिया भरेला सब अंग। धारा अनगनित वहेला जनु गंग ॥
माथे मनि मुकुट लकुट सुठिलाल। झीनवा तीलक सोभे तुलसी के माल ॥
नीक नाक पतरी ललौहिं बडि आँखि। मुकुट मझोर एक मोरवा के पाँखि ॥

---

१ इसका एक हस्तलिखित प्राचीन-प्रति माँझी (सारन) के धरनीदासजी के मठ में सुरक्षित है।

२ इसका एक संस्करण १८८७ ई० में नरसिंहशरण प्रेस (छपरा) से प्रकाशित हुआ था।

३ आपकी बानियों का एक संग्रह वेलवेडियर प्रेस, प्रयाग से प्रकाशित हुआ है।

४ धरनीदास की बानी (वही), पृ० ३३।

५. वही, पृ० ५३।

कान दुनौ कुंडल लटक लट झूल। दाढ़ी मोछ नूतन जैसन मखतूल ॥
परफुलित वदन मधुर मुसुकाहिं। ताहि छवि उपर 'धरनी' बलि जाहिं ॥
मन कैला दडवत भुइयाँ धरि सीस। माथे हाथे धरि प्रभु देलन्हि असीस ॥[1]

(४)

हाथ गोड़ पेट पिठि कान आँखि नाक नीक, माँथ मुँह दाँत जीभि ओठ बाटे ऐसना ॥
जीवन्हि सताईला कुभच्छ भच्छ खाईला, कुलीनता जनाईला कुसंग संग बैसना ॥
चलिला कुचाल चाल ऊपर फिरेला काल, साधु के सुमंत्र बिसराईला से कैसना।
धरनी कहे भैया ऐसना में चेतीं ना तऽ, जानि लेबि ताविना चीरारी गोड़ पैसना ॥[2]

❀

धरणीधर[3]

आप मिथिला-निवासी थे। आपने कुछ पद मैथिली मे लिखे थे। आपका एक ही पद 'रागतरगिणी' और अन्य सग्रहो मे मिलता है।

उदाहरण

रितुराज आज विराज हे सखि नागरी गन वन्दिते
नवरङ्ग नवदल देखि उपबन सहज सोभित कुसुमिते
आरे कुसुमित कानन कोकिल साद, सुनिहुँक मानस उपजु विषाद ॥
साजनि हम पति निरदय बसन्त, दारुन मदन निकारुन कन्त ॥
अतिमत्त मधुकर मधुर रव कर मालती मधु सञ्चिते
समकेकन्त उदन्त नहिकिछु हमहि विधि-वस वञ्चिते।
वञ्चित नागरि सेहे संसार, एहि रितु सजो न करु विहार ॥
अति हाव भाव मनोज मारए चन्द रवि ससि भानए ॥
पुरबपाप सन्ताप जतहोअ मन मनोभव जानए ॥
जारए मनसिज मार सरसाधि, चाँदमे देह चौगुन होअ धाधि ॥
सवे धाधि आधि वेआधि जाइति करिअ धैरज कामिनी
सुपहु मन्दिर तोरित जाएत सुफले जाइति जामिनी ॥
जामिनी सुफले जाइति अवसान, धैरज कर धरणीधर भाँन ॥[4]

❀

---

१. भोजपुरी के कवि और काव्य (श्रीदुर्गाशंकरप्रसाद सिंह, प्रथम सं०, १९५८ ई०), पृ० ९६।

२. वही, पृ० ९७।

३. एक धरणीधर १६८० ई० में रमापति उपाध्याय की 'वृत्तसार' नामक पुस्तक के लिपिकार हो गये हैं। संभव है, ये आप से अभिन्न व्यक्ति रहे हों।

४. रागतरंगिणी (वही), पृ० ९८। श्री नगेन्द्रनाथ गुप्त की 'विद्यापति ठाकुर की पदावली' में यह पद किंचित् परिवर्तन के साथ भनिता बदलकर विद्यापति के नाम पर सगृहीत है। भनिता इस प्रकार है—

जामिनि सुफले जाइति अवसान। धैरज धरु विद्यापति भान ॥

—वही, पद स० ७९३, पृ० ४०१-२।

पदुमनदास

आप रामगढ-राज्य (हजारीबाग) के आश्रित कवि[1] और सभवत वही के निवासी थे। आपके पिता का नाम दामोदरदास था। आप चार भाई थे।[2] आप एक कुशल कवि थे। आपने नृपति दलेलसिह के आदेश से, उनके पुत्र रुद्रसिह के लिए, विष्णुशर्मा के गद्य-पद्यमय सस्कृत ग्र थ 'हितोपदेश' का हिन्दी-पद्यानुवाद किया था। आपकी एक और पुस्तक 'काव्य-मजरी' मिलती है।[3]

उदाहरण

(१)

स्याम बरन श्रृंगार कोष, मित्र हांस रस जासु।
वैरी करुणा शान्त तसु, और सकल सम तासु॥
उज्वल तन रस हास को, हित अद्भुत श्रृंगार।
वैरी करुणा ताहि को, अवरहि सभ बेवहार॥
करुणा कबुंर रंग है, वैरी हास सिंगार।
मयत्री मानै सांत तें अपर हि शिष्टाचार॥
अरुण रूप रस रौद्र को, हित ताको है वीर।
वैरी सान्त बषानियै, औरहि समता थीर॥
पीत वरन तन वीर को, हास रौद्र तै रीति।
भै रस की अद्भुत सुहृद, करुणा विभत्सहि प्रीति॥[4]

(२)

सर्वं दर्वं ते दर्वं अति। विद्या दर्वं अनूप।
धन देती षरचत अछै। अरचत जाते भूप॥
विद्या मिलवै भूपतिहि। सरिता सिंधु समान।
तापर अपनो भागफल। भोग करै मतिमान॥
विद्या विनय हि देति है। विनय स्याति अनुकूल।
ख्यातिभए धन धर्म सुष। तातै विद्या मूल॥
जैसे कॉचे कलश मे। कुम्भकार कृत रेष।
मिटै न त्यौं अभ्यास शिशु। नीति कथानि विशेष॥[5]

※

---

१ 'साहित्य' (वही, अप्रैल १९५२ ई०), पृ० ७।

२. अन्य तीन भाइयों के नाम वय क्रम से इस प्रकार थे—हरिशंकरदास, लालमणि और कृष्णमणि।

३. 'हितोपदेश' और 'काव्यमजरी' दोनों ही अमुद्रित हैं और मन्नूलाल पुस्तकालय (गया) में सुरक्षित हैं। 'हितोपदेश' की दो हस्तलिखित-प्रतियाँ बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् (पटना) के हस्तलिखित-ग्रन्थ अनुसधान-विभाग में भी सगृहीत हैं।

४. 'साहित्य' (वही, अक्टूबर १९५३ ई०), पृ० ५२-५३।

५. वही (अप्रैल १९५२ ई०), पृ० ३६।

प्रबलशाह

आप डुमरांव (शाहाबाद) के राजा नारायणमल्लदेव[1] के द्वितीय पुत्र थे।[2] आपके बड़े भाई का नाम अमरेश या अमलशाह था। आपकी 'रस-मजरी' नामक एक पुस्तक मिलती है।[3] आपने बारहमासा-विषयक कुछ कविताएँ भी हिन्दी में लिखी थी। एकबार बादशाह औरगजेब (सन् १६५८-१७०७ ई०) के समय मे आप कैद होकर दिल्ली गये थे। घर पर आपने अपने दो पुत्रो को रामयति नामक एक मित्र की देखरेख में रख छोड़ा था। दिल्ली के कारागार से आपने रामयति के पास जो पत्र लिखा था, वह भी पद्यबद्ध ही है।[4]

---

१. दिल्ली के मुगल-सम्राट् शाहजहाँ (सन् १६२८-५८ ई०) ने नारायण-शाही को 'मल्ल' और 'राजा' की उपाधि, अपनी तलवार भेंट करते हुए, दी थी। मनसबदार का ओहदा और भोजपुर-प्रान्त का राज्य भी शाहजहाँ ने ही दिया था। आप बड़े अच्छे शिकारी और साहित्यानुरागी थे। गोस्वामी तुलसीदास के ग्रन्थों से भक्ति, नीति और शिक्षा से सम्बन्ध रखनेवाली कविताओं का आपने सग्रह किया था। महाराज बाबू रामदीनसिंह लिखित 'बिहार-दर्पण' नामक प्राचीन पुस्तक के आरम्भ में ही आपकी विस्तृत जीवनी और तुलसी-साहित्य से सगृहीत अश भी प्रकाशित हैं। यह पुस्तक खड्गविलास प्रेस (पटना) से पहली बार १८८२ ई० में छपी थी और १८८३ ई० में ही इसका दूसरा सस्करण प्रकाशित हुआ था।

२. बिहार दर्पण (रामदीनसिंह, द्वितीय स०, १८८३ ई०), पृ० १ तथा १७।

३. यह पुस्तक भारत-जीवन प्रेस (बनारस) से छपी थी। आपके एक और काव्य-ग्रन्थ की हस्त-लिखित-प्रति श्रीदुर्गाशकरप्रसाद सिंह (दिलीपपुर, शाहाबाद) के पास है। इसी पुस्तक के आरम्भ में आपने अपना परिचय दिया है—

सूबा मध्य बिहार के, नगर भोजपुर नाम। भूप नारायण मल्ल तहँ, प्रगटे सब सुख धाम॥
तिनके पुत्र प्रसिद्ध द्वै, बड़े भूप अमरेश। जाको यश चहुँ खंड में, फैलो देश विदेश॥
दान कृपा दुहू सरस, भयो अमरनृप जान। ताको अनुज प्रबल कहूँ, कहौ सुनौ दय कान॥
जाहि काव्य की शक्ति लस, पढे नहि किछु ग्रन्थ। अँटकर होते सब कियो, अन्ध चलत ज्यों पथ॥
मति लाठी मन कर गहे, अच्छिर ऊँचे नीच। टकरोरनि अति डरनिते, गिरे न ताके बीच॥

४. (क) उस पत्र का कुछ अ श इस प्रकार है—

कुसल इहाँ को जैसो जानत हो नीके तुम, कुसल तिहारो रामा भारती जू चाहिये।
बालक दोऊ तो तुम्हें सौंपे हैं पढ़ायो जू, जाकी चित्त छोभ सों सुनावें हम का कहिये।
ज्यों ज्यों डर आवति है होत है सताप हिये, को है उहा हितू मेरो लिखैं हम जाहिये।
भाई अमनेक अधिकारी द्विज दासो दास, लेत न खबरि दुख में न हित ताहिये॥

(ख) अधिक कहो हम क्यों लिखैं, दुख की बात बनाय।
पोंचत पैहो दुख मनहि ताते कह्यो न जाय॥
जो क्यों हूँ विधि बाम तैं तुच्छ बचैगो सीस।
पुनि पायन तर आइ है कृपा करहि जो ईस॥
नहि अवलम्ब रह्यो कछू, रही आम एक आय।
दई भतीखा रावरी, हूँ है वहै सहाय॥
हित अनहित दोउ विपति में, सहज परत है चीन्ह।
करुणा सिन्धु होआइ है, गज मोचन जिन कीन्ह॥

उदाहरण

(१)

माघ नहीं है निदाघ प्रचंड, ये चन्द नहीं तन भानु वहै री।
राति नहीं दिन बाढ्यो अपार, सो सौरे समीरन लूवैं बहैरी।
फूले री वारिज है सरसे, भ्रम भूलि, कुमोदिनी ताहि कहै री।
जाड़ो नहीं यह आतप है, प्रबलेश, बिना दुख केते सहै री॥[१]

(२)

पट मैलो पेन्हे औ निपट तन भूखो न कहि न सकत मति रीझि आह जैसी है।
नीची नाइ रहति निहारति न नेकु ऊँचे, तिरछी चितौनि मेरो उर बेधि पैसी है।
कंज ऐसो कर वलि विधु से बदन दै के, भुवनरव लिखटि उसास लेति वैसी है।
'प्रबल' सखाई लखि ठगि से रह्यो है मन, रोसमें रसीली ऐसी रसमें धौं कैसी है।[२]

भगवान मिश्र

आप मिथिला-निवासी थे।[३] भारत के देशी-राज्यो में मिथिला से जाकर जिन पण्डितो ने प्रतिष्ठा और सम्पत्ति अर्जित की थी, उन प्रवासी मैथिल-पण्डितो मे आपका प्रमुख स्थान माना जाता है।

मध्य-प्रदेश के बस्तर-राज्यान्तर्गत 'दन्तावारा' नामक प्राचीन स्थान मे १७६० वि० (१७०३ ई०) का लिखा आपका एक शिलालेख प्राप्त हुआ है। शिलालेख गद्य में है और वह गद्य पण्डित सदलमिश्र से एक सौ वर्ष पूर्व का है।

उदाहरण

सोमवंशी पांडव अर्जुन के सन्तान तुरुकान हस्तिनापुर छाड़ि ओरंगल के राजा भये। ते वंश महँ काकती प्रतापरुद्र नाम राजा भए जे राजा शिव के अंश नउ लाख धानुक के ठाकुर जे के राज्य सुवर्न वर्षा भैते राजा के भाई अन्नम राज बस्तर महँ राजा भए ओरंगल छाड़ि कै। ते के सन्तान हंमीरदेव राजा भए। ताके पुत्र भैरव राजदेव राजा। ताके पुत्र पुरुसोत्तम देव महाराजा ताके पुत्र जैसिंह देव राजा ताके पुत्र नरसिंहराय देव महाराजा जेकर महारानी लछिमादेई अनेक ताल बाग करि सोरह महादान दीन्हें।[४]

---

१. श्रीदुर्गाशंकरप्रसाद सिंह द्वारा प्राप्त सामग्री से।

२. वही।

३. मिश्रबन्धु-विनोद (भाग २, द्वितीय सं०, १९८४ वि०), पृ० ५३५।

४ 'सरस्वती' (प्रयाग, भाग १७, खण्ड २, संख्या ५, १९१७ ई०) तथा रजत-जयंती-स्मारक-ग्रन्थ (वही), पृ० ६३८। इस शिलालेख की पूरी प्रतिलिपि इस पुस्तक की प्रस्तावना में देखिए।

भूधर मिश्र

आप मुंगेर के निवासी थे।[१] आपके पिता का नाम भार्गवमिश्र था। आप औरंगजेब के पुत्र आजमशाह की समर-यात्रा में सम्मिलित थे। अपनी पुस्तक की प्रशस्ति मे आपने अपने को 'वैद्य, राजपण्डित और सकल विद्याविनोद' कहा है।

आपने १७३० वि० की माघकृष्ण नवमी को 'रागमजरी' नामक पुस्तक लिखना आरम्भ किया था, जो १७४० वि० मे समाप्त हुई।[२]

उदाहरण

स्याम घन-स्याम सुख आनन्द को धाम, जाको, राधावर नाम काम मोहन बखानिऐ।
मन अभिराम मुरली को सुर ग्राम धरें, याम याम यम यम ध्यान उर आनिऐ।
लसे वनमाला दाम वाम प्यारी गोपीवाम, मुनि गावें जाको साम काम रूप जानिऐ।
भूधर नेवाज्यो राम बस्यो आए नन्द ग्राम, तिहू लोक ऐक धाम साची जिय मानिऐ॥[३]

❀

भृगुराम मिश्र

आप मुंगेर के निवासी थे।[४] आपके वशज अब भी उसी स्थान के पुरानीगंज-मुहल्ले मे रहते है।

आपकी लिखी तीन पुस्तकें है—'रासविहार', 'सुदामाचरित' और 'दान लीला' इनमे प्रथम पुस्तक की गणना वहुत ही लोकप्रिय पुस्तको मे होती है। इसमे श्रीकृष्ण की रासलीला का वर्णन है। यह पुस्तक सभवत व्रजभाषा में लिखी गई थी।

आपकी रचना के उदाहरण नही मिले।

❀

---

१. 'भूधर नाम विहार है, गढ मुंगेरि निज धाम'—राजस्थान में हिन्दी के हस्तलिखित-ग्रन्थों की खोज (द्वितीय भाग, १९४७ ई०), पृ० ६६।

२. इस पुस्तक की एक प्रति बीकानेर राज-पुस्तकालय—'अनूप-सस्कृत-पुस्तकालय' में संगृहीत है। यह प्रति ग्रन्थ-रचना के दो वर्ष बाद बीजापुर (महाराष्ट्र) में तैयार की गई थी। यह कई 'प्रकाशों' में तैयार की गई है। इसमें राग-रागिनियों के सम्बन्ध में विभिन्न-मत, इनके भेद, लक्षण तथा इनके गाने के समय दिये गये हैं।

३. राजस्थान में हिन्दी के हस्तलिखित-ग्रन्थों की खोज (वही), पृ० ६६।

४. फ्रांसिस बुकानन ने सन् १८०९-१० ई० में ही अपने पूर्णिया जिले के विवरण में आपका समय '५०० वर्ष पूर्व' लिखा था, जिसका अर्थ १४वीं सदी का प्रारम्भ कहा जा सकता है। बुकानन के लेख का आवश्यक उद्धरण इस प्रकार है—"Many other poets are read or repeated by note, especially the following—Rasvihar, Composed by Bhriguram Mishra of Monghyr. whose descendants live at Puraniganj near that place but he is supposed to have lived 500 years ago".—An Account of the district of Purnea in 1809-10 by Francis Buchanan Published by the Bihar and Orissa Research society, (Patna), PP. 173-174. हमारा अनुमान है कि आपकी ये रचनाएँ इतनी पुरानी तो नहीं, पर १७वीं-शती के आसपास की हो सकती हैं।

मॅगनीराम

आपका जन्म १६८७ ई० मे चम्पारन-जिले के पदुमकेर[1] (पद्मकेलि) नामक स्थान मे हुआ था।[2] आपके पिता प० कमलापति झा[3] तथा अन्य पूर्वज[4] भी विद्वान् तथा कवि थे। आपके ज्येष्ठ पुत्र स्पर्शमणि झा प्रकाण्ड वैयाकरण तथा पौत्र भुवनेश्वर झा भी कवि हुए। इस प्रकार आपकी कवित्व-शक्ति बहुत-कुछ वंश-परम्परागत थी।

आपका विवाह मुजफ्फरपुर जिले के 'पकडी' नामक ग्राम मे हुआ था। आपका ननिहाल नैपाल-तराई के बसतपुर-ग्राम मे था। आपके मामा नैपाल-नरेश रणबहादुर-सिंह के यहाँ कर्मचारी थे। वे एक बार राजकीय कोष का रुपया गबन कर जाने के अपराध में पकड लिये गये। एक दिन जब रणबहादुरसिंह ने अपने दरबार में कवियो के सामने एक समस्या रखी, तो उसकी सबसे अच्छी पूर्त्ति आपने ही की। इसी पर प्रसन्न होकर राजा ने आपके मामा के अपराध को क्षमा कर दिया और आपको अपने दरबार में कवियो के बीच सबसे उच्च पद दिया। कहते हैं, नैपाल-नरेश ने आपको पारितोषिक-स्वरूप दो गाँव (गडहरिया और डुमरिया) भी दिये थे।[5] कहा जाता है कि एक दिन अनायास किसी बात पर मतभेद हो जाने के कारण आपने राज्याश्रय त्याग दिया। यह सूचना जब महाराज को मिली तब उन्होने पुन आपसे वापस आने का आग्रह किया, किन्तु आप न आये और आमत्रण को अस्वीकार करते हुए एक कवित्त लिख भेजा, जिसका अतिम चरण इस प्रकार है—'मगन के द्वार कही मगन अघात है'। आप स्वभाव के बडे सरल और विनोदी भी माने जाते थे। अपने विवाह के अवसर पर अपनी 'विधिकरी' से आपने जो चुटकी ली थी, वह उस इलाके मे आज भी प्रचलित है। एक सौ आठ वर्ष की आयु तक जीवित रहकर १२५१ फसली में, काशी में, आप परलोक सिधारे।

आपने 'ऊषा-हरण' एक खण्ड-काव्य लिखा था, जो अब अप्राप्य है। आप आशु-कवि कहे जाते थे। बात-की-बात मे कविताएँ रच डालते थे। आपकी रचनाएँ ब्रजभाषा के साथ मैथिली मे भी मिलती हैं। आपकी उपलब्ध रचनाओ में 'श्रीकृष्ण-जन्म', 'श्रीगगास्तव' और 'द्रौपदी-पुकार' शीर्षक कविताएँ लम्बी है। दुर्गास्तुति-परक आपका एक मैथिली-गीत भी मिलता है।[6]

---

१. यह स्थान मोतिहारी नगर से बीस मील पूरब है।
२. पचामृत (श्रीशुकदेव ठाकुर, प्रथम स०, १९४१ ई०), पृ० ४३।
३. श्रीरमेशचन्द्र झा आपको कुलपति झा का पुत्र बतलाते हैं।—'वार्षिकी' (नवयुवक पुस्तकालय, मोतिहारी, सन् १९५८-५९ ई०), पृ० २५।
४ इनमें हरपति झा, उमापति झा, कमलापति झा आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।
५. इसकी सनद आपके वंशधर श्रीराधारमण झा के पास आज भी सुरक्षित है।
६. आपकी एक हस्तलिखित-पुस्तक, कहते हैं, नैपाल-राजकीय पुस्तकालय में सुरक्षित है। कहा नहीं जा सकता कि वह आपकी कौन-सी पुस्तक है।

उदाहरण

(१)

कंचन के गजराज बनाय जड़ाय जवाहिर लाल नसानी।
पावन पुच्छक सुंडन मे मनि मस्तक दन्त कहाँ लौं बखानी।
इक पर्व महोदय लागि गयो तहँ दान कियो नृप की महरानी।
गंग-तरंग में सरित दई कर हाथी बुड़ो है हथेली के पानी।[१]

(२)

कोटि-कोटि संपति औ लाखन सिपाह खडे झूमत गजराज द्वार हलका हजार हैं।
कोठरी भरो है हेम हीरा औ जवाहिरात अंग-अंग गूँथी मणि मोतिन की हार हैं।
महल मे भीतर चटकीली चन्दुमुखी नारि बाहरे हजार भूप करत जुहार हैं।
मँगनी कवि कहे सुरसति से सनेह नहीं तो धुँआ की धरोहर शृंगार सब छार हैं।[२]

❀

महीनाथ ठाकुर

आप सन् १६७३ से ९४ ई० तक मिथिला के राजा[३] थे। आपके पिता का नाम सुन्दर ठाकुर था। 'रागतरंगिणी' के रचयिता लोचन के प्रसिद्ध आश्रयदाता नरपति ठाकुर आपके ही अनुज थे। कहते हैं, लोचन कुछ दिनो तक आपके भी आश्रय मे थे। आपने मैथिली मे बहुत-से सुन्दर पदो की रचना की थी, जो लोककंठ में आज भी बसे हुए हैं

उदाहरण

बदन भयान वदन शव कुण्डल, विकट दशन घन पाँती।
फूजल केश भेश तुम्र के कह, जनि नव जलधर काँती॥
काटल माथ हाथ अति शोभित, तीच्ण खड्ग कर लाई।
भए निर्भय वर दहिन हाथ लए, रहिअ दिगम्बर माई॥
पीन पयोधर उपर राजित, लिधुर श्रवित मुण्ड हारा।
कटि किङ्किनि शव कर करु मण्डित, सृक बह शोनित धारा॥
बसिअ मसान ध्यान शिव ऊपर, योगिनिगन रहु साथे।
'नरपति' पति राखिअ जग ईस्वरि, करु 'महिनाथ' सनाथे॥[४]

❀

१. पचामृत (वही), पृ० ४८।
२. चम्पारन की साहित्य-साधना (श्रीरमेशचन्द्र झा, प्रथम सं०, २०१३ वि०), पृ० ३२।
३. मैथिली-गीत-रत्नावली (वही), पद सं० ३१, पृ० ७५। डॉ० सुभद्र झा शास्त्री के अनुसार आपका राज्य-काल सन् १६६८ से ९० ई० तक था।
—Patna University Journal (Vol. I, No 2, Jan. 1945), P. 39.
४. A History of Maithili Literature (वही), P. 228.

रामचरणदास

आपका उपनाम 'जन-सेवक' मिलता है।

आप पटना के एक कायस्थ-वश मे उत्पन्न हुए थे।[१] आपके पिता का नाम श्रीदुर्गादास था। आप एक 'प्रेममार्गी' कवि थे। आपने 'पद्मावत' की परम्परा मे, उसी के अनुकरण पर, 'चन्द्रकला'[२] नामक काव्य-ग्रन्थ की रचना शुक्रवार, कार्त्तिक कृष्ण-त्रयोदशी को, शक सं० १६१९ (२ अक्टूबर १६९७ ई०) मे[३] की थी। इसमे राजकुमार 'चन्द्रसेन' और राजकुमारी 'चन्द्रकला' के प्रेम और फिर उनके विवाहित जीवन की कथा अवधी-भाषा मे वर्णित है। कतिपय स्थलो पर छदोभग के रहते हुए भी इसमे प्रमुख अलंकारो के सुन्दर प्रयोग हुए है।

उदाहरण

मुख शोभा कछु बरनि न जाई। सूर्ज जोति जनु जाइ समाई॥
नैन-कपाट खोहैं मनिआरा। चन्द्रकला जनु कीन्ह लिलारा॥
मोतिन्ह माल संवारेहु हारा। जैसे गगन छाय जलधारा॥[४]

❀

रामदास

आपकी रचनाओ मे आपका नाम कही 'सरसराम' और कही 'राम' मिलता है।

आपका जन्म दरभगा-जिले के 'लोहना' नामक ग्राम मे हुआ था।[५] आपके पिता का नाम कृष्णदास झा था। आप प्रसिद्ध मैथिल-कवि गोविन्ददास के सबसे छोटे भाई थे तथा मिथिला के राजा सुन्दर ठाकुर (सन् १६४१—६८ ई०) के राज-पण्डित और कवि थे। आपके द्वारा रचित एक 'आनन्द-विजय-नाटिका'[६] मिलती है, जो चार अको मे लिखी गई है। इसमे माधव का, अपने एक 'आनन्दकन्द' नामक मित्र द्वारा राधा का परिचय पाकर उसकी सहायता से, राधा से मिलना दिखलाया गया है।

---

१. Patna University Journal (Vol II, No I, Aug, 1945), P. 16.

२. इस ग्रथ की सम्पूर्ण प्रति नहीं मिल सकी है। बीच के पॉच और अन्त के कुछ पृष्ठ नहीं मिलते।

३. मूल ग्रन्थ में इसका रचना-काल शुक्रवार, कार्त्तिक कृष्ण-त्रयोदशी शक स० १६३१ दिया हुआ है।

सत केर अब करौं पौधारा। सोरह सै एकतीस सिधारा॥
कातिक मास कृस्न पछ भयेउ। तीर्थ त्रीदशी शुक दिन भयेउ॥
बादशाह नौरग सुल्ताना। सूबा इबराहीम बखाना॥

किन्तु, इस ग्र थ का पता देनेवाले प्रो० कृष्णनन्दन सहाय का कहना है कि लिपिकार ने भ्रमवश 'उनीस' को 'कतीस' पढ़ लिया है। देखिये—Patna University Journal (वही), P. 17.

४. वही, पृ० २२१।

५. गोविन्द-गीतावली (वही, भूमिका), पृ० १०।

६. यह नाटिका राजप्रेस (दरभगा) से मुद्रित और प्रकाशित है।

उदाहरण

(१)

एकसर सुजन कलपतरु लाख। सम बुझि हमे भेल तुअ अभिलाख ॥
तसु परिनति तति कि कहब आज। अपन गमरपन कहितहुँ लाज ॥
तुअ गुन रसन महघ मनु रङ्क। अनुभव प्रेम पयोनिधि पङ्क ॥
निसि-रिपु तुअ मुख अनुगत जानि। ताहि रहए देह पिकरव वानि ॥
रूपे जितली रति तोहे हमे जोर। तै पचसर सर हनहिं अंगोर ॥
देखि दुखल तुअ लोचनलागि। तैं वर कमल कलेवर आगि ॥
'सरसराम' भन सुनि भरि कान। हसि ससिमुखि परिरम्भल कान्ह ॥
कमलावतिपति गुनक निधान। बुझ सुन्दर नृप महि पचवान ॥[१]

(२)

आगे कमलिनि! करह कुसुम परगास।
तुअ रस भूखल भमर मही भम, कतहु न कर थिर बास ॥
केतकि जातकि माधवि मालति, परिहरि कुन्द नेबारि।
अवसर अनुखन झूर मनहिँ मन, तुअ गुणगण अवधारि ॥
शिशिर उसरि गेल सुरभि समय भेल, अबहु न करह गेआन।
अधर अमिअरस काहि पिअएवह, के अछि अलिसम आन ॥
रुचि सुवास गरवेँ उनमति की, भूलह भमर उपेखि।
विसरि जाएत अलि तोहर मुगुति भलि, करब कीट अवशेखि ॥
'सरसराम' भन सेहे चतुरजन, जे बुझ निअ भल मन्द।
पाए प्रेम रस परसन कए मन, पिबए भमर मकरन्द ॥[२]

❀

रामप्रिया शरण सीताराम

आप मिथिलावासी थे।[३] आपने प्राय. ४०० पृष्ठो मे 'सीतायन'[४] नामक ग्रंथ लिखा था, जिसमे सीताजी की कथा वर्णित है। इससे अधिक और आपका कोई परिचय नही मिला

उदाहरण

पितु दरसन अभिलाख जुगुल कुँवरन मन आई;
गुरु सनमुख कर जोरि भाँति बहु बिनय सुहाई।
पुलके गुरु लखि सील राम को अति सुख पाये,
ताहि समै सब सखा संग लछिमीनिधि आये।[५]

❀

---

१. A History of Maithili Literature (वही), PP. 98-99.
२. मैथिली-गीत-रत्नावली (वही), पद स० २७, पृ० १५।
३. मिश्रबन्धु-विनोद (द्वितीय-भाग, द्वितीय सं०, १९८४ वि०), पृ० ५२९।
४. मिश्रबन्धुओं ने छतरपुर-दरबार के पुस्तकालय मे यह ग्रथ देखा था।
५. मिश्रबन्धु-विनोद (वही), पृ० ५३०।

रामयार्ति

आप भोजपुर (शाहाबाद) के महाराज प्रबलशाह के मित्र थे।[१] कवि तो आप सामान्य कोटि के ज्ञात होते है, पर महाराज के मित्र होने के कारण धनी-मानी व्यक्ति रहे होगे। औरंगजेब के समय में प्रबलशाह जब कैद करके दिल्ली ले जाये गये थे, तब उनके दो पुत्र आपके ही पास थे। दिल्ली के कारागार से उनके द्वारा प्रेषित पद्यबद्ध पत्र के उत्तर में आपने भी पद्यबद्ध पत्र लिख भेजा था।

उदाहरण

राम गये बन से तुम जानत, सीय हरी है सो तुम जानो।
कौरव पाण्डव की विपदा को, सो नीके ही जानो कहा लो बखानो॥
देवकि औ वसुदेव बँधे दोउ, राम कहै सोउ ही यह आनो।
भावि प्रभावति है सबको, प्रबलेस सुनो जिय रोस न आनो॥[२]

रुद्र सिंह

आप रामगढ (हजारीबाग) के राजा थे।[३] आपके पिता महाराज दलेलसिंह स्वयं एक कवि थे। आपके पढने के लिए ही पदुमनदास ने 'हितोपदेश' का हिन्दी-पद्यानुवाद किया था। पिता की अनुमति प्राप्त कर और युवावस्था मे ही सन्यास ग्रहण कर आप वृन्दावन मे रहने लगे थे, जहाँ आपकी मृत्यु हुई।

आपने अनेक ग्रथो की रचना की थी, जिनमे सर्वोत्तम 'ज्ञानसुधाकर' बतलाया जाता है। आपकी रचना के उदाहरण अनुपलब्ध है।

लोचन

आप दरभगा-जिले के 'उद्यान' (वर्त्तमान 'उजान') नामक ग्राम मे रहते थे।[४] आपके पिता का नाम बाबू झा था। आप मिथिला के राजा महीनाथ ठाकुर (सन् १६७३—९४ ई०)[५] और उनके अनुज नरपति ठाकुर (सन् १६९५-१७०५ ई०) के आश्रित[६] कवि थे। आप मध्यकालीन भारतीय सगीत-कला के भी मर्मज्ञ कहे गये है।

---

१. दिलीपपुर (शाहाबाद) निवासी श्रीदुर्गाशकरप्रसाद सिंह से प्राप्त सूचना के आधार पर।

२. वही।

३. श्रीसूर्यनारायण भण्डारी (इचाक, हजारीबाग) के द्वारा प्राप्त सूचना के आधार पर।

४. रागतरंगिणी (वही, भूमिका), पृ० ख। आज भी आपके वशज उक्त ग्राम में निवास करते हैं।

५. डॉ० सुभद्र झा शास्त्री के अनुसार सन् १६६८ से ९० ई० तक।
—Patna University Journal (Vol I, No 2, Jan. 1945), P. 39.

६. 'अखिल भारतीय ओरियण्टल कान्फरेन्स' के द्वादश अधिवेशन के अवसर पर आचार्य क्षितिमोहन सेन (शान्तिनिकेतन) ने आपकी गणना बगाल के प्रमुख सगीताचार्यों में करते हुए, आपको १२वीं शती में, राजा लक्ष्मणसेन का आश्रित कवि बतलाया था। किन्तु अब यह धारणा नितान्त भ्रामक सिद्ध हो चुकी है।—देखिए, वही, पृ० ३६-३९।

आपने शकाब्द १६०७ (१६८५ ई०) में नरपति ठाकुर की आज्ञा से सगीत-विषयक एक पुस्तक 'रागतरगिणी'[१] लिखी थी। इसकी पाँच तरगो में आपने राग-रागिनियो की उत्पत्ति और उनके सम्बन्ध की अनेक बातो का वर्णन किया है। साथ ही इसमे आपने अपने समकालीन तथा अपने पूर्ववर्त्ती लगभग चालीस प्रमुख मैथिली-कवियो के गीत उदाहरण-स्वरूप उद्धृत किये है। मुख्यतया इसी कारण इस पुस्तक का विशेष महत्त्व हो गया है। आपके द्वारा रचित एक और ग्रंथ 'संगीत-सग्रह' कहा जाता है जो अनुपलब्ध है। आपके हाथ की लिखी हुई 'नैषध' की एक प्रति भी मिली है, जो राज-लाइब्रेरी, (दरभगा) मे सुरक्षित है।[२]

उदाहरण

(१)

कलधौत कङ्कन कलित कर तामरस, चामर करति पति राग सिरदार सजौं।
ललिका सी कासीपति पतिका सहासी गीत, गतिका बिराजइ बरनारी उरहार सजौं।
रागिनि बराडी सुरपादप सुमन सजौंन भूषन बनाए बनी सोरह सिंगार सजौं।
दामिनी-सी कामिनी कला में काम-भामिनी सी, जामिनी में देति सुख भैरव भरतार सजौं।[३]

(२)

चामर चिकुर वदन सानन्द। सरबस सनि जनि पुनिमक चन्द॥
चञ्चल विमल विलोचन मीन। अञ्जन परिचित खञ्जनलीन॥
विधि-निधि सोँइ तिला एक। मिललि कहलि नहि जाइ॥
दशन दालिमदुति भौँह कमान। कुटिल विलोकन विख विषवान॥
नासा दशन वसन बहुमूल। तिलफुल फुजल मधुरिफुल तूल॥
रुचिर कम्बुग्रिव मोतिम पाँति। बाहुलता कर पल्लव काँति॥
कुचयुग यमल कमल शिरमाल। निचिल रोमावलि समुचितनाल॥
नाभिकूप करिकुम्भ निलम्ब। जङ्घ केवलि भेल तसु अवलम्ब॥
उरयुग युगल करभ अनुमान। पद-पङ्कज नख केतु समान॥
कुल गुन गौरव विनय विवेक। बुझल विनोदिनि सब अतिरेक॥
सरस सुमति कवि 'लोचन' भान। एहन रमनि रुकुमिनि-पति जान॥[४]

❀

---

१. यह पुस्तक प० बलदेव मिश्र के सम्पादन में राजप्रेस (दरभगा) से प्रकाशित हो चुकी है। पता चला है कि बम्बई से भी श्रीमालचन्द्र सीताराम सुकथाकर के सम्पादन में भी इसका प्रकाशन हुआ है और दोनों के पाठान्तर में अन्तर है।

२. Patna University Journal (वही). P. 39—इस प्रति का अतिम वाक्य इस प्रकार है—'शाके १६०३ विजयादशम्या रैआग्रामे स्वार्थमिदमलिखित् श्रीलोचनशर्मा एकलङ्गलवंशीयः॥' इसी वाक्य के आधार पर डॉ० सुभद्र झा लोचन कवि को दरभगा-जिले के 'रैआम' नामक ग्राम का निवासी मानते हैं।

३. रागतरगिणी (वही), पृ० ११।

४. मैथिली-गीत-रत्नावली (वही), पद स० ३२, पृ० १८।

विधातासिंह[१]

आपका जन्म पुनपुन-नदी तटस्थ तारणपुर[२] (पटना) मे, १७३८ वि० (सन् १६८१ ई०) में, हुआ था। आपके पिता खुशहालसिह लिखने-पढने के अतिरिक्त आपको अधिक शिक्षा न दे सके। किन्तु स्वाध्याय के बल पर आप एक बडे कवि हुए। आप कसरत करने, घोडे पर चढने तथा तीर-गोली चलाने मे सिद्धहस्त थे। समाज-सेवा मे भी आपकी विशेष दिलचस्पी थी। आपने अपने इलाके के कृषको की भलाई के लिए अनेक उल्लेखनीय कार्य किये थे। आपको देशाटन से भी विशेष प्रेम था। देशाटन कर आपने उस समय के प्राय सभी प्रमुख कवियो से सम्पर्क स्थापित किया था। जिन कवियो से आपका निकट-सम्पर्क था, उनमें प्रमुख के नाम इस प्रकार है—अनन्य, आदिल, केशव, गिरिधर गोपालशरण, गुरुगोविन्दसिंह, चन्द, बिहारी, वैताल, मतिराम, रसिकविहारी, लाल, आदि। कहते है, बादशाह शाहजहाँ ने आपको अपने दरबार मे रखना चाहा था, किन्तु उसी समय औरंगजेब के द्वारा स्वय बादशाह बदी बना लिये गये, इसी कारण उनके दरबार में आप न जा सके। जब औरंगजेब गद्दी पर बैठा, तब उसने भी आपको आमन्त्रित किया, किन्तु उसके द्वारा शिवाजी के कैद कर लिये जाने की सूचना पाकर आप वहाँ नही गये। १७८८ वि० में, पुनपुन, मोरहर नामक नदियो के सगम पर एक युद्ध मे आप वीरगति को प्राप्त हुए।

उदाहरण

मूरख सो कछु पूछिए, उत्तर देहैं काह।
क्रोध बिबस दुर्बाद कहि, सुजन हदै को दाह ॥
पंडित मूरख प्रश्न तें, समुझि परत हैं मीत।
कोयल बचन सुनाय इक, एक कहत बिपरीत ॥
प्रश्नोत्तर जब बनत नहिं, दुष्ट न सों सुन भाय।
कहि गँवार तिन्ह बिज्ञ को, मनमें अति हर्षाय ॥
प्रथम पढहु विद्या सकल, और करहु कछु ध्यान।
कृषी कर्म वाणिज्य में, हो सब सजग सुजान ॥[३]

❋

शंकर चौबे[४]

आपका नाम 'शकरदास' भी मिलता है।

आपका जन्म १७२६ वि० (१६६९ ई०) में सारन-जिले के इसुआपुर-ग्राम (परगना-गाआ) मे हुआ था।[५] आपके पिता का नाम शोभा चौबे था। आरम्भ मे घर

---

१. महाराज कुमार रामदीनसिंह ने खड्गविलास प्रेस (पटना) से प्रकाशित अपने 'बिहार-दर्पण' में आपकी विस्तृत जीवनी दी है।

२. विहार-दर्पण (वही), पृ० ८४। यह ग्राम पटना से दक्षिण चार कोस पर बसा है।

३. वही, पृ० ९६।

४. बाबू रामदीनसिंह ने अपने 'बिहार-दर्पण' में आपकी भी विस्तृत जीवनी दी है।

५. बिहार-दर्पण (वही), पृ० १४३।

पर ही आपको साधारण शिक्षा मिली थी। पीछे आपकी कुशाग्रबुद्धि तथा विलक्षण स्मरण-शक्ति को देखकर एक पडित ने आपको काशी जाकर उच्च शिक्षा प्राप्त करने की सलाह दी, जिसके अनुसार वहाँ जाकर आपने 'शास्त्री' की उपाधि प्राप्त की।

कहते हैं, एकबार दुर्दैववश आपको कुष्ठरोग हो गया था, जिससे मुक्ति पाने के लिए आप छपरा से तीन कोस पूरब 'चिरान' नामक स्थान में जाकर गगा-सेवन करने लगे। वहाँ आपने गगा की स्तुति मे बहुत-सी कविताएँ बनाई। नीरोग होकर घर लौटने पर आपने विवाह किया। आपके दो पुत्र हुए। प्रसिद्ध कवि और पण्डित जीवाराम चौबे[1] आपके ही ज्येष्ठ पुत्र थे। अपने द्वितीय पुत्र के जन्म के बाद आप अपने घर से एक कोस पर 'अगथवर' नामक ग्राम (वर्त्तमान 'अगौथर') मे रहने लगे। आपकी ज्ञान-गरिमा तथा भगवद्भक्ति को देखकर सारन, चम्पारन, मुजफ्फरपुर आदि जिलो के सैकड़ो व्यक्ति आपके शिष्य हो गये।

वृद्धावस्था मे आप घर का कामकाज अपने बडे पुत्र को सौपकर स्वय गगा-सरयू के सगम (छपरा) पर हरि-भजन मे लीन रहने लगे। तभी से आप 'शकरदास' कहलाये। आपकी क्षमाशीलता, और निष्कामता की कई कहानियाँ प्रसिद्ध है।[2] १८०६ वि० में, ८० वर्ष की आयु मे आपका स्वर्गवास हुआ।

आप एक आशुकवि थे। फलत अनायास दोहा-चौपाइयो की रचना कर डालते थे। आपने 'राम-माला' नामक एक वृहत् काव्य-ग्रथ की रचना की थी, जिसके १०८ खण्डो में ११६६४ भजन सगृहीत है। इसके अतिरिक्त शिव, पार्वती, गगा, यमुना आदि के माहात्म्य पर भी आपने बहुत-से भजन, कवित्त, सवैये, दोहे, चौपाई आदि की रचना की थी।

उदाहरण

उद्यम साहस धैर्य्यबल, बुद्धि पराक्रम जाहि।
ये छ जेहि उर बसत है, देव शङ्क करु ताहि॥
लालच बस जननी जनक, पुत्र भ्रात गुरु जान।
मित्र स्वामी को बधत हैं, अस कह नीति सुजान॥[3]

❀

---

१. कविता में ये अपना नाम 'युगल-प्रिया' लिखते थे। इनकी एक पुस्तक 'रसिक-प्रकाश-भक्तमाल' है, जिसमें इन्होंने अपने पिता प० शकर चौबे की विस्तृत जीवनी लिखी है। यह पुस्तक खड्गविलास प्रेस (पटना) से प्रकाशित हुई थी।

२. इस प्रकार की कहानियों के लिए देखिए 'बिहार-दर्पण' (वही), पृ० १५७-१६०।

३. उक्त दोहों की रचना आपने अपनी बाल्यावस्था में ही, अनायास की थी। कहते है, एक दिन आपके सामने किसी विद्वान् ने निम्नाकित दो श्लोक पढे। श्लोक का अर्थ ज्ञात होते ही आपने उसके अनुवाद के रूप में उक्त दोहों की रचना कर डाली। श्लोक इस प्रकार थे—
उद्यमं साहस धैर्य्यम्बलम्बुद्धि· पराक्रम। षडेते यस्य विद्यन्ते तस्माद्दैवोपि शङ्कते॥
मातरम्पितर पुत्र भ्रातर च गुरुन्तथा। लोभाविष्टो नरो हन्ति स्वामिन वा सुहृत्तमम्॥
—बिहार-दर्पण (वही), पृ० ४४-४५।

(पाण्डेय) शीतलसिंह

आपने दिल्लीके सम्राट् शाहजहाँ के समय (सन् १६२८-५८ ई०), राजकीय प्रतिष्ठा प्राप्त कर चिरैयाकोट (गोरखपुर) से विहार के सारन-जिले मे आकर 'शीतलपुर' ग्राम बसाया था।[१] आपके वश मे उर्दू, फारसी और हिन्दी के अनेक कवि हुए। वर्त्तमान युग के स्व० दामोदरसहाय 'कविकिंकर' आपके ही वशज थे।

आप एक अच्छे कवि थे। आपकी रचनाएँ आपके वशजो के पास थी, पर १९३४ ई० के भूकम्प मे नष्ट हो गई, इसी कारण कोई उदाहरण उपलब्ध नही हुआ।

❀

साहबराम

आप शाहावाद-जिले के अम्वा-ग्राम निवासी थे।[२] प्रसिद्ध-कवि चन्दनराम[३] आपके ही पुत्र थे, जिनपर परिवार का भार सौंपकर आप काशीवास करने चले गये। वही आपका कैलास-वास हुआ।

आप अपने समय के एक प्रसिद्ध कवि थे। पद्माकर, दत्त भंजन आदि कवियो से आपकी गहरी मित्रता थी। अनेक राजाओ ने आपको विभिन्न उपाधियाँ दी थी। किसी राज-दरवार मे अनेक कवियो को परास्त करने के कारण आपको 'कविराजाधिराज' की उपाधि मिली थी।

आपने तीन पुस्तको की रचना की थी, जिनमे 'रसदीपिका' प्रसिद्ध है। आपकी रचना का कोई उदाहरण नही मिला।

❀

हलधरदास[४]

आपका जन्म मुजफ्फरपुर-जिले के विसौरा (वर्त्तमान 'बिसारा') परगने मे 'पद्मौल' नामक गाँव मे हुआ था।[५] जन्म के कुछ ही दिनो वाद आपके माता-पिता चल बसे। वाल्यावस्था मे ही आपने संस्कृत एवं फारसी का अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया था। पुराणो तथा व्याकरणो के अध्ययन की ओर आपकी विशेष अभिरुचि थी। दुर्भाग्यवश शीतला से आक्रान्त हो जाने के कारण आपकी दोनो आँखे जाती रही और आप भगवान् श्रीकृष्ण के शरणापन्न हुए। आप अक्सर गाँव के लड़को को बुलाते और हरिकीर्त्तन के सुन्दर-सुन्दर पद वनाकर गाते-गवाते थे। कहते हैं, एकवार जव आप जगन्नाथजी जा रहे थे, तब स्वप्न में भगवान् श्रीकृष्ण ने आपको शंकर के चरणो का ध्यान करने तथा भक्त सुदामा के

---

१. 'शीतलपुर' (छपरा, सारन)-निवासी पाण्डेय जगन्नाथप्रसादसिंह से प्राप्त सूचना के आधार पर।

२. आरा-निवासी स्व० शिवनन्दन सहाय द्वारा लिखित सूचना-पत्र के आधार पर।

३. इनका परिचय इसी पुस्तक में यथास्थान मुद्रित है।

४. पुस्तक-भण्डार (लहेरियासराय) के रजतजयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ में श्रीअच्युतानन्ददत्त-लिखित आपका विस्तृत-परिचय द्रष्टव्य है।

५. रजत जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ (वही), पृ० ४३४।

चरित-वर्णन करने का आदेश दिया[१], जिसके परिणामस्वरूप आपने हिन्दी में 'सुदामाचरित'[२] और सस्कृत मे 'शिवस्तोत्र' की रचना की। पद्मौल-ग्राम मे आपके स्थापित किये हुए 'नर्मदेश्वर महादेव' है, जिन्हे लोग 'हलधरेश्वर' भी कहते है।

आपने आजीवन ब्रह्मचर्य-व्रत लिया था। कहते है, १०१ वर्ष की आयु मे आपने जीवित समाधि ले ली थी। वह स्थल आज भी पद्मौल मे वर्त्तमान है।[३]

उदाहरण

(१)

एक समय दु.ख-भरी नारि कतहि समुझावै।
सुनहु कन्त मम विनय दीनता अधिक सतावै॥
विनु उद्यम संतुष्ट आतमा सुन्यौ न साईं।
विनु हरि-भक्ति न मुक्ति करहु त्रिभुवन में पाईं॥
कनिक भरिव से नाहिं धन, अधिक मान आदर न रह।
जौं महेश त्रिभुवन धनी, तौं भिखारि संसार कह॥[४]

(२)

दहिन कमल कर लिये कनक झारी हरिवामा।
वाम कमल कर ते पखारती चरन सुदामा॥
जासु चरन-रज धरत ध्यान मुनि जन्म गँवायो।
जाको गति नहि सिव विरंचि पन्नगपति पायो॥
जेहि सुर सदा पुकारते जगदम्बा जगतारिणी।
तिन्हें आजु सुर देखते भिक्षुक-चरण-पखारिणी॥[५]

❀

१. अवचक ही प्रभु स्वप्न में, टेरि सुनायो वैनु।
जागु जागु रे हलधरा, चन्द्रचूड-पद-रेनु॥
चन्द्र चूड़-पद-जपन करु, जग सपना को ऐन।
और कछुक तू कान धरु, सुधा-सरिस मो वैन॥
तू चरित्र मम मित्र को, करु प्रसिद्ध ससार।
जासु वाहुरी प्रेम सों, हम कीन्हीं आहार॥—वही, पृ० ४३६।

२. इस पुस्तक की रचना करने में आपके मित्र मुंशी रामलाल ने बडी सहायता की थी। इसकी चार प्राचीनहस्तलिखित प्रतियाँ विहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् (पटना) के हस्तलिखित-ग्रन्थ अनुसधान-विभाग, तीन नागरी-प्रचारिणी-सभा (काशी) में सुरक्षित हैं।
सन् १८६६ ई० में सुधानिधि प्रेस, कलकत्ता और १६०३ ई० में खड्गविलास प्रेस, पटना से यह प्रकाशित भी हुई थी।

३. एकबार मुशी मजलिस सहाय ने इसे खुदवाया, तो उसमें से एक माला और एक खड़ाऊँ निकली थी।

४. रजत-जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ (वही), पृ० ४४०।

५. वही, पृ० ४४०।

हिमकर

आप दरभंगा जिले के सरिसब-ग्राम-निवासी[1] और सुप्रसिद्ध कवि गोविन्ददास के छोटे भाई हरिदास झा के पौत्र थे।

आपने मैथिली में शिव-पार्वती-सम्बन्धी पदो की रचना की थी, जिनमे से कुछ लोककठ में सुरक्षित है।

उदाहरण

देखु सखि ! देखु सखि ! उमत जमाए।
ग्रिव वासुकि शशि तिलक बनाए ॥
गमन कएल हर गौरि-उपदेश।
सिन्दुर धार पद् दृइल महेश ॥
विधु भीतर मृग ऊठल काँपि ॥
बाघ-छाल वसन वदन लेल झाँपि।
हँसि गेलि सभ सखि हर-रूप देखि।
गोचर 'हिमकर' करथि विशेखि ॥[2]

※

अठारहवीं शती

अग्निप्रसादसिंह[3]

आप सोनपुर (सारन) के निवासी थे।[4] आपने गद्य और पद्य दोनो में रचनाएँ की थी। रचनाएँ मुख्यत भक्ति-सम्बन्धिनी होती थी। पुस्तकाकार आपकी तीन रचनाओ का पता चलता है—'गगा-गंडक-महिमा', 'सोनपुर-मेला-वर्णन' और 'ज्यौतिष-तन्त्र'। आपके लिखे भजन, प्रभाती, ठुमरी आदि आज भी वहाँ के ग्रामीण लोग गाते है।

आपकी मृत्यु १९वी शती के प्रथम चरण मे हुई। उसी समय के लगभग आपके एक पौत्र की भी मृत्यु हो गई, जिसके वियोग में, विक्षिप्तावस्था प्राप्त कर आपकी पुत्रवधू ने आपकी रचनाएँ जला दी। इसी कारण, आज वे रचनाएँ बहुत ही कम उपलब्ध होती है।

उदाहरण

भोला के दे न जगाई रे माई।
दर्शन के हित आये खडे हैं, ब्रह्मा, विष्णु गोसाईं।
सनक, स्यनन्दन, सनत, कुमारा, नारद वीणा बजाई ॥

---

१. मैथिली-गीत-रत्नावली (वही), पृ० ७९।

२. वही, पद स० ५३, पृ० ३०-३१।

३. आपका परिचय श्रीमित्रजीतसिंह ने सोनपुर की 'आभा' नामक पत्रिका के सोनपुर-अंक (मई, १९५६ ई०) में लिखकर प्रकाशित कराया था।

४. 'आभा' (वही), पृ० २४३।

गंगा जमुना औ सरस्वती, झारी भर जल लाई।
उठो भोला, मुख मंजन कीजै, गंग भंग बन आई॥
कोई चढावे भोला अच्छत चन्दन कोई बेलपत्र बनाई।
कोई बैठत शिव ध्यान धरत हैं, कोई शिव स्तुति गाई॥
भोला जागे, सब दुख भागे, चार पदारथ पाई।
अगिनप्रसाद रहे कर जोरी सुखि करावहु भाई॥[१]

※

अचल कवि

आपकी रचनाओ मे कही-कही आपका नाम 'अच्युतानन्द' भी मिलता है।

आप 'परमरमा' (सहरसा)-निवासी और मिथिला-नरेश महाराज लक्ष्मीश्वरसिंह के दरबारी कवि थे।[२] वर्त्तमान वयोवृद्ध श्रीजगदीश कवि आपके ही पुत्र है। आपके पिता का नाम कृष्णाकवि[३] था। आपकी गणना बाबा लक्ष्मीनाथ गोसाई के परमप्रिय शिष्यो मे होती थी। मृदगाचार्य और योगी के रूप मे भी आपकी अच्छी ख्याति थी। आप रायबहादुर लक्ष्मीनारायणसिह, पचगछिया के भी प्रथम गुरु कहे गये है। लगभग १०७ वर्ष की आयु मे आप परलोक सिधारे।

आप एक प्रसिद्ध भक्त-कवि थे। पुस्तकाकार तो आपकी कोई रचना नही मिलती, किन्तु पदो के रूप मे कतिपय स्फुट रचनाएँ मिलती हैं। इन रचनाओ मे 'तारा का ध्यान' शीर्षक कविता, जिसकी रचना आपने अपने आश्रयदाता के आदेशानुसार की थी, बहुत प्रसिद्ध है। अपनी रचनाओं के लिए आपने व्रजभाषा और मैथिली का आश्रय लिया है।

उदाहरण

(१)

विश्वव्यापि कमल मध्य विलसति है नीलवर्ण
व्याघ्र चर्म वसन विम्ब सोभित सुखमान
युगल चरण नूपुर धुनि कटि किंकिन अति पुनीत
गले मुण्डमाल उर व्याल लिपटान
वाम उर्द्ध नील कमल तद् अधकरनरकपाल
सव्ये भुजकर्त्री असि केयूर झलकान
चुबुक चारु बिम्बाधर सीखर त्रिह पाँति दसन
नासा कीर तीन नयन भृकुटी सर तान

---

१. 'भामा' (वही), पृ० २८३।
२. श्रीजगदीश कवि, (सुनपुरा-परमरमा, सहरसा) से प्राप्त सूचना के आधार पर।
३. इनका परिचय इसी ग्रंथ में यथास्थान मुद्रित है।

भाल इन्दु सिन्दूर लाल विन्दु जटिल जट विशाल
अच्छोभ ऋषि राजै सिर सोभा की खान
अच्युतानन्द जयत नित्त तुम्र पद उर धरत चित्त
आदि सक्ति तारा अभय दीजै वरदान ।[1]

(२)

हौ तूं भय हारणि दुख विपति विदारिणी मां,
तूही जगतारिणी तीनि लोक प्रतिपारैगो ।
अतल वितल तलातल रसातल पताल वारि,
कच्छप पृष्ठ धरणि तूही निरवारैगो ।
जहाँ जहाँ मन्दर समुन्दर है जहाँन माह,
तहाँ तहाँ माता नाम तेरोई पुकारैगो ।
कवि अचल आय सरन निश्चल ह्वै करहु मगन,
तू ना उबारै तारा कौन महि उबारैगो ।[2]

❋

अजबदास[3]

आपका वास्तविक नाम 'अजाएब पाण्डेय' था, किन्तु आपके पिता प्यार से आपको 'अजब' कहा करते थे। पीछे संत हो जाने पर आप 'अजबदास' के नाम से प्रसिद्ध हुए।

आपका जन्म शाहाबाद जिले के 'कर्जा'[4] नामक ग्राम में हुआ था।[5] आप प्रसिद्ध कवि 'देवाराम'[6] के पुत्र थे। अपने पिता के आदेशानुसार आपने 'नृपतिदास' से ही दीक्षा ली थी। आप सस्कृत के एक अच्छे ज्ञाता थे। सस्कृत के माध्यम से आपने योग, ज्योतिष, व्याकरण आदि विषयो का अध्ययन किया था। हिन्दी में आपके तीन ग्रंथो का उल्लेख मिलता है। उनके नाम इस प्रकार है—(१) ब्रह्म-अक्षरी-झूलना, (२) गीता-सार-सग्रह और (३) भगवद्-चर्चा। इनके अतिरिक्त भोजपुरी मे रचित आपकी कतिपय स्फुट रचनाएँ भी मिलती है।

उदाहरण

राम नाम के अन्तर नाहीं, देख बूझो अभिअन्तर साधो ।
केहू कहेला माधो मंदिर आला महजिद माहीं ।
कहत-कहत जम्हु पकरि ले गइले, भेद न पावे काहीं ॥

---

१. श्रीजगदीश कवि (वही) द्वारा प्राप्त।
२. वही।
३. श्रीसर्वदेव तिवारी 'राकेश' परसियाँ, शाहाबाद आपके सम्बन्ध में विशेष रूप से अनुसधान कर रहे है।
४. यह स्थान शाहाबाद जिले के बिहिया रेलवे-स्टेशन से छह मील उत्तर में स्थित है।
५. श्री 'राकेश' से प्राप्त सूचना के आधार पर।
६. इनका परिचय इसी ग्रथ में यथास्थान मुद्रित है।

केहू नंगा, केहु वस्त्र रंगावे, केहु मौनी केहु भूखे।
केहू पुजावे ताल पोखरिया, केहु पीपर के रूखे॥
उहे राम, माधो, हरि काली, ब्रह्मा, हनु शिव गौरी,
उहे करीमा आला अकबर, काहें दर-दर बौरी॥
एके तरु के मूल पतैया, जड़ पूजे तरु भूले।
मूल सींचि के पत्ता काटे, से चौरासी झूले॥
ब्रह्म एकछरा एके अंबुज, सोरह नाम बतावे।
श्रीगुरु नृपति मंत्र दियो है, जे भावे से धावे॥
अजबदास ए जग के माया अंगुरी पकड़ि नचावै।
छाड़ि कपट सभ एकही धावै ना चौरासी आवै॥[1]

❀

अनिरुद्ध

आप मिथिला-निवासी और मिथिलेश महाराज राघवसिंह (सन् १७०४-४० ई०) के आश्रित थे। आपने मैथिली में कतिपय पदो की रचना की थी, जो लोककंठ में जीवित है।

उदाहरण

ओ कि माधव! देखल वियोगिनि वामा।
अधर न हास, विलास न सखि सँ, अहनिशि जप तुअ नामा॥
आनन शरद सुधाकर समतसु, बोल मधुर धुनि बानी।
कोमल अरुण कमल कुम्हिलाएल, देखि मन अएलहुँ जानी॥
हृदयक हार भार भेल सुवदनि, नयन न होअ निरोधे।
सखि सभ आए खेलाए रङ्ग कए, तसु मन किछुओ न बोधे॥
रगड़ल चानन मृगमद कुङ्कुम, सत्र तेजलक तुअ लागी।
पुनि जलहीन मीन जकाँ फिरइछ, अहनिशि रहइछ जागी॥
हरि हरि कए उठ हरिनि-नयनि धनि, चिकुरो न चेतए राही।
तुअ विपलेख विखिन मन अनुखन, काहे बिसरलह ताही॥
दुति-उपदेशे पेअसि गुन सुमिरल, तहिखन चलल मधाई।
मदावति-पति राघवसिह गति, 'अनिरुद्ध' कवि इहो गाई॥[2]

❀

---

१. श्री 'राकेश' द्वारा ही प्राप्त।

२. मैथिली-गीत-रत्नावली (वही), पद स० ७२, पृ० ४१-४२।

यह पद किंचित् परिवर्त्तन के साथ श्रीनगेन्द्रनाथ गुप्त द्वारा सम्पादित 'विद्यापति ठाकुर की पदावली' में विद्यापति के नाम पर सगृहीत है। उसमें भनिता इस प्रकार है—

दूति उपदेश सुनि गुनि सुमिरल तखन चलला धाई।
मोदवती पति राघवसिंह गति कवि विद्यापति गाई॥
विद्यापति ठाकुर की पदावली (वही), पद स० ७४६, पृ० ३७६-३७७।

अनूपचन्द दुबे

आपका उपनाम 'रामदास' था।

आपका जन्म १८१६ वि० (१७५६ ई०) में 'धनगाई' (शाहाबाद) ग्राम में हुआ था।[१] आप सदैव अपने चचेरे भाई मानिकचन्दजी के साथ रहते थे। आपके पिता बहादुर दुबे सगीत के बडे विशेषज्ञ थे और डुमरॉंव-राज के दरबार मे रहते थे। आपके मन्त्र-गुरु डुमरॉव-निवासी श्यामसखाजी थे। प्रसिद्ध वीणा-विशेषज्ञ निरमोल शाह को तानपुरा बजाने मे परास्त कर आपने डुमरॉंव-दरबार से ६ हजार रुपये की सालाना तहसील का इलाका पुरस्कार-स्वरूप पाया था। आपका निधन १६१० वि० (१८५३ ई०) में हुआ।

आपकी सारी रचनाएँ संगीत से सम्बद्ध है। 'चतुरंग', 'सरगम', 'बोल', 'तराना', 'धम्मार' आदि गीतो के पद आपने बडे ही ललित बनाये है। आपकी रचना के उदाहरण अनुपलब्ध है।

※

आनन्द

आप मिथिला-निवासी आर मिथिलेश महाराज माधवसिंह (सन् १७७६ से १८०७ ई०) के आश्रित थे। आपने मैथिली मे कतिपय पदो की रचना की थी, जो विशेषत लोककठ में जीवित है।

उदाहरण

(१)

गौरी अरधङ्गी सङ्गहिं लए हर होरी माचव।।
वामे अतँर अरगजा केसरि, योगिनि अबिर उराव।
दहिने भूत प्रेतगण नाचए, मलि मलि भसम चढाव।।
सिन्दुर लाल वसन मणिमुकुता वाम भाग झलकाव।
मुण्डमाल उर व्याल दहिनदिशि, बाघ-छाल फहराव।।
भाँति-भाँति योगिनिगण नाचए, फागु अलाप मचाव।
नन्दी भृङ्गी भैरबगण मिलि, डम्फ मृदङ्ग बजाव।।
मिथिला-पति माधव बड़दाता, के नहि अभिमत पाव।
गौरीशंकर होरी खेलथि, सेवक 'आनन्द' गाव।।[२]

(२)

शशि शेखर नटराज हे गिरिराजक घर मे।
लएलहुँ ऊँच जमाए हे एहि रमण नगर मे।।
छल उत्तम तोर भाग हे गिरिजा भेलि वश मे।
मिलल नीम अति तीत हे अंगूरक रस मे।।
नागरि एहनि के आन हे आगरि सम फन मे।
'आनन्द' कहथि बुझाए हे धरु धैरज मन मे।।[३]

※

---

१. श्रीजगदीश शुक्ल, राजराजेश्वरी हाईस्कूल, सूर्यपुरा (शाहाबाद) से प्राप्त सूचना के आधार पर।
२. मैथिली-गीत-रत्नावली (वही), पद स० ८२, पृ० ४७-४८।
३. प्रो० ईशनाथ झा (दरभंगा) द्वारा प्राप्त।

आनन्दकिशोरसिंह

आप बेतिया (चम्पारन) के महाराज थे।[१] महाराज नवलकिशोरसिंह[२] आपके ही अनुज थे। आप स्वय कवि तो थे ही, कवियो के एक बहुत बडे आश्रयदाता भी थे। आप सन् १८१६ ई० में बेतिया की गद्दी पर बैठे थे। आपके दरबार मे चित्रकारो, पडितो तथा सगीतज्ञो के अतिरिक्त नारायण उपाध्याय, दीनदयाल, मायाराम चौबे, मुशी प्यारेलाल, कालीचरण दूबे, मँगनीराम, रामदत्तमिश्र और रामप्रसाद आदि प्रमुख कवि भी थे। दशहरे के अवसर पर आपके यहाँ एक बहुत बडा कवि-सम्मेलन हुआ करता था, जिसमें कवियो को वहुमूल्य वस्त्र और द्रव्य पुरस्कार स्वरूप दिये जाते थे। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, पजनेस, राजा शिवप्रसाद सितारे-हिन्द, अम्बिकादत्त व्यास आदि सुप्रसिद्ध कवि और लेखक भी समय-समय पर आपके द्वारा सम्मानित हुए। आपके आदेश पर कवि रामप्रसाद ने सन् १८२० ई० में 'आनन्द-रस-कल्पतरु'[३] नामक ग्र थ की रचना की थी।

आपके द्वारा रचित 'रागसरोज' नामक एक ग्र थ का उल्लेख मिलता है। इसके अतिरिक्त आपने अनेक 'ध्रुपद' भी बनाये थे, जो उत्तर-भारत के सगीतो मे विशेष प्रचलित हुए। कराली काली के उपासक होने के कारण आपकी रचनाओ मे दुर्गा-वन्दना का बाहुल्य है।[४]

उदाहरण

विन्ध्येश्वरी विविधरूप राजित श्री विन्ध्याचल।
जगत विदित धर सरूप, ब्रह्ममयी सिद्धस्थान॥
इन्द्रादि कर जोर द्वार, सनकादिक नहि पावे पार।
सुर नर मुनि विनय करत, ब्रह्मादिक धरत ध्यान॥
जित तित परवत परवान, सुरसरि को धवल धार।
चन्द्रमा वितान तान, प्रदीपक मनहु भान॥
ऋदि-सिद्धि सकल दृष्टि सर्वमयी सर्वकला।
'आनँद' को सुख-निधान॥[५]

※

---

१. चम्पारन की साहित्य-साधना (वही), पृ० १८।

२. इनका परिचय इसी पुस्तक में यथास्थान मुद्रित है।

३. इस ग्रंथ की मूल हस्तलिखित प्रति मन्नूलाल पुस्तकालय (गया) में सुरक्षित है।

४. आपके अनुज की रचनाओं का एक सग्रह 'दुर्गा-आनन्द-सागर' नाम से सीमित सख्या में, लीथो में छपा था, जिसकी एक प्रति काशी-नरेश के पास हाल तक थी। कहते हैं, बेतिया-राज के भूतपूर्व मैनेजर श्रीविपिनविहारी वर्मा ने भी इस प्रकार के लगभग ५०० पदों का सग्रह कराया था। कहा नहीं जा सकता, उसका क्या हुआ?

५. बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् (पटना) के हस्तलिखितग्रंथ-अनुसंधान-विभाग, में सुरक्षित और श्रीगणेश चौबे (बँगरी, चम्पारन) द्वारा सम्पादित हस्तलिखित-सग्रह 'विभिन्न कवियों के पदो के संग्रह' से।

इसवी खाँ

आप भभुआ-सबडिविजन (शाहाबाद) के निवासी थे।[1] हिन्दी में शान्त और शृंगार-रस की कविताएँ आपने बहुत अच्छी लिखी थी। आपने 'बिहारी-सतसई' की टीका भी राजा छत्रसिंह की आज्ञा से लिखी थी, जिसका नाम 'रस-चन्द्रिका' है।[2]

उदाहरण

(१)

इस जगह बादि को अर्थ वृथा को है। हेत्वार्थ दोहे का यह है कि अपने मत का झगरा करना वृथा है। क्योंकि जिननै सेया तिननै मानो नन्द किसोर ही को सेया है, क्योंकि ब्रह्मा, शिव सनकादि सब विष्णु ही हैं। तौ जिननै जिसको पूजी, तिन मानो विष्णु ही को पूजी। पमाख्यालंकार, तिसका लच्छण।[3]

(२)

सबेर का समै है। सारी रात मनावते सबेरा हो गया। सो सखी नायिका सो कहत है कि हा हा वदन उघारि हम सब सखियाँ दृग सफल करो। और सकारे हुए सों जो ए कमल खिले हैं, सो तेरा मुख चन्द देखे सों मूंदि जाहि। और सकारे हुए सो जो चाँद मन्द हुआ है, तिसे हंसी होइ, क्योंकि तेरा मुख चन्द ऐसा है कि सबेरा हुए भी उसकी जोति मन्द नहीं होती। और जो ससी सों चन्द्रमुखी लीजै औ सरोज सों कमल नैनी लीजै तौ अर्थ तो होते हैं पै व्यंग सो छिपे होते हैं।[4]

ईश कवि

आप मिथिला-निवासी और मिथिला-नरेश महाराज नरेन्द्रसिंह (सन् १७४४-६१ ई०) के दरबारी-कवि थे। महाराज नरेन्द्रसिंह ने बिहार के सूबेदार राजा रामनारायण की सेना के साथ युद्ध कर जो विजय प्राप्त की थी, उसीका वर्णन आपने आल्हा-छन्दो में 'नरेन्द्र-विजय'[5] नामक पुस्तक मे किया है।

---

१. श्रीगुप्तनाथ सिंह (भभुआ, शाहाबाद) से प्राप्त सूचना के आधार पर।

२ इस ग्रंथ की मूलप्रति श्रीमन्नूलाल पुस्तकालय (गया) में सुरक्षित है।

३. 'साहित्य' (वही, जुलाई १९५४ ई०), पृ० ७०।

मूल—

अपने अपने मत लगे, वादि मचावत सोर।
ज्यौं ज्यौं सबई सेइये, एकै नंद किसोर॥ —बिहारी

४ वही, पृ० ७०।

मूल –

हाहा वदन उघारि द्रिग, सफल करै सब कोइ।
रोज सरोजनि के परे, हँसी ससी की होइ॥ —बिहारी

५. यह पुस्तक उसी दरबार के लाल कवि की 'कन्दर्पीघाट' नामक पुस्तक से मिलती-जुलती है।

उदाहरण

एक एक को लियो सलाम, लिये मोजरा एक एक को ।
बाबू मनसी खास दिवान, दखिण बैठे महाराज के ।।
उत्तर ओझा ओ मतिमान, मन्त्र बिचारे राजकाज के ।
पच्छिम सभै सिपाही लोग, खास पास में बकशी बैठे ।।
ताके पीछे खाश खवाश, ठाढर है सभ अदब साथ सें ।।
बैठे सभके बिचमें आए महाराज नर ईन्द्र बहादुर,
ताके सोभा कौन बखान, जैसे तारन में शशि पूरन ।।
पण्डित पञ्चक करै विचार, चारो वेद पढ़े वैदिक सभ ।।
करे योतषी लगन विचार, कहूँ आगमी मंत्र विचारे ।।
बन्दी विरद सुनावे ठाढ, कहूँ कवीश्वर रचे कहाखा ।।
सर्वजान मन करै विचार, बात सुनावे तीन काल के ।।
करै कोप साहित्य विचार, कहूँ मोलना बैत सुनावै ।।
कहूँ फारसी होत बखान, बैठे मनसी देश देश के ।।
दही बल्लभी लावे द्वार, लिए गागरी नागरि गावे ।।
राज सभा बैठे चहु ओर, लिये ढाल तलवार हाथ मे ।।
राउत घर के जो रजपूत, सभे सपूता निज माता के ।।
जाके लखि डरपे सुर राज, एसो सिपाही मिथिलापति के ।।
बैश बुनेला और चनेल, खडे बघेला खड्ग हाथ से ।।
सेना है चौभान विशेष, सब्बर सेना महाराज के ।।[1]

※

उदयप्रकाशसिंह

आप गगातटस्थ बक्सर (शाहाबाद) के महाराज गोपालशरणसिंह के योग्य पुत्र थे ।[2] आपने गोस्वामी तुलसीदास की 'विनय-पत्रिका' पर एक टीका लिखी थी, जिसकी बडी प्रशसा हुई । आपकी रचना का कोई उदाहरण नही मिला ।

※

---

१. नरेन्द्र-विजय (प० महेश झा, प्रथम स, १९२१ ई०), पृ० ३-४ ।
२. बिहार-दर्पण (वही), पृ० १९७ ।

उमानाथ

आपका निवास-स्थान दरभंगा जिले का भौडागढ़ी ग्राम था। पीछे आप 'माडर' (दरभंगा) और फिर वहाँ से हरिपुर (दरभंगा) जाकर बस गये।[१] आपके पिता का नाम वालकृष्ण झा था। आप मिथिला-नरेश राघवसिंह के फौजी सरदार (बख्शी) थे। इसी कारण आज भी आपके वंशज 'बख्शी' कहलाते हैं। आप राजा राघवसिंह से आरम्भ कर विष्णुसिंह, नरेन्द्रसिंह और प्रतापसिंह के समय तक उस दरबार मे रहे।[२] आपकी लिखी भक्तिविषयक कविताएँ मिलती हैं, जो भक्तों में बहुत प्रचलित हैं।

उदाहरण

हर हर बम्भोला बम्भोला
बाघछाल रुद्रमाल विराजै हाथ भस्म की गोला ॥ध्रु०॥
गिरिजापति की करँहि आरती फणि मणिदीप जरैया।
गावै योगिनी सङ्ग सभै मिलि नाचै ताल लगैया ॥१॥ हर हर०।
बाजत घण्टा ढोल तमूरा भेरी औ हरबीना।
शंख महाधुनि होत परस्पर कौतुक आरति कीना ॥२॥ हर हर०।
भूत प्रेत मिलि करत कुतूहल करताली गहिथैया।
सखासहित शमशान विराजै शङ्कर ताल लगैया ॥३॥ हर हर० ॥
उमानाथ करजोड़ि विनति करु, महादेव गुण गैआ।
जन्म जन्म के पाप हरहु मोर, चारि पदारथ पैया ॥४॥ हर हर०।[३]

❋

ऋतुराज कवि

आप सुखपुरा परसरमा (सहरसा)-निवासी और वर्त्तमान जगदीश कवि के पितामह कृष्णकवि के चचेरे भाई थे।[४] आपका जन्म सन् १७८८ ई० के लगभग हुआ था।

व्रजभाषा मे रचित आपकी कुछ स्फुट रचनाएँ मिलती हैं।

उदाहरण

नर जन्म सिराना राम बिना।
भव जल नदी भयावन गहरी, जल है अगम अथाह।
फुटी नाव टूटी करुआरा, ता बिच कुटिल मलाह।
ना कोइ अपना बिराना राम बिना ॥
ये बजार गुलजार लगी है, ता बिच करो बेपारा।
सुघर होहु हरि नाम बनीजो, उतरो भवजाल पारा।
काहे को मन घबराना राम बिना।

---

१. मिथिलाभाषामय इतिहास (वही), पृ० २४७।

२. महाराज राघवसिंह का राज्यारोहण-काल १७०४ ई० और महाराज प्रतापसिंह का राज्यावसान-काल १७७५ ई० था।

३. मिथिलाभाषामय इतिहास (वही), पृ० १७५-१७६।

४. श्रीजगदीश कवि (वही) द्वारा प्राप्त सूचना के आधार पर।

नामदेव, प्रह्लाद, सुदामा तर्‌यो अजामिल राय।
रहा एक रितुराज महा जड़ लीजै बाँह लगाय।
विनती सुनौ दीउ काना राम बिना। नर जन्म० ॥[1]

❋

कमलनयन

आप दरभगा जिले के सरिसब ग्राम निवासी थे।[2] आपके पिता प० मनोहरमिश्र सुप्रसिद्ध विद्वान् म० म० पं० शंकरमिश्र के वंशज थे। मैथिली मे आपकी कुछ स्फुट रचनाएँ मिलती हैं।

उदाहरण

(१)

तहिश्रा देखल हम श्रोरे जे धनि। भूतल तलित लता सनि।
से आब दिन दिन श्रोरे तोहँ बिनु। भेलि जेहेन से पुछि जनु ॥
मनमथ विषधरेँ श्रोरे डाँसलि। नयन-नीरेँ जनि भासलि ॥
अमिश्र अधर रस श्रोरे पीउति। तैहि जीउति तेँ जीउति ॥
'कमलनयन' भन विदमति। रस बुझु चम्पावति पति ॥[3]

(२)

भेल भङ्गुर मञ्जरीभर चूश्र चारुहु दीस।
जनि मनोहर मधुरि मधुवन तिलक मञ्जु शिरीस ॥
कुसुमशर जयहेतु उपवन नव नगेसर भास।
अति सुगन्ध लवङ्ग पङ्कज मालती परगास ॥
समय रसमय भेल असमय चलल उड़ि अकास।
अवश उपगत भेल मधुकर पारिजातक पास ॥
आक पसरल भेल परिमल रहल लोभेँ लोभाए।
कलपतरु कों ई उचित नहि भमर भूखल जाए ॥
'कमलनयन' विचारि निश्र हिश्र बुझथि रस रसमन्त।
नृपति पृथ्वीशयन रुकुमावति कलामय कन्त ॥[4]

❋

---

१. ...जगदीश कवि (वही) द्वारा प्राप्त।
२. मैथिली-गीत-रत्नावली (वही), पृ० ७५।
३. वही, पद सं० ३३, पृ० १८।
४ वही, पद नं० ३४, पृ० १६।

(शेख) किफायत

आपका निवास-स्थान पूर्णिया के पूरब दवेल परगने का 'दुमका' नामक स्थान था।[१] आपकी गणना विहार के प्रसिद्ध सूफी-कवियो में होती है। आप शाहजहाँ (सन् १६२७-५८ ई०) के पुत्र और बगाल के दीवान शाहशुजा के समकालीन थे। आपके पिता का नाम शेख मुहम्मद था। मुहम्मद आजम आपके पीर थे और गुरु थे मौलवी मुहम्मद। लगभग पच्चीस वर्ष की अवस्था में आपका परिचय नवाब सैफखाँ के मुसाहब शेख मुहम्मद शमी नामक विद्वान् से हुआ। उनसे और नाजिरपुरवासी हजरत मियाँ की प्रेरणा से आपने 'विद्याधर',[२] नामक एक प्रेम-कथा की रचना ११३६ ई० मे पुस्तक-रूप मे की थी। इसकी मूलकथा एक गायक के मुख से सुनी लोक-कथा पर आश्रित है। इसके अतिरिक्त इसमे सूफी-कवियो की परम्परा का पालन करते हुए यत्र-तत्र सूफी-मत के दार्शनिक सिद्धान्तो का प्रतिपादन तथा प्राग्भावी सूफी-प्रेमाख्यानो का भी उल्लेख मिलता है। पूर्णिया के कई इलाको मे इसका आज भी बहुत अधिक आदर है। इन इलाको में सभी वर्ग के लोग एक विशेष शैली से इसे गाकर प्रसन्न होते है।

उदाहरण

(१)

प्रथमहिं सुमिरौं नाम विधाता। जोविधि विधि किन्ह सकल रंगराता॥
सात अकास किन्ह मैं गुनी। सरंग पताल रचै बिनु थुनी॥
सातो दीप किन्ह गम्भीरा। सात समुद्र किन्ह निरनीरा॥
अंडज, पिडज, अंकुरज किन्हा। ओ उखमज पुनि पैदा किन्हा॥
जो चरचै पावे पुनि सोई। अलख रूप लखि पारे न कोई॥
सरवन नहीं सुने चहुँ बाता। लोचन नाहि देखे सब गाता॥
हृदय माहि बुझे मन ज्ञाना। कमल कली मँह भँवर छिपाना॥[३]

(२)

कमल फूल अस कैना पाई। रूपमान कर बात सुनाई॥
मुनी के रूप भई रग राती। उपजा बिरह बेथा सब गाती॥
रूप तोहार सुना जब लोना। अस भई कोई डारे जस टोना॥

---

१. 'पुरनिआ सो पूरव निअरे एक गाँवा। परगने दवेल दुमका नाँवा।'
—'साहित्य' (वही, अक्टूबर १६५८ ई०), पृ० ४।

२. इस पुस्तक की रचना दोहा-चौपाई में हुई है। प्राय: सात चौपाइयों के बाद दोहा दिया गया है। यह उर्दू-लिपि में प्रकाशित भी हो चुकी है। इसकी एक दुर्लभ प्रति किशनगंज (पूर्णिया) के वकील श्रीमुहम्मद सुलेमान साहब 'सुलेमान' की कृपा से प्राप्त हुई है। कैथी-लिपि में लिखित इसकी एक हस्तलिखित-प्रति भी पटना-विश्वविद्यालय के विश्रुत शोधकर्त्ता तथा इतिहास-प्राध्यापक श्रीहसन अस्करी साहब से मिली है। 'विद्याधर' पर एक महत्त्वपूर्ण परिचयात्मक लेख उर्दू की 'इनसान' नामक पत्रिका के 'पूर्णिया-विशेषांक' में छपा था, जो द्रष्टव्य है।

३. परिषद् के हस्तलिखितग्रंथ-अनुसंधान-विभाग में संगृहीत पोथी 'विद्याधर' की प्रतिलिपि से।

केहि विधि पार गेआ वही सोई । जौ लगि ई अमिल बधे नहीं कोई ।।
आदर मान बहुत मोर कीन्हा । ओ लोचन पंडित संग कीन्हा ॥
जब लोचन भौ साथ हमारा । तब देखल हम दरस तोहारा ।।
अब लोचन जाने और तुह राजा । अब है नहीं मोर कुछ काजा ।।[१]

❀

कुंजनदास

आपका नाम अखौरी कुंजविहारीलाल था। पीछे कुछ दिनो के बाद कुंजविहारीदास कहलाने लगे। कविता मे आप अपना नाम 'कुंजन' या 'कुजनदास' ही लिखते थे।

आपका निवास-स्थान शाहाबाद जिले के 'पँवार' परगने का 'कोरी' ग्राम था।[२] आपके पिता का नाम अखौरी रासविहारीलाल था। आप शिव के अनन्य उपासक थे। आपने 'शिवपुराण' के आधार पर दोहा-चौपाइयो, सोरठा और विविध छदो में 'शिवपुराण-रत्न'[३] नामक एक बृहत्काय काव्य-ग्रंथ की रचना की थी। इसके अध्ययन से इस पर 'रामचरित-मानस' का प्रभाव स्पष्ट हो जाता है। इस ग्रंथ के अन्त में दिये गये दो दोहो से जान पडता है कि आप गा-गाकर इस ग्रंथ की रचना करते जाते थे और आपके ही नाम के आपके मित्र, जो मुँगेर जिले के 'रजौरा' ग्राम के निवासी और परम प्रवीण प्रवन्ध-लेखक थे, उसे लिखते जाते थे।

उदाहरण

(१)

जै जै जग माता पंकज गाता लाजत दामिनि जोती ।
छवि सुभग विराजे रति मन लाजे भूषण माणिक मोती ।।१।।
जै शम्भू प्यारी महिमा तुम्हारी श्रुति मुनि पार न पावे ।
निशि वासर धावहिं अंत न पावहिं नेति निरंतर गावे ।।२।।
तन श्याम सुहावन त्रिभुअन पावन भूषण लर लट कारी ।
लछमी गुण खानी रती सयानी उपजहिं अंश तुम्हारी ॥३।।
मैं अति अघ मूला श्रुति प्रतिकूला बिनवौं सीस नवाई ।
छमि अवगुण मोरी अधिक निहोरी हेरहु नैन उठाई ॥४।।
श्रुति कुंडल हलके मणीमय झलके ललके रति उर केरी ।
दुति अंग जो दमके छविगण झमके मोहे युवति घनेरी ।।५।।

---

१. परिषद् के हस्तलिखितग्रंथ-अनुसधान-विभाग में सगृहीत पोथी 'विद्याधर' की प्रतिलिपि से।

२. 'साहित्य' (वही, अप्रैल १९५२ ई०), पृ० ३५।

३. इस ग्रंथ की एक मुद्रित प्रति बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्, पटना के हस्तलिखितग्रंथ-अनुसधान-विभाग में सुरक्षित है। इसके आरम्भ के ४ पृष्ठ और अंत में ९७२ के बाद के कुछ पृष्ठ नहीं हैं, जिससे ग्रंथ के विषय में अनेक आवश्यक बातों का पता नहीं चलता। ग्रंथ में मुँगेर जिले का उल्लेख होने से ज्ञात होता है कि इसकी रचना सन् १८३२ ई० के बाद हुई थी; क्योंकि मुँगेर जिले का निर्माण सन् १८३२ ई० में ही हुआ था।

जै त्र्यम्बक परदनि शंकट गर्दनि मर्दनि विपति बरूथा।
घन केसरि गर्जनि विघिनि बिवर्जनि सिर्जनि त्रिभुअन रुथा ॥६॥
यह सिव जो तड़के अरि उर करके धड़के असुरनि काया।
भव वारिधि डूबत जेहि मन ऊबत उबरे तुम्हरहिं दाया ॥७॥
यह चरण तुम्हारी नखद्युतिकारी जन उर करत अंजोरा।
अब यह वर मागों चरणन लागों आस पुरावहु मोरा ॥८॥
कहे विधि कर जोरी मैं मति भोरी बिमल सुभग वर दीजै।
यह कुंज बिहारी शरण तुम्हारो प्रगट दया अब कीजै ॥९॥[1]

(२)

जै जै कृपाल दयाल शंकर हरण भाव दुख दारुणं।
महिमां उदार अपार कहे श्रुति लसत पद कजारुणं ॥
जो शरण आवहिं बिभव पावहिं बिरद बर मुनि गावहीं।
सब आस तजि गहे चरण पकज बेगि तोहि सो पावहीं ॥
तुम शरण पालक सोच घालक दीन बंधु सो नाम है।
भक्त रंजन विपति गंजन सिद्धप्रद सुख धाम है ॥
प्रभु चरण जब लो न आन हम सपनहुं न सुख उर पायऊ।
अब दास कुंजन शरण आये सकल सिद्ध सोहायऊ ॥[2]

❀

कुलपति

आप दरभगा जिले के नवटोल-सरिसब ग्राम-निवासी[3] और वर्त्तमान सुकवि प्रो० ईशनाथ झा (दरभंगा) के वृद्ध-प्रपितामह थे। आपने मैथिली में काव्य-रचना की थी, जिनमें से कुछ यत्र-तत्र प्राप्त होती है।

उदाहरण

जनु होअ मास अखाढ हे सखि! बाढ मनमथ-आधि ओ।
चीर चानन चन्द्रमारुचि, चारिगुण बढ धाधि ओ।
आरे-धाधिन उपशम होअ मोर। पिअ गुण बिसारि बैसल मोर ॥
मास साओन अति सोहाओन, फुल्ल बेलि चमेलि ओ।
रभस सौरभ भमर भमि भमि, करए मधु रस केलि ओ।
आरे-केलि करए अलि मनदए, अधिक विरह मोहि उपजए।

---

१. शिवपुराण-रत्न (पूर्वार्द्ध, खण्ड २) पृ० ७६-७७।
२. वही (उत्तरार्द्ध, खण्ड ११), पृ० ८९६।
३. मैथिली-गीत-रत्नावली (वही), पृ० ७७।

उदाहरण

सुनह वचन सखि मनवए, वहए चाहए तनु आज।
पवन परस तरसए जिब, मदन वहन सरसाज।
कोन परि उबरब हरि हरि, धैरज धरि धरि राख।
छन छन मुरुछि मुरुछि खसु, सखि न जिउति सखि भाख।
कि करब सुनि सुनि पिक रब, निक रब मोहि न सोहाए।
हहरि हहरि हरि हरि कए, निरदय अजहु न आए।
सखि सेज सिजह नलिनि दल, तैहुँ तह होअ अबसान।
बन कुहकए घन सिखिगन, सुनि सुनि दह दुनु कान।
धरम करम बिछुडल मोर, पुरुब कएल कत पाप।
धैरज धएरहु 'केसब', रस बुझ नृपति प्रताप।[१]

❋

(अखौरी) गणेशप्रसाद

आपका जन्म सन् १७६८ ई० के लगभग, धमार-ग्राम (शाहाबाद) मे हुआ था।[२] आप वर्त्तमान अखौरी वासुदेव नारायणजी के पितामह के ज्येष्ठ भ्राता थे। आपने सन् १८३३ ई० से सरकारी नौकरी आरम्भ की थी। सन् १८४८ ई० में आपने पदत्याग कर वैराग्य ग्रहण कर लिया। आप फारसी के बहुत बडे विद्वान् थे। आपने 'भगवद्‌गीता' का उर्दू मे अनुवाद किया था और हिंदी मे उसकी टीका[३] लिखी थी।

आपकी रचना के उदाहरण नही मिले।

❋

गुणानन्द

'करण जयानन्द'[४] के पुत्र होने के कारण आपका निवास-स्थान दरभगा जिले का भगीरथपुर-ग्राम सिद्ध होता है। मैथिली मे आपके कुछ पद यत्र-तत्र मिलते है।

उदाहरण

कमलिनि मन गुनि करिअ विवेक॥
तुअ गुण ऋतुपति भमर अतिथि भेल, लुबुधल कुसुम अनेक।
प्रेमक पथिक विमुख चल जाएत, अपयश होत तुअ पास।
दुरयशेँ सगर नगर परिपाटब, आन करत उपहास॥

---

१. Journal of the Asiatic Society of Bengal (Vol. 53, Part I, 1884, Spl. No), P. 89.

२. अखौरी वासुदेव नारायण, (धमार, शाहाबाद-निवासी, 'रूपकला-कुटीर,' मीठापुर, पटना), द्वारा प्रेषित सूचना के आधार पर।

३. इस पुस्तक को आरा के बाबू हरवंश सहाय वकील ने छपवाकर प्रकाशित किया था। आजकल वह अप्राप्य है।

४. इनका परिचय इसी पुस्तक में यथास्थान मुद्रित है।

सब खन सरवस न रह अपन वश, एहि महि के नहि जान।
तैँ अनुमाने पथिक अलि राखिअ, मालती प्रान समान॥
भनथि जयानन्द-तनय 'गुणानन्द', मन मानिअ परतीति।
आहुति पाए लाजे नहि राखिअ, करिअ सुजन सँ प्रीति॥[1]

❀

गुमानी तिवारी[2]

आपका निवास-स्थान पटना था।[3] हिन्दी मे आपके द्वारा रचित दो पुस्तको का पता लगता है—'कृष्णचन्द्रिका' और 'छंदाटवी'। यो खड़ीवोली मे रचित आपके कुछ स्फुट पद भी मिलते है।

उदाहरण

चंचल चलत चारु रतनारे ललित दृगन की आभा;
मृग खंजन गंजन मन रंजन कहैं कंज की का भा।
अलकैं छूटि रही मुख ऊपर मंजु मेच घुँघरारी;
कल कपोल बोलनि मृदु खोलनि भृकुटी कुटिल पियारी।[4]

❀

गोकुलानन्द

आप 'उजान' या 'सरिसव'[5] (दरभगा) ग्राम के निवासी[6] और मिथिला के राजा माधवसिंह (सन् १७७६-१८०८ ई०) के समकालीन थे। आपका लिखा सात-अको का एक नाटक 'मान-चरित' मिलता है। इसमें मैथिली के साथ व्रजभाषा के भी पद आये है।

उदाहरण

जय जय भारति भगवति देवि। छ (क) ने मुदित रहु तुअ पद सेवि।
चन्द्रधवल रुचि देह विका(स)। श्वेत कमल पर करहु निवास॥
वीणारव रसिता वरनारि। सवत मगन गिरिराज कुमारि॥
जन्म मरण नहि तोहि भवानि। त्रिदशदास तव त्रिगुणा जानि॥
अरुण अधर बन्धूक समान। तीनि नयन विद्या वरदान॥
गोकुल तुअ सुत सविनय मान। देहु परम पद दायक जान॥[7]

❀

---

१. मैथिली-गीत-रत्नावली (वही), पद स० ३०, पृ० १७।

२. मिश्रबन्धुओं ने अपने 'मिश्रबन्धु-विनोद' (वही, द्वितीय-भाग, द्वितीय सं०, १९८४ वि०) में जिस 'गुमान तिवारी' का नामोल्लेख किया है, वे वस्तुतः आपसे भिन्न नहीं जान पड़ते। देखिए—वही, पृ० ८२०।

३. मिश्रबन्धु-विनोद (वही, तृतीय-भाग, द्वितीय स०, १९८५ वि०), पृ० ६६७।

४. वही (द्वितीय स०, द्वितीय-भाग, १९८४ वि०), पृ० ८२०।

५. ये दोनों गाँव आस-पास ही हैं।

६. A History of Maithili Literature (वही), P. 328.

७. वही, पृ० ३२८-३२९।

गोपाल

आप दरभंगा जिले के बेहटा ग्राम-निवासी[1] और मिथिला के महराज नरेन्द्रसिंह (सन् १७४४-६१ ई०) के दरबारी कवि थे। आपके पिता का नाम प० लक्ष्मण झा था। आप सस्कृत के विद्वान् थे। हिन्दी में आपकी रची तीन पुस्तके मिलती है—'काव्यमजरी', 'काव्य-प्रदीप' तथा 'श्रीमत्खण्डवलाकुल-विनोद'[2]। प्रथम दो पुस्तके छद एवं नायिका-भेद की है। तीसरी में मिथिला के खडवला-वश के नरेशो की वशावली तीन-सर्गो में काव्यबद्ध है। आपकी शृ गार और वीर-रस की कविताएँ अच्छी है।

उदाहरण

(१)

महराज शुभङ्कर ठाकुर जू मिथिला तजि गौ सुर धाम जवै।
चढि दिव्य विमान निशान लिये सुर सुन्दरि गान मचाइ तवै।।
शिव ब्रह्म शची पति रारि करै हमरे हमरे पुरवास पवै।
हरि दूत पठाय मङ्गाय लिये तव धाम दिये निज रूप सवै।।[3]

(२)

साजि सिंगार सुहागिनी सैन चली रचि सैन सुमैन लजाहीं।
स्याम लिए करवाल विसाल लखै ततकाल न जात है पाहीं।
ज्यौं मुसुकाए कै लाय रही अति प्रौढ महारथ मै गहि बाहीं।
नाह को देखि नवोढ तिया जिमि गेह गई रति चाहत नाहीं।[4]

❋

गोपालशरणसिंह[5]

आप गगातटस्थ बक्सर (शाहाबाद) के राजा थे।[6] आपके पूर्वजो ने उज्जैन (मालवा) से शाहावाद मे आकर जगदीशपुर, बक्सर और डुमराँव मे राज्य स्थापित किये थे। गोस्वामी तुलसीदासजी की सुप्रसिद्ध 'विनय-पत्रिका' के टीकाकार उदयप्रकाशसिह आपके ही पुत्र थे।

आप एक प्रसिद्ध विद्वान् थे। प० शिवलाल पाठक नामक एक विद्वान् की सहायता से आपने 'रामचरित-मानस' की टीका लिखी थी, जिसका नाम आपने 'मानस-मुक्तावली' रखा था। कहते है, पच्चीस रुपये दक्षिणा के साथ आपने इसकी ५०० प्रतियाँ सतो के बीच मे बँटवा दी थी। आपकी उक्त टीका अब अप्राप्य है।

❋

---

१. जरइल तप्पा के विषै, नाम बेहटा ग्राम। सरिसव छाजन मूल हैं, कविता वसु तेहि ठाम।।
भूसुर वश पवित्र मैं, जनमें परम उदार। धर्म्मनिरत सम्मत सकल, सदा शास्त्र होसियार।।
—श्रीमत्खण्डवलाकुल-विनोद (कवि प० गोपाल झा, १६१८ ई०), पृ० १-२।

२. इसी पुस्तक के आरम्भ में आपने अपना वंश-परिचय देते हुए अपनी रचनाओं की भी चर्चा की है।

३. श्रीमत्खण्डवलाकुल-विनोद (वही, प्रथम सर्ग), पृ० २३-२४।

४. वही (द्वितीय सर्ग), पृ० ६७।

५. विस्तृत परिचय के लिए देखिए वा० रामदीनसिंह-कृत 'विहार-दर्पण'।

६. विहार-दर्पण (वही), पृ० १६७।

गोपीचन्द

आपका निवास स्थान वर्त्तमान मगही-क्षेत्र मे कही था[१]। आपके मगही मे रचना करने का उल्लेख मिलता है। आपकी रचना के उदाहरण नही मिले।

गोपीनाथ

आप सहरसा जिले के 'शाहआलम नगर' नामक स्थान के निवासी थे।[२] आपका जन्म चैत्रशुक्ल ९, १८४५ वि० मे और मृत्यु वैशाख शुक्ल ११, १९४४ वि० मे हुई। हिंदी मे आपने दो पुस्तके लिखी थी—'जयमगलाप्रकाश' और 'गोपीनाथप्रकाश'। आपकी रचना के भी उदाहरण नही मिले।

गौरीपति

आपकी रचना मे आपका नाम कही-कही केवल 'गौरी' मिलता है। आप दरभगा जिले के निवासी और वर्त्तमान मैथिल-विद्वान् कविशेखर प० बदरीनाथ झा के अतिवृद्ध-प्रपितामह थे।

आपने मैथिली मे पदो की रचना की थी, जिनमे कुछ यत्र-तत्र उपलब्ध है।

उदाहरण

चललि मधुरपुर साजि दधि बेचन बाला।
यमुना निकट तट जाए रे रोकल नन्दलाला॥
मुख अन्चल पट ओट रे दए बिहुँसलि बामा।
पुलक पुरल तन नेह रे देखि सुन्दर श्यामा॥
मुरली अधर बिराज रे सुन्दर सुख रासी।
मन मोर हरल गोपाल रे गोकुल केर बासी॥
करब कओन परकार रे सोचए ब्रजबाला।
पड़ल कुंज वन साँझ रे बैरी भेल काला॥
जाए देब उपराग रे यशोमति महरानी।
हरि हटलो नहि मान रे लुट माल बिरानी॥
'गौरीपति' कवि भान रे सुनु गोप कुमारी।
सब तेजि भजिअ मुरारि रे नोखे गिरिधारी॥[४]

---

१. (क) मिश्रबन्धु-विनोद (वही, तृतीय भाग, द्वितीय स०, १९८५ वि०), पृ० ९९८।
(ख) डॉ० ग्रियर्सन ने भी अपने Linguistic Survey of India में आपकी चर्चा की है।

२. परिषद् मे प्राप्त अज्ञात व्यक्ति की सूचना के आधार पर।

३. मैथिली-गीत-रत्नावली (वही), पृ० ८२।

४. वही, पद स० ७०, पृ० ४०-४१।

चन्दनराम[१]

आपका निवास-स्थान शाहाबाद जिले का 'अम्वा' नामक ग्राम था[२]। आप कविराज साहबराम के सुपुत्र थे। आपका जन्म १७६६ वि० मे चैत्र शुक्ल, रामनवमी को हुआ था। आप वडे ही प्रतिभाशाली और परिश्रमी छात्र थे। अतएव थोडे ही दिनो के अध्ययन से आप अनेक विषयो के अच्छे विद्वान् हो गये। आयुर्वेद के अच्छे ज्ञाता होने से आपकी गणना प्रसिद्ध वैद्यो मे होती थी। १६ वर्ष की अवस्था मे ही आपको गृहस्थी सौपकर आपके पिताजी काशीवास करने चले गये। उनके जीवन-काल तक आप बराबर काशी जाकर उनकी सेवा-शुश्रूषा करते रहे। उनकी मृत्यु के बाद आपने देशाटन कर अनेक राज-दरबारो से सम्बन्ध स्थापित किया। हिन्दी के कवि कालिदास के पुत्र कवीन्द्र उदयनारायण त्रिवेदी के द्वारा आपका परिचय अमेठी (अवध) के राजा से हुआ। कदाचित् इसी राज-दरबार से आपको 'कविराज' की उपाधि मिली थी। राज-दरबारो से आपको समय-समय पर हाथी-घोडे भी मिलते रहे। हिन्दी के तत्कालीन कवि पद्माकर, बेनी, दत्त, भजन, खुमान, भानु आदि से भी आपका बडा घनिष्ठ सम्पर्क रहा। जीवन के अतिम दिनो मे आप घर पर ही एक पाठशाला स्थापित कर विद्यादान करने लगे। इस पाठशाला के लिए आपको बिहार के वक्सर, डुमराँव, जगदीशपुर तथा उत्तरप्रदेश के हरदी, मझौली, बलरामपुर, विजयपुर आदि राज्यो से आपको दो-दो सौ रुपये मासिक की आर्थिक सहायता मिलती रही। १८७० वि० मे आप परलोक-वासी हुए।

आप एक सफल कवि थे। आपके पिता ही आपके काव्य-गुरु थे। एक प्रकार से आपके वश की जीविका-वृत्ति ही काव्य-रचना थी। सर्वप्रथम आपने 'अमात्रिक हरस्तोत्र' नामक एक छोटी-सी पुस्तिका की रचना की थी।[३] इसके पश्चात् नन्ददास-कृत 'नाममाला' तथा 'अनेकार्थ' से प्रेरणा पाकर आपने 'नामार्णव'[४] और 'अनेकार्थ-ध्वनि-मजरी'[५] नामक ग्रंथो की रचना की थी।[६] इन दोनो ग्रथो की रचना १८६६ वि० (१८०६ ई०) मे हुई थी।

उदाहरण

(१)

सूर्य्य शुक्र केहरि किरिणि, इन्द्र हरित हरि भेक।
हय कपि यम विधु विष्णु हरि, जल अलि पवन अनेक॥

---

१. विस्तृत-परिचय के लिए देखिए, बा० रामदीनसिंह-कृत 'विहार-दर्पण'। इसके अतिरिक्त, आरा से प्रकाशित 'भोजपुरी' पत्रिका (जनवरी १९५६ ई०) में श्रीउदयशकर शास्त्री ने भी आपका जीवन-परिचय और आपकी रचनाओं का उदाहरण प्रकाशित किया था।

२. विहार-दर्पण (वही), पृ० १७२।

३. इसमें मात्रा-रहित शब्दों में शिवजी की स्तुतियाँ सगृहीत हैं।

४ इसमें दोहा-सोरठा छन्दों में एक शब्द के विभिन्न पर्यायवाची शब्द दिये गये हैं। इसके अतिरिक्त आपने इसमें अपना परिचय भी लिखा है।

५. इसमें एक शब्द के विभिन्न अर्थ दिये गये हैं। साथ ही इसमें भी आपने अपना परिचय दिया है।

६. ये दोनों ग्रन्थ मुद्रित हुए थे, किन्तु अब ये प्राप्य नहीं हैं।

श्रवण कमल घन शर धनुष, हरि कुरंग नभ काम।
पावक पय गिरि गज कनक, भिरु शुक अहि हरि नाम ॥[१]

(२)

पावक पंकज पीक पट, घन धनु घन घट चीर।
कनक कठिन कुच कीर करि, नभ नग नव निसि नीर ॥
दादुर द्विज दग दीप द्युति, बिधु विष बीना बच्छ।
मदन मयुर मृदु मृग मधुप, गो हय हरि धनु श्वच्छ ॥[२]

❋

चन्द्रकवि

आप मिथिला के राजा नरेन्द्रसिंह (सन् १७४५-६० ई०) के दरबारी कवि थे।[३] आपने विहार के नवाव के साथ हुए राजा नरेन्द्रसिंह के युद्ध का वर्णन अपनी कविता मे किया था।

उदाहरण

ऐसे महाजोर घोर गङ्ग सुलतानी बीच झूमत बबर जङ्ग सङ्गर करीन्द्र हैं।
औलिया नवाव नामवार पूछैं बार-बार ये दोऊ कौन अरिवानरपरीन्द्र हैं॥
शाहेब सुजान जयनुद्दीन अहमदखाँन सामने ह्वै अर्ज करै कहै 'कवि चन्द्र' हैं।
ये तो दोनवार केशोसाह के अजीतशाह, आगे राघोसिंह जी के नबल नरेन्द्र हैं॥[४]

❋

चन्द्रमौलिमिश्र

आप कविता मे अपना नाम 'मौलि' लिखा करते थे।

आप गया के निवासी थे।[५] आपके पूर्वज काम्पिल्य (उत्तरप्रदेश) से गया आये थे। आपके पिता का नाम प० वशीधरमिश्र और पितामह का नाम प० लक्ष्मीपतिमिश्र था। आप भोजपुर के जमीदार प्रवलशाह[६] के पौत्र उदवन्तशाह के दरबार में रहते थे।

आपने अपने आश्रयदाता के आदेश पर 'उदवन्त-प्रकाश' नामक नायिकाभेद-सम्बन्धी एक सुन्दर ग्र थ की रचना १७५२ ई० (१८०६ वि०) मे की थी। इस ग्र थ मे भोजपुर-राज-वशावली के साथ कविवश-वर्णन भी आया है।

---

१. विहार-दर्पण (वही), पृ० १७८।
२. वही, पृ० १७८-७६।
३. मिथिलाभाषामय-इतिहास (वही), पृ० १८३-८४।
४. वही, पृ० १८४-८५।
५. परिषद् के हस्तलिखित ग्र'थ-अनुसधान-विभाग में सुरक्षित 'उदवन्त-प्रकाश' की मूलप्रति की अविकल प्रतिलिपि के आधार पर।
६. इनका परिचय इसी पुस्तक में यथास्थान मुद्रित है।

उदाहरण

(१)

बोले मनोहर मोर जहाँ, अलि कूजै कपोत करै पिक गानन।
मौलि कहै जहाँ आपुहि तौ, पिय कंठ लगै तरुनी तजि मानन॥
जाति जहाँ तू न खेद करै, सुख रासि तहाँ हूँ करि चतुरानन।
सीत समीर कलिन्दी के तीर, करील के कुन्ज कदम्ब के कानन॥[१]

(२)

काम कली सी लली वृषभान की, संग अली के हुती जहाँ बैसी।
आये तहाँ बनि नंद कुमार, तिन्हैं लखि मार की ज्योति अनैसी॥
मोलि धरे ब्रजमोलि सो मोलि, लवंग की मजरी मंजुल तैसी।
देखत राधिका के मुखचंद, गहि दुति है दिन चंद की तैसी॥[२]

❀

चक्रपाणि[३]

आप मिथिला-निवासी[४] और मिथिला के महाराज राघवसिंह के आश्रित कवि थे। वर्त्तमान नवानी ग्राम के प० रत्नपाणि झा आपही के वशज थे। आपने मैथिली मे पदो की रचना की था, जिनमे कुछ उपलब्ध है।

उदाहरण

(१)

आज सपन हम देखल सजनी गे, हरि आएल मोर गेह॥
देखि देखि नयन जुडाएल सजनी गे, पुलके पुरल मोर देह॥
लहु लहु कर-पकज धए सजनी गे, हृदय हमर हरि लेल॥
हम धनि किछुओ ना गुनल सजनी गे, हँसि परिरम्भण देल॥
यतने रतन धन पाओल सजनी गे, मोहि भेल हरिक समाज॥
कतेक रभस हम कएलहुँ सजनी गे, सुखेँ विसरल सब लाज॥
राघव नृप रसविन्दक सजनी गे, सकल सुरत-सुख भेल॥
'चक्रपाणि' कवि गाओल सजनी गे, विपम विरह दुख गेल॥[५]

---

१ परिषद् के हस्तलिखित ग्र थ-अनुसधान-विभाग में सुरक्षित 'उदवन्त-प्रकाश' की मूलप्रति की अविकल प्रतिलिपि से।

२ वही।

३ वस्तुत विहार में इस नाम के दो साहित्यकार हो गये हैं। एक 'प्रश्नतत्त्व' के लेखक और दूसरे 'तिथि-प्रकाश-व्याख्या' के लेखक। यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता कि जिस कवि का परिचय यहा दिया जा रहा है, उसने किस ग्र थ की रचना की थी।

४ मिश्रबन्धु-विनोद (वही, तृतीय भाग, द्वितीय स०, १९८५ वि०), स्पष्ट है कि दूसरे चक्रपाणि का कुछ पता नहीं लगा।

५. मैथिली-गीत-रत्नावली (वही), पद स० ३७, पृ० २०।

(२)

अलक विरचि ललाट शशिमुखि देल सिन्दुर विन्दु रे ।
भान हो जनि राहुतर रवि ताहितर बसु इन्दु रे ।।
भौँह काम कमान जीतल नयन खञ्जन राज रे ।
देखि सुललित नासिका शुक-चञ्चुकाँ होअ लाज रे ।।
अलक तिलक निहारि सुवदनि कएल मधुरिम हास रे ।।
गगन ऊपर चन्द्र-मण्डल चन्द्रिका परगास रे ।।
श्याम अभिनव रोमराजी कनक सुन्दर देह रे ।
काम जनि जय-पत्र पाओल देल विहि मसि-रेह रे ।।
चललि मदजराज-गामिनि साजि सुपहु समीप रे ।
पहिल पास तरास दुरिकए सङ्ग मदन महीप रे ।
'चक्रपाणि' विचारि निज मन ऊह कए किछु गाब रे ।
रमणि राधा रसिक यदुपति विहि मेराओल आए रे ।।[१]

❀

चतुर्भुजमिश्र[२]

आप मिथिला के निवासी थे ।[३] मिश्र-बन्धुओ के अनुसार आपने हिन्दी मे 'भवानी-स्तुति' नामक ग्रंथ की रचना की थी । मैथिली मे आपके कुछ पद भी मिलते है ।

उदाहरण

नव तनु नव अनुराग । माधव । नव परिचय रस जाग ।।
दुहु मन वसु एक काज । माधव । आँतर भए रहु लाज ।।
दिनदिन दुहु-तनु छीन । माधव । एकओ ने अपन अधीन ।।
विनय न एको भाख । माधव । निअ निअ गौरव राख ।।
हृदय धरिअ जत गोए । माधव । नयन बेकत तत होए ।।
चतुर 'चतुरभुज' भान । माधव । प्रेम न होए पुरान ।।[४]

❀

---

१. मैथिली गीत-रत्नावली (वही), पद स० ३८, पृ० २०-२१ ।

२. वस्तुतः इस नाम के चार कवियों का पता मिलता है । इनमें तीन की चर्चा डॉ० जयकान्त मिश्र ने की है । उन्होंने एक को 'साहित्य-विकास' (काव्य-प्रकाश के पंचम-अध्याय की टीका) का रचयिता, दूसरे को 'अद्भुत-सागर' का प्रणेता और तीसरे को 'विद्वमाकर-सहस्रकम्' नामक ग्रथ मे उल्लिखित व्यक्ति बतलाया है ।—A History of Maithili Literature (वही), P. 41.

३. मिश्रबन्धु-विनोद (वही, तृतीय भाग, द्वितीय स०, १९८५ वि०), पृ० ६६६ ।

४. मैथिली-गीत-रत्नावली (वही), पद स० ३५, पृ० १९ ।

चूड़ामणिसिंह

आप हजारीबाग जिले के निवासी थे।[१] आपने कई ग्रंथो की रचना की थी, जिनमे एक 'सुखसागर' का ही पता है। आपको रचनाएँ वाग्विदग्धता और उक्तिवैचित्र्य के लिए प्रसिद्ध है। आपकी रचना का कोई उदाहरण नही मिला।

※

छत्तरबाबा[२]

आप चम्पारन के 'पण्डितपुर' नामक-स्थान के निवासी थे।[३] आपके पिता का नाम शिवसिंह था। आप सात भाई थे।[४] सातो मे आपका स्थान दूसरा था। आप पहले बेतिया-राज के तहसीलदार थे। अपने काम से आप एकबार 'ढेकहा' नामक गाँव में जा रहे थे। उस मार्ग पर 'झखरा' नामक स्थान मे एक बरगद के पेड के नीचे मनसाराम साधु रहते थे। वहाँ आपने घोडे से उतरकर उक्त साधु से उनके शिष्य बनने की इच्छा प्रकट की। इसपर पहले तो उन्होने कहा कि तुम इस पोशाक मे शिष्य नही बन सकते, किन्तु जब आपने अपनी पोशाक उतारकर उसे धूनी मे फेकना चाहा, तब उन्होने आपको अपना शिष्य बना लिया। मनसाराम के अतिरिक्त चूडामनराम (बनवटवा, अरेराज से पश्चिम) भी आपके गुरु कहे जाते है। आपके शिष्यो में प्रमुख थे केशवदास और महावीरदास।

कहते है, श्रीभिनकराम से आपकी बडी घनिष्ठता थी। एकबार वे आपके यहाँ एक महीना ठहरे भी थे। आपकी पूँजी एक हाँडी थी। उसी मे दिन मे स्वय भोजन बनाते और रात मे उसीको तकिया बनाकर सो रहते थे।

आप सरभग-सम्प्रदाय के एक प्रमुख सत थे।[५] कुछ लेखक आपको उक्त सम्प्रदाय का आदिकवि होने का श्रेय देते है।[६]

आपने अपनी रचनाएँ भोजपुरी मे की थी।

---

१. श्रीसूर्यनारायण भडारी (इचाक, हजारीबाग) के द्वारा प्राप्त सूचना के आधार पर।

२. सरभग-सम्प्रदाय की माधोपुर-परम्परा के प्रीतमराम के शिष्य भी एक 'छत्तरराम' हो गये है। वे गोरखपुर के निवासी थे।

३. सन्तमत का सरभग-सम्प्रदाय (डॉ० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री, प्रथम स०, १९५९ ई०), पृ० १६४। पण्डितपुर में आज भी आपकी समाधि वर्त्तमान है।

४. वय क्रम से उनके नाम इस प्रकार थे—तिलकधारीसिंह, छत्तरबाबा, पुरुषोत्तमसिंह, परसरामसिंह, जानकीराम, सियाराम और आत्माराम।

५. आपके अनुयायी पीछे कबीर-पथी हो गये। डॉ० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री ने आपको सूर्यपथी बतलाया है। इसी सिलसिले में शास्त्री ने लिखा है कि आप प्रात सूर्योदय के साथ सूर्यास्त तक सूर्य की ओर दृष्टि किये खडे रहते थे।—सन्तमत का सरभग-सम्प्रदाय (वही), पृ० १५८।

६. भोजपुरी के कवि और काव्य (श्रीदुर्गाशकरप्रसाद सिंह, प्रथम स०, १९५८ ई०, भूमिका), पृ० ४०।

उदाहरण

(१)

देखली में ए सजनिया सइयाँ अनमोल के।
वसो दुअरिया, लागे केवडिया मारे सबद का जोर के।
सून भवन मे पिया निरेखो नयनवा दुनू जोर के।
छत्तर निज पति मिललऽ भर कोर के॥[१]

(२)

तड़ तड़ दामिनी दमके, बिजली झनकोर के,
झर झर झर झर मोती झरे, हीरा लाल बटोर के।
गुरु के चरण रज पकडि सहोर के,
छतर निज पति मिले झकझोर के।[२]

❀

छत्रनाथ[३]

आपकी रचनाएँ 'छत्रनाथ,' 'छत्रपति,' 'नाथ,' कविदत्त', 'कवीश्वर दत्त' आदि नामो से भी मिलती है।

आपके पूर्वज मूलत 'हाटी-उफटी' (दरभगा) नामक स्थान के निवासी थे, पीछे सहरसा जिले के वनगाँव नामक स्थान मे आकर वस गये।[४] आप मिथिला-नरेश महाराज श्रीमाधव-सिंह (सन् १७८५-१८०७ ई०) और लक्ष्मीनाथ गोसाईं के समकालीन थे। आपके पिता का नाम नन्दलाल झा था। आप दो भाई थे। वडे भाई का नाम जीवनाथ झा था। प्रेमनाथ झा नामक आपके एक पुत्र भी थे।

आप एक वडे निर्भीक और प्रतिभाशाली कवि थे। जनश्रुति है कि आप निरक्षर थे और महादेव के वरदान से कवि बने थे। आपकी ख्याति एक आशुकवि के रूप में भी थी। 'द्रौपदी-पुकार' 'हनुमान-रावण-सवाद,' 'वनगाँव-वर्णन' और 'सुदामा-चरित' इन लघु काव्यो के अतिरिक्त कुछ समस्या-पूर्तियाँ, कवित्त, सवैया आदि फुटकल रचनाएँ भी आपके नाम पर मिलती है।[५] इन सभी मे 'सुदामा-चरित' ही आपकी प्रौढतम रचना है। इन रचनाओ की भाषा मैथिली और व्रजभाषा है।

---

१. भोजपुरी के कवि और काव्य (वही), पृ० १२४।

२. सन्तमत का सरभंग-सम्प्रदाय (वही), पृ० ८९। रघुवीरदास (वेलसंड, मुजफ्फरपुर) के पास आपकी रचनाएँ हैं।

३ श्रीकामेश्वर चौधरी (वनगाँव, सहरसा) आपके विषय में विशेष रूप से अध्ययन कर रहे हैं।

४. श्रीचौधरी से प्राप्त सूचना के आधार पर।

५. इस प्रकार की फुटकल रचनाओं का संग्रह आपके वंशज श्रीशुभनारायण झा ने बड़े ही परिश्रम से किया है।

उदाहरण

(१)

जय, देवि, दुर्गे, दनुज गंजनि,
भक्त-जन-भव-भार-भंजनि,
अरुण गति अति नैन खंजनि,
जय निरंजनि हे।

जय, घोर मुख-रद विकट पाँती,
नव-जलद-तन, रुचिर कांती,
मारु कर गहि सूल, काँती,
असुर-छाती हे।

जय, सिंह चढ़ि कत समर धँसि-धँसि,
विकट मुख विकराल हँसि-हँसि,
शुम्भ कच गहि कएल कर बसि,
मारु गहि असि हे।

जय अमर अरि सिर काटु छट् छट्,
गगन गय महि परत भट्-भट्,
खप्पर भरि-भरि शोषित झट्-झट्,
घोंटल घट-घट हे।

जय कतहु योगिनि नाचु महि मद्,
उठति, महि पुनि गिरति मद्-मद्,
रिपुर धुरिकत मोसु सद्-वद्,
गिरल गद्-गद् हे।

जय कतहु योगिनि नाचु हट्-भट्,
कतहु करत श्रृगाल खट्-खट्,
दनुज हाड़ चिबाव कट्-कट्,
उठत भट्-भट् हे।

जय 'छत्रपति' पति राखु श्यामा,
हरखि हँसि दिल सकल कामा,
जगत-गति अति तोहरि नामा,
शंभु वामा हे।[1]

---

१ जिनेश्वर चौधरी (वरी) से प्राप्त।

(२)

राम नाम जगसार और सब झूठे बेपार।
तप करु तूरी, ज्ञान तराजू, मन करु तौलनिहार।
षटधारी डोरी तेहि लागे, पाँच पचीस पेकार।
सत्त पसेरी, सेर करहु नर, कोठी सन्त समाज।
रकम नरायन राम खरीदहुँ, बोझहुँ, तनक जहाज।
बेचहुँ विषय विषम बिनु कौड़ी, धर्म करहु शोभकार।
मन्दिर धीर, विवेक बिछौना, नीति पसार बजार।
ऐसो सुघर सौदागर सन्तो, जौं आवत फिरि जात।
'छत्रनाथ' कबहूँ नहि ताको, लागत जमक जगात।[१]

※

जगन्नाथ

आपका पूरा नाम 'जगरनाथ राम' था।

आप हवेला खडगपुर (मुगेर) के निवासी[२] और मुगल-सम्राट् औरगजेब के समकालीन थे। आपके आश्रयदाता खडगपुर नरेश राजा तहेउरसिंह थे। आपने रामायण (सुन्दरकाण्ड) की कथा पर एक काव्य-रचना की थी।[३] इसी रचना में आपने खडगपुर के आकर्षक वर्णन के साथ अपने आश्रयदाता का नामोल्लेख किया है।

तुलसीदासजी की रामायण के सुन्दरकाण्ड में रामचन्द्र की कथा का जो अश वर्णित है, वही इसमे वहुत विस्तार पा गया है। इसकी भाषा तो अवधी है, किन्तु कही-कही खडी-वोली और पजावी का भा प्रभाव दृष्टिगत होता है।

उदाहरण

(१)

देखेउ मारुत सुत भै मता। बांधे रहहि महा चौदंता॥
जनु गिरिवर चढ़ै चहुँ ओरा। गहि गहि दंत सों मुंड मरोरा॥
श्याम घटा सम देखहिं ठाढे। झूमहि झुकहिं सर्ग लै बाढे॥
महा भेआवन देखत कारे। सुंड मुंड सिर धुनहि निनारे॥
मदमाते गर्जहि गज राजा। कविवर देखि रहे सब साजा॥
मदमाते चौदंत सब बांधे रहहिं अपार।
पग जंजीर पैकर विखम गनति गनै को पार॥[४]

---

१. श्री कामेश्वर चौधरी (वही) से ही प्राप्त।

२. मुँगेर जिला-हिन्दी-साहित्य-परिषद् के वार्षिकोत्सव के सभापति श्रीकृष्णनन्दन सहाय के भाषण से। देखिए—'प्रदीप' (हिन्दी-दैनिक, पटना) २७ अगस्त, १९४९ ई०।

३. इस पुस्तककी एक हस्तलिखित प्रति उक्त श्रीकृष्णनन्दन सहाय (प्राचार्य, देवघर-कॉलेज) के पास है। इसके लिपिकार हैं चैन गोरिया नामक कोई व्यक्ति, जिन्होंने १८१९ वि० में इसे लिखा था।

४. श्रीकृष्णनन्दन सहाय (प्राचार्य, देवघर-कॉलेज, देवघर) से प्राप्त।

(२)

लड़त मरत महि ऊपर आये। तब कपीश भुज दैत उठाये॥
लै घुमाय परवत दै मारा। उठि दानौ पुनि करत विचारा॥
पुनि हनुमंत लगूर घुमाये। बांधि दैत कै बार घुमाये॥
पुनि उठाय पुहुमि दै मारा। नहिं फुटेउ सिर दैत अपारा॥
पुनि पछारि महि मध्य गिराएउ। उर पगु धरिकै मुंड उखारेउ॥
लीन्ह उखारि मुंड कपी, धर छाती पर पाउ।
धसी गएउ धरती तहाँ, रुधिर नदी बहि आउ॥[१]

जयरामदास

आपका पूरा नाम गोस्वामी जयरामदास ब्रह्मचारी था। पीछे आप 'सिद्धबाबा' के नाम से भी प्रसिद्ध हुए।

आप शाहाबाद जिले के जोगियाँ-ग्राम निवासी थे।[२] आपके पिता का नाम वसन पाण्डेय था। आपके गुरु काशी के कोई दण्डी संन्यासी थे। कहते है, साहित्य-साधना के पूर्व आप कैमूर-पर्वत की एक गुफा[३] मे यागिक साधना करते थे। किंवदन्ती है कि वही पर आपको हनुमान्‌जी की सिद्धि प्राप्त हुई थी और भगवान् शकर के दर्शन हुए थे। यह भी प्रसिद्ध है कि उसी गुफा से भीतर-ही-भीतर आप 'बदरीनारायण' की यात्रा किया करते थे। पीछे इस स्थान से आप बराँव-पहाडी पर चले गये, जहाँ आप 'सिद्धबाबा' के नाम से प्रसिद्ध हुए। वहाँ आपके चरण-चिह्न आज भी अकित है।[४] अपने जीवन के अतिम दिनो मे उक्त बराँव-पहाडी से आप बक्सर (शाहाबाद) चले आये, जहाँ आपका गोलोकवास हुआ।[५]

आपके एक पुत्र और दो कन्याएँ थी—वैदेही[६] और मैदेही। इनमें वैदेही जिन्हे लोग 'योगिनी' भी कहा करते थे, आपकी रचनाओ को लिखती थी। आपके द्वारा रचित और

---

१. श्री कृष्णनन्दन सहाय (वही) से प्राप्त।

२. आपके वशज श्रीराधिकारमण शर्मा, 'बच्चनजी' (वकील, सहसराम, शाहाबाद) से प्राप्त सूचना के आधार पर। श्रीबच्चनजी का अनुमान है कि उनके पूर्वज अयोध्या के रहनेवाले थे। वहाँ से किसी काल में काशी आ गये और फिर वहाँ से बराँव (शाहाबाद)।

३. यह स्थान सहसराम (शाहाबाद) से १२ मील दक्षिण स्थित है। इन दिनों यह 'श्रीगुप्तेश्वरनाथ महादेव की गुफा' के नाम से विख्यात एक प्रसिद्ध तीर्थ-स्थान है। इस गुफा के भीतर थोड़ी दूर जाने पर श्रीगुप्तेश्वरनाथ का शिवलिंग है। इसी लिंग के पास 'पाताल-गंगा' बहती है।

४. इस स्थान पर आजकल किसी भक्त का बनवाया हुआ एक मंदिर है। यह मंदिर 'सिद्धबाबा का मंदिर' के नाम से विख्यात है।

५. बक्सर में आप जिस स्थान पर रहते थे, वह स्थान इन दिनों 'रामचउतरा' (चरित्रवन) के नाम से प्रसिद्ध है।

६. आपकी कई पुस्तकों पर लिखा है—'वैदेही दस्तखत कियो, सन्मुख पवनकुमार। जयराम की नन्दिनी भवजल उतरो पार।' विशेष—इस समय आपकी सातवीं-पीढ़ी में श्रीराधिकारमण शर्मा हैं, जो सहसराम (शाहाबाद) के एक अच्छे हिन्दी-लेखक, प्रसिद्ध वक्ता और वकील हैं।

अनूदित ग्रथो की सख्या २६ है।[१] इनमे प्रमुख के नाम इस प्रकार है—'रामायण' (सात काण्डो मे निर्गुणरामायण), 'रामदीपक', 'अमरदीपक', 'शिवदीपक', 'जगन्नाथ-दीपक', 'भगवद्गीता', 'भक्ति-प्रवन्ध', 'जगन्नाथ-महातम', 'कार्त्तिक-महातम', 'गोपाल-मुक्तावली', 'कर्मविपाक', 'आरती सग्रह', 'एकादशी-महातम' तथा 'छन्द-विचार'।[२] इन रचनाओ की भाषा अवधी और भोजपुरी है।

उदाहरण

(१)

अंतवत सब देह हैं, जीव रहतु है नित्त।
अविनाशी यह वस्तु है, युद्ध करै कि निमित्त॥
जो याको हन्ता गनै, हन्यौ गनत जो कोइ।
यह न मरै मारै नहीं, अज्ञानी वे दोइ॥
यह न मरै उपजै नहीं, भयो न आगे होइ।
सदा पुराण अजन्म नित, मारे मरै न सोइ॥
जो जानत यह आत्मा, अज अविनाशी नित्त।
सो नर मारै कौन को, ताहि हनै को मित्त॥
जैसे पट जीरण तजै, पहरे नर जु प्रवीण।
देह पुरानी जीव तजि, नई जु गहतु प्रवीण॥[३]

(२)

करता अजपालक भगवाना। सिव घालक कहु वेद पुराना॥
अंडज पिंडज उषमज नाना। कीऐ कलपतरु वेद बषाना॥
अंकुरज विपुल कीन्ह जगमाहिं। महादेव सम दोसर नाहीं॥
पुहुमी गिरवर सकल पसारा। महादेव जस वेद पुकारा॥[४]

※

१. इन सात काण्डों में से केवल तीन ही (बाल, सुन्दर और उत्तर) काण्ड परिषद् के हस्तलिखित ग्रंथ-अनुसधान-विभाग में हैं।

२. इनमें कुछ पुस्तकें बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् (पटना) और बिहार-हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन (पटना) के सग्रहालयों में सुरक्षित हैं।

३. परिषद् के हस्तलिखित ग्रथ-अनुसधान-विभाग में सुरक्षित 'श्रीमद्भगवद्गीता' की हस्तलिखित प्राचीन प्रति से।

४. उक्त स्थान में ही सगृहीत 'शिव-दीपक' की हस्तलिखित प्राचीन प्रति से।

जयानन्द

कविता में आपका नाम 'करणजयानन्द' मिलता है।

आपका जन्म दरभगा जिले के भागीरथपुर-ग्राम मे हुआ था।[१] आप महाराज माधवसिह (सन् १७७६-१८०८ ई०) के समकालीन थे।[२] आपके द्वारा रचित एक नाटक 'रुक्मागद' की खंडित प्रति मिलती है।

उदाहरण

(१)

चौदिस हरि पथ हेरि हेरि, नयन बहए जलधार।
भवन न भाव दिबस निसि, करब कओन परकार॥
दुनि हम तिलहु न आँतर, दुहुक प्रान छल एक।
परदेस गए निरदय भेल, कि कहब तनिक बिबेक॥
कुदिबस रहल कतेक दिन, के मोहि कहत बुझाए।
बिह बिपरीत भेल अब, के मोहि होएत सहाय॥
करनजयानन्द गाओल चित जनु करिअ उदास।
धैरज सम तह बर थिक, आओत भमर अवास॥[३]

(२)

की जनु कएल कलानिधि-हर भालानल वास।
मुख सुषमा देखि खिन तनु अनुखन भमए अकास॥
बिहि थिर चान कएल तुअ मुख संसारक सार।
तुलना तुलित न पावए तैं थिर रहए न पार॥
आपत तापित कए तनु तप जे कर बहु भाँति।
आधें आधें भेल दालिम से देखि दशनक पाँति॥
नासा निरखि विषम वन भमइछ चञ्चल कीर।
गति देखि सहज लजाएल गज रज पुरए शरीर॥
सरसिज जँ जल सेवए गिरए अङ्गार चकोर।
तइओ गरब नहि मोचए सुललित लोचन तोर॥
तुअ गुण-गरिमा कि कहब 'करणजयानन्द' गाव।
कमलादेइ-पति शुभ मति नृप सुन्दर बुझु भाव॥[४]

❀

---

१. A History of Maithili Literature (वही), P. 423.

२. कविशेखर प० बदरीनाथ झा का कहना है कि आप मिथिलाधीश सुन्दरठाकुर (सन् १६४४-७० ई०) के आश्रित कवि थे। देखिए—मैथिली-गीत-रत्नावली (वही), पृ० ७४।

३. Journal of the Asiatic Society of Bengal (Vol. 53, Part I, 1884, Spl. No.), P. 85.

४. मैथिली-गीत-रत्नावली (वही), पद सं० २६, पृ० १६।

जॉन क्रिश्चियन[1]

आपका नाम 'जॉनअधम' और अधमजन' भी मिलता है।

आपका जन्म-काल अनिश्चित है। आप बनगाँव (सहरसा) के निवासी एक मिशनरी पादरी थे।[2] वहाँ आपने नील की कोठा भी बनवाई थी। उक्त स्थान मे रहकर आपने गोस्वामी लक्ष्मीनाथ परमहस से सस्कृत, हिंदी और योग की शिक्षा प्राप्त की। हिंदी मे कविता करना भी आपने उन्ही से सीखा।

आप यहूदी थे, पीछे ईसाई हो गये। इस सम्बन्ध मे एक बडी रोचक कथा प्रचलित है। कहते है कि कुछ अंगरेजो के साथ आप समुद्र-मार्ग से जहाज पर भारत आ रहे थे। रास्ते मे बहुत जोरो की आँधी आई। अकस्मात् आँधी आते देखकर अँगरेजो ने जहाज पर किसी यहूदी के होने का अनुमान किया और वहाँ उसकी खोज करने लगे।[3] खोज मे आप ही पकडे गये। जब आपको समुद्र मे फेक देने की तैयारी होने लगी, तब एक दयालु अँगरेज से न रहा गया। उसने सलाह दी कि जान से मार डालने से अच्छा है कि आपका ईसाई बना लिया जाय। अन्त में वही हुआ। आप ईसाई हो गये और इस प्रकार उपद्रव शान्त हुआ।

आपका स्वर्गवास स० १९४० (सन् १८८३ ई०) के आसपास हुआ।[4]

आप कविता भी करते थे। आपकी कविता की भाषा सरल तथा व्रजभाषा और खडीबोली से मिली-जुली होती था। आप बिहार की सभी बोलियो को अच्छी तरह जानते थे।[5] हिंदी मे आपकी पहली और प्रसिद्ध पुस्तक 'मुक्ति-मुक्तावली' है, जिसमें ईसा मसीह का जावनी पद्य मे लिखा गई है।[6] आपकी दूसरी हिन्दी-पुस्तक 'सत्य-शतक' है, जो ईश्वर-भक्ति, प्रेम और वैराग्य पर रचित आपके एक सौ सोलह भजनो का सग्रह है।[7]

उदाहरण

(१)

मन मरन समय जब आवेगा।
धन सम्पत्ति अरु महल सराएँ, छूटि सबै तब जावेगा॥
ज्ञान मान विद्या गुन माया, केतै चित उरझावेगा॥

---

१. हास्यरसावतार प० जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी ने आपका जीवन-परिचय दैनिक 'आज' (काशी) तथा 'वेङ्कटेश्वर-समाचार' (बम्बई) में छपवाया था।

२. श्रीछेदी झा 'द्विजवर' (बनगाँव, सहरसा) के द्वारा प्रेषित सूचना के आधार पर।

३. अगरेजों का विश्वास है कि जहाज या नाव पर यदि कोई यहूदी हो, तो अवश्य उपद्रव होगा।

४. देखिये—डॉ० अब्राहम जार्ज ग्रियर्सन-कृत हिन्दी साहित्य का इतिहास (किशोरीलाल गुप्त, प्रथम स०, नवम्बर, १९५७ ई०), पृ० २९४ तथा भाषासार (बा० साहबप्रसाद सिंह, संशोधित और परिवर्द्धित स०, १९३३ ई०, लेखकों का सक्षिप्त परिचय), पृ० ड।

५. 'प्रोवर्ब्स ऑफ् बिहार' नामक एक पुस्तक अँगरेजी में मिलती है, जिसमें बिहार की सभी बोलियों की कहावतें दी गई हैं और उनका तात्पर्य समझाया गया है तथा उससे मिलती-जुलती अँगरेजी की कहावतें भी दी गई हैं। यह पुस्तक इगलैड के किसी प्रेस में छपी थी। कुछ विद्वान् इसे आपकी ही रचना मानते हैं। किन्तु वस्तुत यह जॉन नामक किसी अन्य व्यक्ति की रचना है।

६. इस पुस्तक के दो-दो सस्करण हुए थे। आजकल कोई भी सस्करण उपलब्ध नहीं होता।

७. इस पुस्तक का भी प्रकाशन कलकत्ता से हुआ था।

मृगतृष्णा जस तिरषित आगे; तैसे सब भरमावेगा ॥
मातु पिता सुत नारि सहोदर, झूठे माथ ठहावेगा ॥
पिंजर घेरे चौदिस विलपे, सुगवा प्रिय उड़ जावेगा ॥
ऐसो काल समसान समाना, कर गहि कौन बचावेगा ॥
जॉन 'अधमजन' जौ विश्वासी, ईसू पार लगावेगा ॥[1]

(२)

अब क्या सोचत मूढ नदाना ।
हित सुत नारी ठामहि रहिहै, धन-संपत के कौन ठिकाना ॥
माया मोह के जाल पसार्‌यो, बेरि पयानक क्या पछताना ॥
वास आपनों इतहि बँधायो, नात लगायो विविध विधाना ॥
दूत बुलावन आये द्वारा, मोह विवश भै माथ ठठाना ॥
काह करौं कछु लक नहिं मेरे, सुध-बुध यहि अवसर बिसराना ॥
जॉन अधम कर जोरे टेरत, नाथ दिखावहु प्रेम अपाना ॥[2]

❀

जीवन बाबा[3]

आपका जन्म शाहाबाद जिले मे, नोखा-थाने के राजापुर-ग्राम मे हुआ था।[4] आपके पिता का नाम परमानन्द पाठक था। बचपन से ही पूजा-पाठ की ओर आपकी विशेष प्रवृत्ति थी। आप देवी के उपासक थे। आगे चलकर एक प्रसिद्ध महात्मा हुए। टेकारी-राज-दरबार मे आपकी बडी कद्र थी।[5]

हिन्दी में रचित आपकी कई हस्तलिखित पुस्तकें मिली है। इनमे एक अधूरी है। इसी में आपकी कलम भी रखी है। आपकी रचना का उदाहरण नही मिला।

जीवनराम[6]

कविता मे आपका नाम 'रघुनाथ' मिलता है।

आपका निवास-स्थान मुजफ्फरपुर जिले मे कटरा थाने का 'शिवदाहा' नामक ग्राम था।[7] आपके पुत्र राजवल्लभसिंह 'ईस्ट-इंडिया-कम्पनी' के समय पटना-कचहरी मे

---

१. 'श्रीवेङ्कटेश्वर-समाचार', (दैनिक, मार्गशीर्ष १९९० वि०, शुक्रवार)।
२. वही।
३. आपका एक छोटा-सा परिचय श्रीभुवनेश्वरप्रसाद 'भानु' ने ११ जून, १९५५ ई० को 'साप्ताहिक-शाहाबाद' में लिखा था।
४. 'साप्ताहिक-शाहाबाद' (११ जून, १९५५ ई०), पृ० ७।
५. आपके जन्म-स्थान में आपका कुंड, खप्पड और माला आदि सामग्रियाँ आज भी सुरक्षित हैं। वहाँ इनकी पूजा नियमित रूप से होती है।
६. आपका परिचय श्रीदेवनारायणलाल कर्ण ने त्रैमासिक 'साहित्य' (पटना) के जुलाई, १९५४ ई० के अक में लिखा था।
७. 'साहित्य' (वही, जुलाई, १९५४ ई०) पृ० ७४।

काम करते थे। उस समय दरभगा के महाराज माधवसिंह (सन् १७७६-१८०८ ई०) का राज खतरे मे पड गया था। आपने कम्पनी के कर्मचारियो के सहयोग से उस खतरे से उस राज्य की रक्षा की, जिसके पुरस्कार-स्वरूप आपको 'लढा' का विशाल जगल मिला।[१] आप एक बहुत बडे ईश्वर-भक्त थे, इसीलिए आपको लोग 'महात्मा' भी कहा करते थे।

आपकी दो पुस्तके उपलब्ध है, जिनमे एक 'अनुभव-कल्पतरु' हिन्दी मे है।[२]

उदाहरण

(१)

भानुकुल-कुमुद चन्द चन्द-कुल-कमल-भानु, दोऊको उदै जासो नारायन ध्याइए।
कमल मध्य कुमुद आदि नाम रूप सुख सरूप, लीला गुन कर्म काहे पृथक करि गाइए॥
सबरी के आँगन इन कुबरी के भौन गौन, दीनबन्धु सील सिन्धु चरन मनाइए।
परमधाम राम स्यामरूप कृष्णनाम राम, एही रघुनाथ द्वैतभावनो मिटाइए॥[३]

(२)

श्यामा पलक हेरिअ हर वामा।
तव वारिद सम वदन भयङ्कर, भालहि चन्द्र ललामा॥
लहलह जीह विकट रद घनरुप, मुख छवि अति अभिरामा॥
वाल समय हम खेल बिताओल, तरुण समय सुखयामा॥
वृद्ध समय पुनि व्याधि ग्रसित भए, जपलहुँ नहि तुम नामा॥
माया केर किङ्कर भए रहलहुँ, निस दिन आठो जामा॥
भव केरि भारेँ प्रेम मगन नहि, गाओल तुअ गुनगामा॥
अब अपराध छमा करु माता, पुरिअ सकल मनकामा॥
अन्त समय 'रघुनाथ' दरस, दिअओ रुचिर निजधामा॥[४]

❀

जीवाराम चौबे

कविता मे आपका नाम 'युगलप्रिया' मिलता है।

आप सारन जिले के इसुआपुर-ग्राम के निवासी थे।[५] आपके पिता का नाम शकर चाबे था जो पीछे शकरदास[६] कहलाये।

---

१. इस स्थान पर इन दिनो हरिहरपुर-ग्राम बस गया है।
२. इस पुस्तक की रचना १८५० वि० (१७९३ ई०) में हुई थी। इसके पाँच विश्रामों में अनेक छदों एवं राग-रागिनियों का प्रयोग हुआ है। इसकी भाषा बहुत ही साफ और सुन्दर है। दूसरी पुस्तक उर्दू में है। उसका नाम है 'वहर तवील'।
३. 'साहित्य' (वही), पृ० ७७।
४. प्रो० ईशनाथ झा (दरभगा) से प्राप्त।
५. बिहार-दर्पण (वही), पृ० १४३ तथा १५५।
६. इनका परिचय इसी ग्रंथ में यथास्थान मुद्रित है।

आप एक अच्छे पडित, कवि, और भजनानंदी थे। टेकारी के महाराज रामकृष्णदेव बहादुर ने आप से ही भक्ति-तत्त्व पाया था। वे आपका बड़ा आदर करते थे। आपका लिखा 'रसिक-प्रकाश-भक्तमाल' है।[१] यह नाभादास-कृत 'भक्तमाल' की टीका है।

आपकी रचना का कोई उदाहरण नही मिला।

(दीवान) झब्बूलाल[२]

आपका जन्म सारन जिले के परगना 'कसमर', मौजा 'नयागाँव'[३] में फसली सन् ११६२ (१७५७ ई०) मे हुआ था।[४]

आपके पिता का नाम लाला साही रामदास था। ये अपनी दीवानगिरी-वृत्ति से ही काल-क्षेप करते थे। इनके पश्चात् आप भी दीवान ही हुए। कहते है, आपकी चतुराई से ही बेतिया का राज्य वीरेश्वरसिंह बहादुर के हाथ लगा था, इसी कारण आपको राजा बहादुर ने अपने यहाँ की दीवानगिरी का काम दिया और कहा कि 'यह राज्य मेरी सतानो के लिए और दीवानगिरी का काम आपके वशधरो के लिए सुरक्षित रहेगा'। तभी से आपने दीवानगिरी का कार्यारम्भ किया।

आपकी शिक्षा अरबी-फारसी से आरम्भ हुई। अरबी-फारसी की शिक्षा प्राप्त कर आपने सस्कृत का ज्ञान प्राप्त किया, और हिन्दी मे भी काव्य-रचना करने लगे। आज तक आपकी बनाई होली लोग गाते है। पुस्तकाकार आपकी कोई भी रचना आज नही उपलब्ध होती है। आप फसली सन् १२४४ (१८१७ ई०) में परलोक सिधारे।

आपकी रचना का कोई उदाहरण नही मिला।

टेकमनराम

आप चम्पारन जिले मे धनौती-नदी के तट पर स्थित 'झखरा' ग्राम के निवासी लोहार थे।[५] निर्धनता के कारण आप राज-मिस्त्री का काम करते थे। कहते है, माधोपुर (चम्पारन) के मन्दिर का किवाड़ आपका ही बनाया हुआ है। माधोपुर मे किवाड बनाते समय ही आपका बाबा भीखमराम से सम्पर्क हुआ और आप उनके शिष्य बन गये। कहा जाता है कि बाबा भीखमराम के आपके अतिरिक्त दो और शिष्य थे। एकदिन उन्होने अपने तीनो शिष्यो को बिठाकर उनके आगे लोटा, गिलास तथा 'करवा' रख दिया और अपनी इच्छा के अनुसार एक-एक उठाने को कहा। आपने मिट्टी का 'करवा' उठाया। उसी

---

१. यह पुस्तक खड्गविलास प्रेस (पटना) से प्रकाशित हुई थी।

२. आपके विस्तृत परिचय के लिए देखिए, बाबू रामदीनसिंह-कृत 'बिहार-दर्पण' (वही), पृ० ९९-१२०।

३. नयागाँव को अक्सर दूरवाले लोग 'नयागाँव-डुमरी' कहते हैं। यह स्थान हरिहरक्षेत्र (सोनपुर) से तीन कोस पश्चिम मही-नदी के किनार पर बसा है।

४. बिहार-दर्पण (वही), पृ० ९९।

५. सतमत का सरभग-सम्प्रदाय (वही), पृ० १४४।

दिन से आप 'सरभग-सम्प्रदाय' मे दीक्षित हो गये। आपके प्रमुख शिष्य थे—टहलराम, मिसरी माई, दर्शनराम तथा सुदिष्टराम।

आप एक सिद्ध-पुरुष थे, जिसके कारण आपको ब्रह्म का साक्षात्कार हुआ था। आपके सम्बन्ध मे अनेक चमत्कारपूर्ण कथाएँ प्रचलित हैं।[१] आप झखरा 'फाँडी' (परम्परा) के प्रवर्त्तक कहे जाते है। आपकी परम्परा के मठ चम्पारन, सारन और मुजफ्फरपुर जिलो मे फैले हुए हैं। आपने माघ वसन्त-पचमी को अपने निवास-स्थान 'झखरा', मे ही समाधि ली थी।[२]

ग्रथाकार आपकी कोई रचना नही मिलती। लगभग एक सहस्र भजन और भक्ति-गीत ही यत्र-तत्र मिलते है। इन स्फुट रचनाओ की भाषा भोजपुरी है।

उदाहरण

(१)

बिना भजन भगवान राम बिनु के तरिहे भवसागर हो।
पुरइन पात रहे जल भीतर करत पसारा हो।
बुन्द परे जापर ठहरत नाहीं ढरकि जात जइसे पारा हो।
तिरिया एक रहे पतिबरता पतिवचन नहीं टारा हो।
आपु तरे पति को तारे तारे कुल परिवारा हो।
सुरमा एक रहे रन भीतर पीछा पगुना धारा हो।
जाके सुरतिया हव लड़ने में, प्रेम मगन ललकारा हो।
लोभ मोह के नदी बहत बा लछ चौरासी धारा हो।
सीरी टेकमन महराज भीखम सामी कोई उतरे संत सुजाना हो।[३]

(२)

सुतल रहलीं नींद भए, गुरु दिहिले जगाय।
गुरु का चरन रज अंजन हो, नैना लिहल लगाय।
वोही दिन से नींदो न आवेला हो, नाहीं मन अलसाय।
प्रेम के तेल चुआवहु हो, बाती देहु न जलाय।
राम चिनिगिया बारहु हो, दिन राति जलाय।
सुमति गहनवा पेन्हहु हो, कुमति धर न उतार।
सत के माँग सँवारहु हो, दुरमति बिसराय।
उचित अटारी चढ़ि बैठे हो, वाहाँ चोरवो न जाय।
रामभिपम ऐसे सतगुरु हो, देखि काल डराय।[४]

---

१. इस प्रकार की कथाओं के लिए देखिए, वही, पृ० ११८, तथा १४८।

२. उक्त तिथि को प्रत्येक वर्ष 'झखरा' में आपकी समाधि पर आज भी पूजा होती है। इसी अवसर पर यहाँ एक बहुत बड़ा मेला लगता है। यह मेला सरभंगियों के मेलों में सबसे बड़ा माना जाता है। इसमें टेकमनराम, भिनकराम की शाखा के सभी अनुयायी भाग लेते हैं। ये अपने साथ रुपये, गाँजा, भांग लाते और मंदिर में चढाकर महन्थ को दे देते हैं।

३. भोजपुरी के कवि और काव्य (वही), पृ० १२१।

४. मतमन का सरभग-सम्प्रदाय (वही), पृ० ५८।

तपसी तिवारी

आप चम्पारन जिले के ममरखा-ग्राम के निवासी थे।[1] आपके पिता का नाम भोरीराम तिवारी था, जो सस्कृत के एक प्रकाड विद्वान् थे। बेतिया के महाराज युगलकिशोरसिह (राज्यारोहण-काल १७६३ ई०) आपकी रचनाओ पर बहुत मुग्ध थे। उन्होने आपको अपने दरबार में रखने की भरपूर चेष्टा की, किन्तु आप इसके लिए तैयार नही हुए।

हिन्दी मे आपकी कुछ कविताएँ मिलती है।

उदाहरण

हिमगिरि नन्दिनि कानन-कंदिनि जय नारायणि वाणी वन्दिनि,
लोलित लुंबिनि चम्पा चुम्बिनि तरल तरंगिनि विपिन विहंगिनि।
नरदुख भगिनि राजित रंगिनि पुरुषोत्तम नारायण संगिनि,
प्रेम पोषिणी तरणि तोषिणी यश घोषिणी, करुणा-कोषिणी।
भक्ति भामिनी दया दायिनी सलिल शामिनी गति प्रदायिनी,
दु ख विनाशिनि सौख्य प्रकाशिनि उर-उर वासिनि वसुध विलासिनी।
रजत मुकुट द्रवि स्रवत हेतु शिला देत भव को नित रस नव,
युगलकिशोर करत तव पूजा जेहिजन औरो आस न दूजा।
तपसी करत तपस्या भारी जे नित चरणन के अधिकारी,
मांगौ एक मातु वर देहू मम उर बहहुं सदा बनि नेहू।[2]

तुलारामसिश्र

आप चम्पारन जिले के सतबरिया-ग्राम (चनपटिया थाना) के निवासी थे।[3] आप पहले गोरखपुर जिले के मझौली-दरबार में रहते थे। पीछे बेतिया (चम्पारन) के महाराज युगलकिशोरसिह के आश्रित हुए। आपका अधिक समय बकुलहर (चम्पारन)[4] मे भी व्यतीत हुआ था। आपके पुत्र लक्ष्मीप्रसादमिश्र और पौत्र मोहनदत्तमिश्र भी कवि हुए।[5] आपने सरस-ललित भाषा मे 'हरिहर-कथा' की रचना की थी। कहते है कि जीवन के अन्तिम दिनो में कुष्ठ रोग से ग्रस्त होने पर आपने एक सूर्यस्तुति-परक ग्रथ की भी रचना की थी। किन्तु यह रचना उपलब्ध नही हो सकी।

---

१. चम्पारन की साहित्य-साधना (वही), पृ० २८।

२. वही, पृ० २८-२९।

३. वही, पृ० ३०।

४. आज भी इस स्थान में आपकी स्मृति में गंडक के एक घाट का नाम 'तुलाराम-घाट' है।

५. इस वश के वर्त्तमान वंशधर श्रीउपेन्द्रनाथमिश्र एव श्रीकमलेशमिश्र हैं। श्रीउपेन्द्रनाथमिश्र से जो दो सौ हस्तलिखित ग्रथ बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्‌ (पटना) को प्राप्त हुए हैं, उनमें ही 'हरिहरकथा' नामक ग्रंथ संगृहीत है।

(१)

हरि अस जब हम धरि हिय ध्याना। सुनि हरखे हरि कृपा निधाना ॥
गरुड़ चढल आयउ ततकाला। संख-गदाधर चक्र विसाला ॥
पद्म हाथ परमारथ लायक। असुर-संहारन सुर-सुखदायक ॥
स्यामल सरस सरोरुह लोचन। सुमिरन जासु सकल अघ मोचन ॥
मोर पच्छ सिर परम सोहावन। भृकुटी कुटिल सकल मनभावन ॥
नयन अरुन दल कमल प्रकासा। नील पुत्तरिय भृंग पियासा ॥
चन्द्र भाल सुभ स्रवन समीपे। कुंडल झलक मनोहर नीके ॥[1]

(२)

आजु पहुसंग रमित कामिनि करत कौतुक वितल यामिनि।
अति अनादरि भेलि वाहरि चितने ठाहरि रे ॥१॥
नविन नागरि झोरि डारल घाम भीजल वसल गारल।
जनि पराभव कतेक साज छूटल रे ॥२॥
ननदि मंदिर धाय पैसलि चरण गहि हिय हारि वैसलि।
वैसि नारि डोलाव पंखा करत रस भाषा रे ॥३॥
तुलाराम मन समुझि कामिनी। छूटल डर पुनि दोसर जामिनि।
ससरि कय रस पसरि जायत मन जुरायत रे ॥४॥[2]

※

दयानिधि[3]

आप पटना-निवासी ब्राह्मण थे।[4] हिन्दी मे आपकी काव्य-रचनाएँ मिलती है, जिनमे कुछ लोक-कंठ में भी सुरक्षित है। मिश्रवन्धुओ ने आपकी कविता को 'वहुत रोचक और उत्तम' वतलाया है।

उदाहरण

कुन्द की कली-सी दन्त पांति कौमुदी-सी, दीसी विच-विच मीसी-रेख अमी-सी गरकि जात।
वीरी त्यों रची-सी विरची-सी लखैं तिरछी-सी, रीसी अँखियों वै सफरी-सी फरकि जात ॥
रस की नदी सीं 'दयानिधि' की नदी-सी, थाह चकित अरी-सी रति डरी-सी सरकि जात।
फन्द में फसी-सी भरि भुज में कसी-सी, जाकी सी-सी करिवे में सुधा सीसी-सी ढरकि जात[5] ॥

※

१. परिषद् के हस्तलिखितग्रन्थ-अनुसंधान-विभाग में सुरक्षित हस्तलिखित 'हरिहरकथा' से।
२. मिथिला-गीत-संग्रह (वही, चतुर्थ भाग), पद सं० १३, पृ० ८।
३. इस नाम के दो कवि विहार के वाहर हो चुके हैं।
४. मिश्रवन्धु-विनोद (वही, तृतीय-भाग, द्वितीय सं०, १९८५ वि०), पृ० १२८५।
५. शिवसिंह-सरोज (शिवसिंह, चतुर्थ स०, १९३४ वि०), पृ० १२६।

दिनेश द्विवेदी

आप हिन्दी-साहित्य के एक अनुभवी विद्वान् और टेकारी-राज्य (गया) के प्रसिद्ध महाराज मित्रजीतसिंह के प्रधान दरबारी कवि थे।[१]

आपका जन्म १८५० वि० (१७९३ ई०) के लगभग हुआ था और आप १९१५ वि० तक जीवित थे। आपने 'रस-रहस्य'[२] नामक एक प्रसिद्ध ग्रथ की रचना १८८३ वि० मे की थी। इसमे नायिका-भेद-वर्णन के अतिरिक्त टेकारी-राज्य, टेकारी-राजवंश, फल्गु-नदी, मगध-महिमा आदि विषयो का वर्णन है। मिश्रबन्धुओ ने आपके एक और ग्रथ 'नखशिख' की चर्चा की है।

(१)

औचक ही भेटत लपेटत गोपालजी के डरपि सलोनी सखि धसी मनो आरा पै ॥
रोवत रिसौहे सतरौहे बैन सौहे सीस मनि उचरो है ज्यों चढो है राहुतारा पै ॥
भनत दिनेश नव नागही बिबस आँखें, बहे जलधारा मनो जलधार धारा पै ॥
गोद में न ठहरात हहरात दारा इमि, थहरात पारा मनों नील-मणि थारा पै ॥[३]

(२)

सोहै भाल बाल-इन्दु सुन्दर सिन्दूर सोभा, एक रद करवर चारि पाइयत है ॥
नंद जगदंब को उदरलंब चारु तन, मूषक प्रसिद्ध जाको यान गाइयत है ॥
जाहिर अनाथनि सनाथ के करनहारे ऐसे गननाथ तिन्हें माथ नाइयत है ॥
चारि छौ अठारह 'दिनेस' सदग्रंथ आदि, जाको नाम पीठ पठियार पाइयत है ॥[४]

❋

देवाराम[५]

आपका जन्म शाहाबाद के 'कर्जा'[६] नामक ग्राम मे, अनुमानत १७१० ई० मे, हुआ था। आपके पिता का नाम पं० तारा पाण्डेय[७] था, जा अपनी आर्थिक विपन्नता के कारण सारन जिले के 'हँसुआ-नगराजपुर' से 'कर्जा' मे आ बसे थे।

बाल्यावस्था से ही आप बडे उदासीन प्रकृति के थे। आपकी प्रकृति से चिंतित होकर आपके माता-पिता ने आपका विवाह कर दिया, जिससे आपको चार पुत्रियाँ और दो पुत्र हुए।

---

१. मिश्रबन्धु-विनोद (वही, द्वितीय-भाग, द्वितीय स० १९८४ वि०), पृ० ८८२।
२. इसकी एक हस्तलिखित प्रति मन्नूलाल-पुस्तकालय (गया) में है। इसकी पृष्ठ स० ९७ है। इसका प्रकाशन खड्गविलास प्रेस (पटना) से हुआ था।
३. परिषद् में टेकारी-निवासी एक हिन्दी-प्रेमी द्वारा प्रेषित।
४ प्राचीन हस्तलिखित-पोथियों का विवरण (दूसरा खण्ड, प्रथम स०, २०१२ वि०), पृ० ६३।
५. श्रीसर्वदेव तिवारी 'राकेश' परसियाँ (शाहाबाद) आपके विषय में विशेष रूप से अध्ययन कर रहे हैं।
६. यह ग्राम बिहियाँ (शाहाबाद) स्टेशन से छह मील उत्तर स्थित है।
७. इनकी ख्याति ज्यौतिष के एक प्रकाड पडित के रूप में थी।

पुत्रो के नाम थे—अजवदास[1] और रतन पाण्डेय। रतन पाण्डेय की सर्प-दश से मृत्यु हो जाने के कारण आप विरक्त हो गये। फलत भाइयो ने आपको अलग कर दिया।

आप सारन जिले के खोडी-पाकड-निवासी संत नृपतिदास के शिष्य और पं० रामेश्वर-दास[2] के गुरुभाई थे। आप व्यक्तिगत रूप से संप्रदायवाद के विरोधी थे। अत· आपका कोई स्वतत्र पथ नही चला। फिर भी आपके शिष्यो की सख्या आज भी कम नही है। आपके प्रमुख शिष्यो के नाम इस प्रकार है - प्रह्लाद गोसाई, सुबुद्धि ओझा, बहाल ओझा और गुरुचरण ओझा। आपने कई तीर्थ-स्थानो की यात्राएँ भी की थी। एक बार जब आप चुनारगढ (उत्तर-प्रदेश) के पास गंगातट पर योग-साधना में लीन थे, तब किसी ने आपको एक 'दिव्य-पट' प्रदान किया था।[3]

आप एक वडे प्रगतिशील विचार के भक्त-कवि थे। अनेक विरोधो के होते हुए भी आपने अपने गाँव मे काली-पूजा के समय होने वाली जीव-हिंसा का विरोध किया था। उसी विरोध का परिणाम है कि आज तक आपके ग्राम मे कालीमाता को कोई जीव नही चढाया जाता। कहते है, एक बार आपकी ख्याति सुनकर जगदीशपुर के जमीदार महाराज भूपनारायणसिंह आपसे मिलने आये। उस समय आप समाधिस्थ थे। अतः महाराज वापस चले गये। समाधि टूटने पर अपने शिष्यगण, अपनी माता और स्त्री के दबाव डालने पर आप उनसे मिलने जगदीशपुर जा रहे थे, किन्तु रास्ते में विहियाँ से दक्षिण 'दावा' के जगल मे अपने प्रिय शिष्य प्रह्लाद से यह कहकर आपने योग-समाधि द्वारा अपना प्राण-विसर्जन कर दिया कि 'भगवान के सिवा किसी मनुष्य से याचना करना अनुचित है'। इस घटना की सूचना जव महाराज को मिली, तव उन्होने आपके परिवार के लिए कुछ भूमिदान कर दिया।[4]

कहा जाता है कि आपने ग्यारह सौ फुटकर भजन, आठ अष्टक, चौतीसा, चालीसा आदि ग्रथो की रचना की थी। किन्तु अब एक सौ पैंसठ फुटकर भजन, केवल एक अष्टक-रामाष्टक और चौतीसा ही प्राप्त है। इन रचनाओ के अतिरिक्त आपके अनेक वारहमासा,

---

१. इनका परिचय इसी पुस्तक में यथास्थान मुद्रित है।

२. इनका भी परिचय इसी पुस्तक में यथास्थान मुद्रित है। इनके गुरु स्वामी पूर्णानन्द जी महाराज माने जाते हैं। कुछ विद्वान् आपके गुरु का नाम नृपतिदास भी कहते हैं। वस्तुतः स्वामी पूर्णानन्दजी और नृपतिदास एक ही व्यक्ति थे।

३. इस घटना का वड़ा ही रोचक वर्णन आपने अपने एक पद में किया है। वह पद इस प्रकार है—
मैं जाना साँचों हरि दानी।
एह जग मैं कोउ दान करतु हैं, साँझे देत विद्दान वखानी॥
वैठ रह्यो मैं प्रातकाल मैं, हरिमूरत हृदया में आनी॥
मन बुधि चित्त लगे हरि पद मैं, सफल सुमंगल आनंद खानी॥
नयन उघारि निहारि दिव्य-पट देखत वने न जात वखानी॥
ना कोउ कहेउ, न देखेउ नयन ते, कौन दिया मै मन अनुमानी॥
दीनदयाल दयानिधि हरि दियो मन मैं, यह निहिचै मैं जानी॥
देवाराम प्रतीति भयो उर गुरु पितु मातु है सारँग पानी॥

४. इसकी सनद आज भी आपके वशजों के पास है।

होली, चैता, झूमर, सोहर, जेवनार आदि के गीत भी लोक-कठ मे मिलते है। आपकी उक्त रचनाएँ मुख्यत. योग-परक है।

उदाहरण

(१)

योग नहीं, हठ धर्म नहीं, अभिअंतर श्रीगुरु भेद लखायो।
चंद सूर भयो एक अंग, त्रिवेनी के संगमे जाय नहायो।
दान दियो सभ कर्म जहाँ लगि, सून सने हित नेह लगायो।
द्वादश बाजन के झझकारन, शब्द अनाहद जाय समायो।
चौंतीस ऊपर है प्रभु पावन, परम पदारथ साहेब पायो।
देवाराम निहाल भयो जब, एक अनूप सरूप लखायो।[१]

(२)

प्रभु तेरो अजब नगरिया, बरणत बरनी न जाई।
नव दस मास में सिरजल, निज कर रुचिर बनाई।
पानी के सुद्द पवन के धागा, पाँच-पचीस मिलाई॥
सोरह खाई दस दरवाजा, सोभित ससि अरु सूर।
या गढ माँह बहत्तर पँखुरी, बावन है कंगूर॥
सात-दीप नव खंड विराजै, चौदह भुवन समाई।
तीनों लोक बसै घट भीतर, तँह हरि रहत रमाई॥
देवाराम गुरु दया कियो है, साहेब दियो लखाई।
पद्म असंख लहालहि जहँवा बिनु जल कमल फुलाई॥[२]

※

देवीदास

आपका निवास-स्थान रामगढ (हजारीबाग) था।[३] आपके पिता का नाम राघवदास और पितामह का नाम धरणीधरदास था। आपने रामगढ के राजा मणिनाथसिंह के आश्रय मे रहकर १८४२ वि० मे 'पाडव-चरितार्णव' नामक काव्य-ग्र थ की रचना ७८ तरगो में की थी।[४] इसमे महाभारत की कथा के आधार पर पाण्डवो के चरित्र का चित्रण अनेक प्रकार के छदो मे किया गया है।

---

१. श्री 'राकेश' से प्राप्त।
२. वही।
३. प्राचीन हस्तलिखित-पोथियो का विवरण (वही, दूसरा खण्ड), पृष्ठ ४१।
४. इसकी हस्तलिखित-प्रतियाँ बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् (पटना) और मन्नूलाल पुस्तकालय (गया) में सचित हैं।

उदाहरण

(१)

उपवन की सोभा नहीं, कही जात कछु मोहि ।
तकि निवसे तहि ठाम जनु, ऋतु सभ ई सुख जोहि ।।
फुली मल्लिका रासि जनु, वारिद में ससि सोह ।
मुक्ता की हीराकनी, रुचिर गुथे मन मोह ।।[१]

(२)

फूल्यो कहूँ गुलाव बहु, अरुन स्वेत छवि-धाम ।
रबि प्रभात झाँई सरिस, सोभा ललित ललाम ।।
फलित कदम्ब-कदम्ब रुचि, निरखत सरस सोहाय ।
रचि सुवर्न कन्दुक मनो, वज्र कनी लटकाय ।।[२]

नंदनकवि

आप दरभगा जिले के उजान-ग्रामवासी थे ।[३] आपके ही वंश मे पीछे हर्षनाथ झा एक प्रसिद्ध कवि हुए, जिन्होने मिथिला-नरेश महाराज लक्ष्मीश्वरसिंह के सभा-पंडित रहकर अनेक ग्र थो की रचना की थी । मैथिली मे रचित आपके कुछ पद मिलते है ।

उदाहरण

देखु देखु अपरुब माई ! दुहुक वदन देखि दुअओ लजाई ।।
दुहु मन अति सानन्दा । दुंहुक वदन जनि पूनिम चन्दा ।।
कर-कङ्कए भल छाजे । दुहु मिलि अगिनि होम कर लाजे ।।
सुललित अम्बर रागे । दुहु मन उपजल नव अनुरागे ।
'नन्दन' कह भल जोरी । ओ अति सामर, ई अति गोरी ।।[४]

नंदीपति

आपने अपने वारह उपनाम वतलाये है । इनमे केवल दो उपनामो 'बादरि' और 'कलानिधि' से ही आपकी कविताएँ अधिक मिलती है ।

आप मिथिला के निवासी थे ।[५] आपके पिता का नाम कृष्णपति था, जो स्वय भी एक कवि थे । आप मिथिला के राजा माधवसिंह (सन् १७७६-१८०८ ई०) के समकालीन

१. परिषद् के हस्तलिखित ग्र थ-अनुसधान-विभाग में सुरक्षित 'पाण्डव-चरितार्णव' से ।
२. वही ।
३. मैथिली-गीत-रत्नावली (वही), पृ० ७७ ।
४. वही, पद सं० ४३, पृ० २३-२४ ।
५. मिश्रबन्धु-विनोद (वही, तृतीय-भाग, द्वितीय स० १९८५ वि०), पृ० ९८१ ।

माने जाते है। आपकी गणना मिथिला के लोकप्रिय कवियो मे होती है। आपने 'श्रीकृष्णकलिमाला' नामक एक नाटक लिखा है। इसमे सस्कृत और प्राकृत के अंश बहुत थोडे है। अधिकाश स्थल मैथिला-गीतो से ही भरे हैं।

उदाहरण

(१)

माधव एहन दिवस भेल मोरा।
अपन करम फल हम उपभोगब, ताहि दोस कोन तोरा॥
जाहि नगर चानन नहि चीन्हथि, अइइ आदर कै रोपे।
बिनु गुन बुझले जनिक अनादर, उचित न तापर कोपे॥
सगुन पुरुख निरगुन ननिल जौं, जीबन जइ के देला।
जौं करमी फुल सबहु सराहिए, तौं कि कमल गुन गेला॥
थल गुन आन ठाम परगासल, तैं की तनिक अभेला।
गिरि दरि ताहि तिमिर रहु ता पर, रबि महिमा दिन भेला॥
जनिक सरस मन ताहि कहिए गुन, पसु सिसु अबुध न बूझे।
नन्दीपति भन तैं देखु दरपन, आन्हर कौं की सूझे॥४॥[१]

(२)

चन्द्रवदनि नवि कामिनि सजनी यामिनि अति अन्हिआरि।
सखि सङ्ग चललि केलि घर सजनी कर-पल्लव दिपबारि॥
पवन झिकोर जोर बह सजनी तैं लेल अञ्चल झाँपि
देखि उरज अति सुन्दर सजनी तैं ओ रासि उठ काँपि॥
झपझप कए कत काँपए सजनी विलखि धुनए निज माथ।
कथिलए जनम देल मोर सजनी चतुरानन बिनु हाथ॥
'नन्दीपति' कवि गाओल सजनी ई जग थीक कुमान।
परस उरज अति सुन्दर सजनी माधवसिंह रस जान॥[२]

❋

नन्दूरामदास

आप ब्रह्मपुरा[३] (मुजफ्फरपुर) के निवासी थे।[४] आपके गुरु का नाम बलरामदास तथा शिष्य का नाम रघुनाथदास[५] था। आप अपने निवास-स्थान पर ही रहकर भजन करते हुए अपना जीवन-यापन करते थे। वही आपने 'शब्द-सहिता वाणीप्रमोद' की रचना प्रारम्भ की। दुर्भाग्यवश इसे बिना पूरा किये १८१४ वि० (१७५७ ई०) में आप परलोक सिधारे। आगे चलकर इसे आपके शिष्य रघुनाथदासजी ने पूरा किया।

१. Journal of the Asiatic Society of Bengal (vol. 53, Part I, 1884), P. 79.
२. मैथिली-गीत-रत्नावली (वही), पद स० ७५, पृ० ४४।
३. यह स्थान आजकल ब्रह्मपुरा चट्टी के नाम से विख्यात हैं।
४. शब्द-संहिता वाणीप्रमोद (श्रीविश्वम्भरदासजी, प्रथम सं०, १९२७ ई०) पृ० १।
५. इनका परिचय इसी पुस्तक में यथास्थान मुद्रित है।

उदाहरण

राज विराज भई पलमाहिं परी यमराज सों काज तबेंजु।
भूलि गई सब साज समाज रही कछु लाज न तेज तबेंजु।
न कियो सतसंग न प्रेम उमंग कथा परसंग सुने न कबेंजु।
कहें नंदू निदान चले जब प्राण कहाँ हरि ध्यान समान अबेंजु।[१]

❀

(महाराज) नवलकिशोरसिंह

आप बेतिया (चम्पारन) के महाराज[२] और महाराज आनन्दकिशोरसिंह[३] के अनुज थे।[४] अपने अग्रज का तरह आप भी कवि और संगीतज्ञ तो थे ही, कवियो के एक बहुत बडे आश्रयदाता भी थे। आप १८५५ ई० मे परलोकवासी हुए।

उदाहरण

सो सब विधि सुजान ज्ञान मान जो करत गान काली गुनवर,
सकल पुराण शास्त्र निगमागम कहत ताहि धन-धन भुव पर,
लहत सुगम चारो फल तत छिन अष्ट सिद्ध नौ निधि रहत भवन पर
नवलकिशोर ताको दास अरु ताको दास ताको अनुचर।[५]

❀

निधि उपाध्याय

आपका वास्तविक नाम 'जिरवन झा' था। 'निधि' तो आपका उपनाम था। पीछे आप इसी नाम से प्रसिद्ध हो गये।

आप दरभगा जिले के कोइलख-ग्रामनिवासी[६] और खडवलाकुलोद्भव मिथिला-नरेश महाराज विष्णुसिह के आश्रित थे। आप दरभगा-जिले के उजान-ग्रामवासी विद्वान् कविशेखर प० बदरीनाथ झा[७] के पूर्वज थे।

मैथिली मे रचित आपके कुछ पद मिलते है।

---

१. शब्द-संहिता-वाणी प्रमोद (वही), पृ० १८५।
२. चम्पारन-गेजेटियर (द्वितीय स०, १९३२ ई०), पृ० १३६।
३. इनका परिचय इसी ग्रंथ में यथास्थान मुद्रित है।
४. आप दोनों भाइयों के दरबारी-कवियों में नारायण उपाध्याय, दीनदयाल, मायाराम चौबे, मुशी प्यारेलाल, कालीचरण दूबे, मगनीराम, रामदत्तमिश्र और रामप्रसाद प्रमुख थे।
५. चम्पारन की साहित्य-साधना (वही), पृ० १९।
६. मैथिली-गीत-रत्नावली (वही) पृ० ७९।
७. इस समय मिथिला में साहित्य-शास्त्र के अप्रतिम विद्वान् है।

उदाहरण

(१)

कनकलता सन तनुवर धनिश्राँ, चिकुर रचल जलधर विनु पनिश्राँ,
चाहए राहु गरासए विनु दोषेँ छाड़ए रेकी।
अमल कमल-दल सरस नयनमा, चातक शुक पिक मधुर बएनमा,
नहि कुचभार सम्हारए बेरि बेरि लचकए रेकी।
मदन वेदन तन कोमल धनिश्राँ, नाकहिँ वेसरि पहिरु भुलनिश्राँ,
लगइछ मदन महीपति फाँसिहु लटकल रेकी।
कविवर 'निधि' भन सुनहु सजनमा, आए मिलति मनजनु करि खिनमा,
सकल कला परिपूरलि मनहुक जूड़लि रेकी॥[१]

(२)

प्रेयसि! न करिअ प्रेम मलान।
सब तहँ सार समय मधुयामिनि कामिनि! परिहरु मान।
मनसिज मरम सताब सबहु खन छन छन हरए गेआन॥
नयन चाष तुल, नासा तिल-फुल, नीरज वदन विराज।
कटि केहरि सन अनुखन हर मन नहि दुर करइ वेआज॥
सामर चिकुर कपोल सोहाओन अधर चिबुक अभिराम।
जनि मनमथ निअकर कुच विरचल कनक कमल अनुपाम॥
कोकिल विकल वचन तुअ सुनि सुनि गति लखि विकल मतङ्ग।
विकसित वदन रदन अनुमापिअ जनि शशि दामिनि सङ्ग।
विष्णुसिंह नृप रस बुझ मैथिल-नवशिरमनि वश भेल।
'निधि' निरधन जनि मिलल महग मनि हँसि परिरमाय लेल॥[२]

❀

पण्डितनाथ पाठक[३]

आपका जन्म गया जिले मे, जहानावाद से तीन कोस दक्षिण मुहम्मदपुर ग्राम मे हुआ था।[४] आप टेकारी के राजा मित्रजीतसिंह के दरबारी पडित थे। वहाँ आप अध्यापन-कार्य भी करते थे। आपके पास लगभग ३०० विद्यार्थी पढते थे। आपने अपने घर पर भी एक पाठशाला स्थापित की थी जिसमे विद्यार्थियो के भोजनादि का प्रबध आपने चन्दे से किया था।

---

१. मैथिली-गीत-रत्नावली (वही), पद स० ५५, पृ० ३१-३२।
२. वही, पद स० ५७, पृ० ३२-३३।
३ आपका जीवन-परिचय बाबू रामदीनसिंह ने अपने 'बिहार-दर्पण' में लिखा था। देखिए, पृ० १६७-१७२।
४. वही, पृ० १६७।

आपका पुत्र लक्ष्मीनारायण पाठक पढने-लिखने मे जी नही लगाता था। वह 'बिरहा' 'खेमटा', 'आल्हा' आदि गाता-फिरता था। अतएव उसे पढाने के लिए, आपने सम्पूर्ण सारस्वत-व्याकरण का बिरहा आदि छदो में अनुवाद करके उसे गाने के लिए दे दिया। इस युक्ति से उसने विद्याध्ययन की ओर ध्यान दिया और कुछ ही दिनो में वह पण्डित होकर टेकारी-राज-दरबार मे रहने लगा। आपकी इस चतुरता की बात सुनकर राजा मित्रजीत-सिंह ने आपको एक हजार रुपये का पारितोषिक दिया और अपने दरबारी पडितो से 'पंडित-प्रवर' की उपाधि दिलाई। आप १८४० वि० (१७८३ ई०) में परलोक सिधारे।

आपकी रचना का उदाहरण नही मिला।

❀

प्रतापसिंह

कुछ विद्वानो ने आपका उपनाम 'मोदनारायण' बतलाया है।[1]

आपने मिथिला पर सन् १७६१ से ७६ ई० तक शासन किया था। आपका राज-दरबार कवियो का एक बहुत बडा केन्द्र कहा जाता है।[2]

आप व्रजभाषा और मैथिली के कवि थे। १८३२ वि० (१७७५ ई०) मे व्रजभाषा मे रचित आपका एक काव्य-ग्र थ 'राधागोविन्द-सगीत-सार' मिलता है।

उदाहरण

जमुना तीर कदम तर हे, एक अतरज देखी।
तड़ित जलद जनु अवतरु हे, एक रूप विसेखी॥
राधा रूप मगनि भेलि हे, कर धै हरि आनी।
कतेक जतन कटु भाखिय हे, नहिं बोलथि सयानी॥
अनुपम लोचन खञ्जन हे, बाँकहु हरि हेरी।
बदन बसन अभिनत कै हे, मुसुकलि एक बेरी॥
काम कला गुन आगरि हे, बैसलि मुख फेरी।
रङ्क समान फिरथि हरि हे, जनि रतनक ढेरी॥
थिर नहिं रहत मुगुध मन हे, जौबन जग साले।
आली गन रस पसरल हे, पुलकित बनमाले॥
नृपति प्रताप मन अवतरु हे, नवतरु पचमाने।
मोदनराएन मन दए हे, से आमे रस जाने॥[3]

---

१. मिश्रबन्धु-विनोद (वही, द्वितीय-भाग, द्वितीय स०, १९८४ वि०), पृ० ८११।

२. आपके दरबारी कवियों में हरिनाथ झा तथा केशव झा प्रमुख थे।

३. A History of Maithili literature (वही), P. 414,

प्रियादास

आपका निवास-स्थान पटना था।[१] जीवन के अन्तिम दिनो मे आप वृन्दावन चले गये थे। आपके पिता का नाम श्रीनाथ था, जो राधावल्लभी सम्प्रदाय मे दीक्षित थे। हिन्दी मे आपने छह पुस्तको की रचना की थी—(१) प्रियादासजी की वार्त्ता (२) स्फुटपद-टीका (३) सेवा-दर्पण (४) तिथि-निर्णय (५) भाषा-वर्षोत्सव और (६) चाहबेल।

आपकी रचना का कोई उदाहरण नही मिला।

❋

बालखंडी

आपका वास्तविक नाम 'रामप्रेम साह' था। कहते है, आपके बाल-विवाह कर लेने पर आपके गुरु ने आपका यह नाम रख दिया।

आपका जन्म १८४३ वि० मे महाराजगज, पिपरा (गोविन्दगज) के एक सम्पन्न परिवार मे हुआ था।[२] आपने रामचरित-मानस के पाठ से अपना विद्याध्ययन आरम्भ किया था। पीछे आपने सस्कृत का भी अध्ययन किया। आपके दीक्षा-गुरु थे हरिहरपुर के हरलालबाबा। चामत्कारिक शक्ति मे आप अपने गुरु से भी बढे-चढे थे। आपका निर्वाण १९४२ वि० मे हुआ।[३]

भोजपुरी में आपके रचित कुछ फुटकर पद मिलते है।

उदाहरण

धीरे धीरे धीरे चलु सैंया के नगरिया।
अजपा जाप उठत अभि-अन्तर लागि गइली हो मोरि उलटी नजरिया।
पियत अमिय रस मौन भइल मन चढि गइली हो मैं तो गगन अटरिया।
बाजे अनहद धुनि नाचै सखि पांचो लागि गइले हो जहाँ प्रेम बजरिया।
स्वामी हरलाल महिमा बालखंडी गावे दिहनी लखाय सतगुरु के डगरिया।
धीरे धीरे धीरे चलु सैंया के नगरिया।[४]

❋

बुद्धिलाल

आप मिथिला-निवासी[५] और मिथिला-नरेश महाराज राघवसिंह (सन् १७०४-१७४० ई०) के दरबारी कवि थे। आपने मैथिली मे कुछ पदो की रचना की थी।

---

१. मिश्रबन्धु-विनोद (वही, तृतीय-भाग, द्वितीय स०, १९८५ वि०), पृ० ६८४।
२. चम्पारन की साहित्य-साधना (वही), पृ० ४३।
३. आपके पश्चात् आपके २३ शिष्य हुए।
४. चम्पारन की साहित्य-साधना (वही), पृ० ४४।
५ A History of Maithili literature (वही), P. 408.

उदाहरण

कतय रहल मोर माधव ना। तनि विनु कत दुख साधव ना॥
हरि हरि करु व्रजनागरि ना। चिकुर फुजल लट झाँपल ना॥
शिरसो खसलि कालि नागिनि ना। चिहुँकि उठलि नव कामिनि ना॥
फुलल कमल उर जागल ना। ताहि पर यौवन भारी ना॥
'वुद्धिलाल' कवि गाग्रोल ना। 'राघवसिंह' रस बूझल ना॥[1]

बेनीराम

आपका जन्म-स्थान हजारीबाग जिले का रामगढ[2] नामक स्थान था। पीछे आप उसी जिले के 'इचाक' नामक स्थान मे आकर बस गये। आप रामगढ के राजा शभुनाथसिह के दरवारी कवि थे। आपने 'प्रेम-प्रकाश', 'सीता-सौरभ-मजरी'[3], 'कालिका-मंजरी' आदि अठाईस काव्य-ग्रथो की रचना हिन्दी मे की थी। आपकी छोटी एव स्फुट रचनाओ की सख्या तो और अधिक कही जाती है।

उदाहरण

सुनत जानकी बचन उठै तब मारुत नन्दन।
वैदेही चरनारविन्द बन्देउ जगवन्दन॥
सुरगिरि सरिस विशाल बाल रविछवि तन छाजै।
सिंह ध्वनि वरवारि धरि रन अंगन गाजै॥
पवन वेग नभ में चढै योजन लच्छ प्रमाण गय।
रवि रथ ढिग रथ भरत के, चक्रपात भरमत चितय॥
कूदि चढे रथ माँह भार विश्वंभर धरिकै।
मारुत चक्रावर्त्त मध्य रोक्यो बल करिकै॥
जंत्रित कीन्हों जोर रथ वान्यो हनुमाना।
उल्कापात समान भूमि ल्यायो बलवाना॥
जय जनक सुता श्रीराम जय, रह्यो प्रभंजन-सुत मुदित।
साधु-साधु हनुमान कहि, भरत गहै अंकम सुखित॥[4]

❀

---

१. मिथिलागीत-सग्रह (वही, प्रथम भाग), पद स० ३२, पृ० २४-२५।
२. 'जन्मभूमि हैं रामगढ़ अब इचाक में धाम'—परिषद् के हस्तलिखितग्रथ-अनुसंधान-विभाग में सुरक्षित 'सीता-सौरभ-मंजरी' से।
३. इस ग्रथ की एक हस्तलिखित-प्रति बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् (पटना) के हस्तलिखितग्रथ-अनुसधान-विभाग में है। उसमें उसका रचना-काल १९०२ वि० (१८४५ ई०) लिखा है। वह 'अद्भुतरामायण' के आधार पर लिखा जाकर १५ सर्गों में पूरा हुआ है।
४. परिषद् में सुरक्षित हस्तलिखित 'सीता-सौरभ-मंजरी' से।

ब्रह्मदेवनारायण 'ब्रह्म'

आप नयागाँव (सारन) के निवासी थे।[1] आपका जन्म सन् १७८६ ई० मे हुआ था। 'बटोहिया' के सुप्रसिद्ध कवि स्व० रघुवीर नारायण आपके ही वंशज थे। आपने भक्ति-योग-सम्बन्धी कुछ फुटकर पदो की रचना खड़ीबोली और भोजपुरी मे की थी।

उदाहरण

नहिं दुख रहत जपत पद पंकज, शरण लगावत बालक जानी।
यद्यपि जगत कुपुत्र जनम लइ, तदपि कुमातु न होत भवानी॥
विधि दुख लिखे कपाल सों मेटत, जो एक बार कहे शिवरानी।
'ब्रह्म' अजान अधम को तारहु, दे जननो पद मुक्ति निसानी॥[2]

※

भंजन कवि

आपको 'कविशेखर' की उपाधि प्राप्त थी।

आप मिथिला-निवासी[3] और मिथिला-नरेश महाराज राघवसिंह (सन् १७०४ से १७४० ई०) के आश्रित कवि थे।

आपने मथिली मे बहुत से पदो की रचना की थी।

उदाहरण

(१)

इ जँ हम जनितहुँ तनि तहँ, होएत विरह दुख भार
अङ्कम भरि हरि धरितहुँ, करितहुँ, हृदयक हार॥
नत भए हँसि किछु कहितहुँ, रहितहुँ सुख निशि धाम।
जनम कृतारथ लेखितहुँ, देखितहुँ मुख अभिराम॥
कर गहि कण्ठ लगबितहुँ, गबितहुँ मेघ मलार।
घन दामिनि भए जुटितहुँ, लुटितहुँ जग-सुख-सार॥
आड आड नहि अँटितहुँ, जहितहुँ प्रेम शरीर।
एतेक अतनु नहि करइत, ढरइत नहि हग नीर॥
पलओ न कल तन लीतहुँ, दीतहुँ साजि तमोर।
सम्मुख भय नहि सकितहुँ, तकितहुँ लोचन कोर॥
कह कवि 'भञ्जन' निश्च मत, रसमत मिलत मुरारि।
तिलओ मलिन मन न करह, धैरज धरु अवधारि॥[4]

---

१. श्रीअवधेन्द्रदेव नारायण (नयागाँव, सारन) के द्वारा प्रेषित सूचना के आधार पर।

२. वही।

३. मैथिली-गीत-रत्नावली (वही), पृ० ७८।

४. वही, पद सं० ४७, पृ० २६ २७।

(२)

जइतहिं देखल त्रिलासिनि रे, उर मोतिम हारा।
शरद रैनि कत झाँपब रे, जगमग करु तारा।
तुअ भओँह रूप कहब कत रे, तोहि दुहु भओँह आरा।
तोहि सन एहि युग नहि केओ रे, विधि रचल अपारा।
चामरु एहि युग लौथिक रे, शिर फूजल केशे।
फुजि गेल मधुरि कमल वह रे, आननिक प्रकाशे।
'भंजन कवि' इहो गाओल रे, अब दुरि करु माने।
तिल भरि सम्मुख हेरिअ रे, अब राखिअ प्राने।[१]

❀

भवेश

आप दरभगा जिले के भट्टपुरा ग्राम-निवासी थे।[२] मैथिली मे आपकी कुछ कविताएँ विभिन्न सग्रहो मे प्राप्त होती है।

उदाहरण

कहओ कुशल इहो वायस सजनी न थिक पथिक परथाव।
वनि हम केहन समामम सजनी राँक रतन की पाव॥
रहओ लाख लोक पहु बिनु सजनी मोर सुख विसरल हास।
उगओ नखत कत शशि बिनु सजनी कुमुद न होअ परगास॥
दहओ देह विरहानल सजनी हृदय नेह नहि हानि।
जइओ दहन वह सम्पुट सजनी कनकन उपजु मलानि।
करओ मदनशर वेदन सजनी मोर मन हो न उदास।
हरिन हिमकर परिहर सजनी सह वरु राहु-गरास॥
एखनुक सन जँ तहखन सजनी न तेजए विरह बेआधि।
तें जनु दएह जलाञ्जलि सजनी निर निरवधि उठ धाधि॥
कवि 'भवेश' मन मन दए सजनी गुणमति मति नहि आन।
भिजओ वरख लख सागर सजनी कोमल न होअ पखान॥[३]

❀

---

१. प्रो० ईशनाथ झा (दरभगा) से प्राप्त।
२ मैथिली-गीत-रत्नावली (वही), पृ० ८०।
३. वही, पद स० ५८, पृ० ३३।

(स्वामी) भिनकराम

आपका जन्म 'राजापुर-भेडियाही' से उत्तर सहोरवा-गोनरवा (चम्पारन) मे हुआ था।[1] कहते है, कबीरसाहब के ४८४ शिष्य थे। उन्ही की वशावली मे आप हुए। आप जाति के 'ततवा' थे।

आपके शिष्यो मे प्रमुख थे ककालिनमाई (सिमरौनगढ, नैपाल-तराई) के मनसाबाबा। आप सरभग-सम्प्रदाय के प्रमुख सत-कवि थे। आपने इस सम्प्रदाय मे एक नया पथ ही चलाया, जो 'भिनक-पथ' के नाम से प्रसिद्ध हुआ।[2] आपकी रचनाएँ भोजपुरी मे मिलती है।

उदाहरण

(१)

आगि लागे बनवा जरे परबतवा,
मोरे लेखे हो साजन जरे नइहरवा।
आवऽ आवऽ बभना बइठु मोर अँगना
सोचि देहु ना मोरा गुरु के अवनवा॥
जिन्हि सोचिहें मोरा गुरु के अवनवा,
तिन्हे देबों ना साजन ग्यान के रतनवा॥
नैना भरि कजरा लिलार भरि सेनुरा,
मोरा लेखे सतगुरु भइले निरमोहिया॥
सिरि भिनकराम स्वामी गावले निरगुनवा,
धाइ धरबों हो साधु लोग के सरनवा॥[3]

(२)

तोहर बिगड़ल बात बन जाई, हरिजी से लगि रहऽ हो भाई।
उलटि के पवन गवन कर भवन में, निरमल रूप दरसाई॥
दरसन के सुख पावे नयनवा, निरखत रूप लोभाई।
प्रेम के पलरा धीरज कर डडी, सुरति को नाथ पहिराई॥
निरगुन नाम तौलों दिन राति, सुंन मे सहर बसाई।
कहे सिरी भिनकराम गुरु मिलै हकीम, जिन मोहि अम्रित पिआई॥
मुआ से जिआ कइ डारे, हंस अमर पद पाई॥[4]

※

१. सतमत का सरभग-सम्प्रदाय (वही), पृ० १४०-४१। यह स्थान बेरगनियां के निकट स्थित राजपुर से लगभग १६ मील पर है। वहीं आपकी समाधि भी है।
२. इस पंथ के मठ चम्पारन के अतिरिक्त पटना, शाहाबाद, बलिया आदि जिलों में भी हैं।
३. भोजपुरी के कवि और काव्य (वही), पृ० १२२।
४. सतमत का सरभग-सम्प्रदाय (वही), पृ० ८४।

भीखमराम

आपका वास्तविक नाम भीखामिश्र था।

आप चम्पारन जिले के माधोपुर नामक ग्राम के निवासी ब्राह्मण[१] थे। कहते है आपके पूर्वज पहले सारन-जिला के सरयू-तट पर 'गडखा' के आसपास किसी ग्राम मे रहते थे, जहाँ से पीछे चम्पारन आये।

आप दो भाई थे। छोटे भाई का नाम काशीमिश्र था। आपके एकमात्र पुत्र राम-नेवाजमिश्र भी साधु हो गये। आपमे बाल्यावस्था से ही वैराग्य के सभी लक्षण वर्त्तमान थे। बडे होने पर गरीबी के कारण खेत गोडने का काम करके जीवन व्यतीत करते थे।

कहते है, आप नियमित रूप से नित्य शाम को भोजन के पश्चात् केसरिया (चम्पारन) के पास 'नारायणी' के सत्तर-घाट के निकट 'सेमराहा' मे अपने गुरु बाबा प्रीतमराम के पास चले जाते थे।[२] बाबा प्रीतमराम के देहावसान के पश्चात् वृद्धावस्था मे आपने जगन्नाथपुरी आदि तीर्थो का पर्यटन किया।

तीर्थाटन से लौटते समय मार्ग मे, मुजफ्फरपुर मे, घर आने पर आपमें विचित्र परिवर्त्तन हो गया। आपकी नीद जाती रही और दिन-रात बैठकर ही समय बिताने लगे। पहले अन्न और फिर फल का भी त्याग कर बिलकुल निराहार रहने लगे।

आप पहले वैष्णव थे। पीछे शान्ति के अभाव मे सरभग-सम्प्रदाय मे दीक्षित हुए।[३] कुछ लोगो के कथनानुसार आप जीवन के अन्तिम दिनो मे शैव हो गये थे। कहा जाता है, आप तन्त्र-मन्त्र के भी बडे साधक थे। आपके शिष्यो मे प्रमुख थे—टेकमनराम[४] और हरिहरराम।

आप सिद्ध तथा चमत्कारी पुरुष थे। आपके विषय मे अनेक किंवदन्तियाँ प्रसिद्ध है।[५] जब आपके गाँववालो ने आपको बहुत ही तग करना आरम्भ किया, तब आपने माघ सुदी तृतीया को जीवित समाधि ले ली।[६] आपके मठ मोतिहारी, बिरछेस्थान, तुरकौलिया कोठी, जगिरहा कोटवा आदि स्थानो में है।

आपकी लिखी 'बीजक' नामक पुस्तक प्रसिद्ध है।[७] आपके पदो मे शिव, शक्ति और विष्णु की समान वन्दना है।

---

१. सतमत का सरभग-सम्प्रदाय (वही), पृ० १४२।

२. किंवदन्ती है कि अपने शिष्य को नित्य आते देखकर बाबा प्रीतमराम अपने ग्राम सेमराहा से अपने शिष्य के ग्राम माधोपुर में ही आकर बस गये। आज भी बाबा प्रीतमराम की समाधि माधोपुर में है।

३. आश्चर्य की बात है कि आज आपके वंशज आपको सरभगी नहीं मानते।

४. इनका परिचय इसी पुस्तक में यथास्थान मुद्रित है।

५. आपके विषय में किंवदन्तियों और चमत्कारपूर्ण-कथाओं के लिए देखिए—'सतमत का सरभग-सम्प्रदाय' (वही), पृ० १४२, १४३ तथा १४८।

६. इस स्थान पर आज भी उक्त तिथि को मेला लगता है।

७. यह पुस्तक राजाभाट (सुगौली से गोविन्दगंज जानेवाली सड़क के निकट)-निवासी टेनाराम नामक व्यक्ति के पास है।

उदाहरण

हंसा करना नेवास, अमरपुर में।
चलै ना चरखा, बोलै ना ताँती
अमर चीर पेन्है बहु भाँती ॥ हंसा० ॥
गगन ना गरजै, चुए ना पानी
अमृत जलवा सहज भरि आनी ॥ हंसा० ॥
भुख नाहीं लागे, ना लागे पियासा ;
अमृत भोजन करे सुख बासा ॥ हंसा० ॥
नाम भीखम गुरु सबद विवेका।
जो नर जवे सतगुरु उपदेसा ॥ हंसा० ॥[1]

✻

मनबोध

आपका दूसरा नाम 'भोलन' था।

आपका जन्म-स्थान दरभगा जिले का कोई 'मँगरौनी'[2], कोई 'जमसम'[3] और कोई 'भराम'[4] नामक ग्राम मानते है। डॉ० ग्रियर्सन के मतानुसार आपका जन्म-स्थान 'जमसम' मे ही होना ठीक ज्ञात होता है।[5] आपका विवाह भिखारी नामक व्यक्ति की पुत्री से हुआ था। डॉ० ग्रियर्सन के अनुसार आप सन् १७८८ ई० (११९५ फसली सं०) मे नि.संतान मरे।

प्रसिद्ध है कि आपने सम्पूर्ण 'हरिवश'[6] का मैथिली मे अनुवाद किया था, जिसके कुछ अश उत्तर-मिथिला मे बहुत प्रचलित है। आपने कुछ स्फुट गीतो की भी रचना की थी, जो यत्र-तत्र प्राप्त होते है।

---

१. भोजपुरी के कवि और काव्य (वही), पृ० ११९।
२. A History of Maithili Literature (वही), P. 452.
३. मैथिली-गीत-रत्नावली (वही), पृ० ७८।
४. मिथिला-मिहिर मिथिला के (वही), पृ० ६६।
५. Journal of the Asiatic Society of Bengal (Vol. LI, Part I, 1882), P. 129. यह स्थान दरभगा के मधुवनी सबडिवीजन में स्थित प्रसिद्ध ग्राम 'पण्डौल' के निकट है।
६. किसी-किसी हस्तलिखित प्रति में इस ग्रथ का नाम 'हरिचरित' और किसी में 'श्रीकृष्णजन्म' भी लिखा है। 'श्रीकृष्णजन्म' के नाम से आपकी ही पुस्तक राज यूनियन प्रेस से प्रकाशित हुई थी। सम्भवतः इसी के एक अश (दस अध्यायों) को सम्पादित कर डॉ० ग्रियर्सन ने १८८२ ई० में Journal of the Asiatic Society of Bengal में प्रकाशित किया था। आगे १८८४ ई० के उसी 'जर्नल' में उन्होंने इसका अँगरेजी-अनुवाद भी प्रकाशित कराया। म० म० डॉ० उमेश मिश्र ने भी १९३४ ई० में इस ग्रथ का सम्पादन किया था।

उदाहरण

(१)

सारद ससधर जगमग राति। देखि हरि गेलाह मनोरथ माति ।। १ ।।
राधा पदुमिनि महरो आएलि। एक जुथ संग फूला को लाएलि ॥
ब्रिन्दावन भए कहु भेल रास। ओहि दिन राति ओतहि भेल बास ।।
दुइ गोपिक बिच एक मुरारि। दुइ कृष्णक बिच एकहोँक नारि ।।
एँ परि रासक मडल भेल। क्यो कहओ निसिजुग बिति गेल ।। ५ ।।
रासक रस हरि छल बड़ मगन। से रस असुर कएलअन्हि भगन ॥
गोबर गौँत सगर लपटाएल। बल बस गाए सत बितहि आएल ॥
मुन्दले आँखि दहो दिस दौड़। परबत सन उच कान्ह कन्हौर ।।
ओहन बरद गोट कोनहुँ न दापि। देखि रहल सम क्यो गेल काँपि ।।
सिङ्घ नाद कै हरि हलु डाटि। लागल फेकए पाछु कै साटि ।। १० ।।[१]

(२)

देखब कोन भाँती।
जम जिव मोर कपइछ कर धर करु मोहि साथी ।।
विषम विषय रस वसि रहलहु वयस सगर बीति गेला ।।
असरण सरण चरण हम सेवल मधुकर भय नहि भेला ।।
सपनहु जिव-जिव जीव नहिं भजलहु ने भजलहु भगवाने ।।
केसरि बीज ऊसर छिरिआओल छग थिक हमर गेआने ।।
दुहु कर जोड़ि विनति अभिनव भय कवि 'मनबोध' इहो भावे ॥
मोर अपराध मानि सरणागत ताहि जेहन मोन आवे ।।[२]

*

महीपति

आप मिथिला-निवासी थे। आपने मैथिली मे स्फुट पदो की रचना की थी, जिनमे से कुछ लोक-कठ मे मिलते है।

उदाहरण

पचसर लए सर साज ना, कि कहब पहुना समाज ना ।।
हरि हरि करु कत बेरि ना, मुरुक्षि खसु पथ हेरि ना ॥
आएल जमुना जल बाढि ना, भेलहुँ कदम तर ठाढि ना ।।
आब कि करब सिर धूनि ना, कोकिल कलरव सूनि ना ।।
कवि महिपति इहो भान ना, जगत बन्धु रसजान ना ।।[३]

*

१. Journal of the Asiatic society of Bengal (वही), P. 140.
२. A History of Maithili Literature (वही), P. 420.
३. Journal of Asiatic Society of Bengal (vol. 53, Part I, 1814, Supl No) P. 85,

माधव नारायण

आपका उपनाम 'केशव' या 'केशव कवि' था।

आप मिथिला-निवासी[1] और मिथिला-नरेश महाराज प्रतापसिंह (सन् १७६१-७६ ई०) के दरबारी-कवि थे। आपकी कोई रचना उपलब्ध नही हुई।

※

मानिकचद दूबे

आप शाहाबाद जिले के बनगाई नामक ग्राम के निवासी थे।[2] किन्तु आप अधिकतर अपने चचेरे भाई अनूपचन्द के साथ डुमरॉव-दरबार मे ही रहते थे। वहॉ के नरेश ने आपको अगडेर ग्राम पारितोषिक मे दिया था, जिसकी तहसील छह हजार रुपये सालाना थी। आपके पिता का नाम ज्ञान दूबे था। आपका जन्म १८१५ वि० (१७५८ ई०) में हुआ था। आप संगीत के मर्मज्ञ विद्वान्, गायकाचार्य और कवि हुए। आपने संगीत-शास्त्र तथा संस्कृत-साहित्य की शिक्षा काशी मे, एक दक्षिणी पडित से पाई थी। एक बार वीणा के विशेषज्ञ निरमोलशाह से प्रतियोगिता मे आप विजयी भी हुए थे।

आपकी मृत्यु ९७ वर्ष की आयु मे १९१२ वि० (१८५५ ई०) मे हुई थी।

उदाहरण

काफी तू विचारी मूलतानी भगरे किये री, सुर ठीक नाहीं यह कान्हरा के प्रान में।
मालकोशहू ने आये नायिकी ज्यो चद्र मानी, औ अनेक होत रहे पूर्वी विवान ने।
सुख को विभास करे दीपकी सरस अंग, गौरी मेघवासर है ललित मिलान में।
सारगहू के समय सुघरी तू काहे आहे, मोहन सो लाग मन मजा नहिं मान मे।[3]

※

मुकुन्दसिंह

आप रामगढ़ (हजारीबाग) के निवासी[4] और उसी स्थान के महाराजा दलेलसिंह के पौत्र और रुद्रसिंह के तृतीय पुत्र थे। आपने सन् १७७० ई० के लगभग ६ राज्यो को रामगढ़-राज्य में मिला लिया था। आप अपने पिता तथा पितामह की भॉति एक कुशल कवि हुए।

हिन्दी में आपकी लिखी दो पुस्तके मिलती है—'पुरुषोत्तम-प्रादुर्भाव' और 'रघुवश'। आपकी रचना का कोई उदाहरण नही मिला।

※

---

1. मिश्रबन्धु-विनोद (वही, तृतीय-भाग, द्वितीय स०, १९८५ वि०), पृ० ९९५।
2. श्री भगवतीप्रसाद शुक्ल (राजराजेश्वरी हाई स्कूल, गुप्तपुर, शाहाबाद) से प्राप्त सूचना के आधार पर।
3. वही। इसमें अधिकतर विभिन्न रागों का ही नामोल्लेख है।
4. श्री हृषीकेशनारायण भटनागर (इचाक, हजारीबाग) से प्राप्त सूचना के आधार पर।

मोदनारायण

आप मिथिला-निवासी और मिथिला के राजा प्रतापसिंह (सन् १७६१-७५ ई०) के आश्रित कवि थे।[१]

आपने मैथिली मे काव्य-रचना की थी, जिनमे से कुछ लोक-कंठ मे उपलब्ध हैं।

उदाहरण

(१)

जमुना तीर कदम तर हे, एक अतरज देखी।
तडित जलद जनु अवतरु हे, एक रूप विसेखी॥
राधा रूप मगनि भेलि हे, कर धै हरि आनी।
कतेक जतन कटु माखिअ हे, नहिँ बोलथि सयानी॥
अनुपम लोचन खञ्जन हे, बाँकहु हरि हेरी।
बदन बसन अभिनत कै हे, मुसुकलि एक बेरी॥
काम कला गुन आगरि हे, बैसलि मुख फेरी।
रङ्क समान फिरथि हरि हे, जनि रतनक ढेरी॥
थिर नहिँ रहल मुगुध मन हे, जौबन जग साले।
आलींगन रस पसरल हे, पुलकित बनमाले॥
नृपति प्रताप मन अवतरु हे, नव तरु पचमाने।
मोदनराएन मन दए हे, से आमे रस जाने॥ १ ॥[२]

※

रघुनाथदास

आपका निवास-स्थान पहले ब्रह्मपुरा (मुजफ्फरपुर) था, पीछे आप विभिन्न स्थानो का भ्रमण करते रहे।[१] कुछ काल तक आप गण्डकी-नदी के तीर पर 'पानापुर' मे भी रहे। यो, जनक-नन्दनी सीताजी की जन्मभूमि के समीप बागमती-नदीतटस्थ पुण्डरीक मुनि के आश्रम पर भी कुछ समय तक पर्णकुटी निर्माण कर आपके रहने का उल्लेख मिलता है। आपके जीवन के अन्तिम दिन जिस स्थान पर बीते थे, उस स्थान का नाम आपने ही 'राघोपुर-बखरी' रखा था।[३]

आप एक बहुत बड़े भजनीक, योगी एव साधक थे। आपके गुरु थे नन्दूरामदास[४] जी। आपके सम्बन्ध मे कई चमत्कारपूर्ण कथाएँ प्रसिद्ध है।[५] आपके कितने

---

१. मैथिली-गीत-रत्नावली (वही), पृ० ८३।

२. Journal of the Asiatic society of Bengal (Vol. 53, Part I, 1884, Spl No.), P. 82-83

३. देखिए, शब्दसहिता-वाणी-प्रमोद (वही, भूमिका), पृ० क-ख।

४. इनका परिचय इस पुस्तक में यथास्थान मुद्रित है।

५. इस प्रकार की कथाओं के लिए देखिए—वही।

ही शिष्य हुए, जिनमे प्रमुख थे मौजीराम दास, जिज्ञासी राम, हरिनामदास तथा कृष्णदास। इनमे अन्तिम दोनो बड़े प्रसिद्ध महात्मा हुए। कहते हैं, दरभंगा-नरेश महाराज प्रताप-सिंह आपके समकालीन थे। उन्होंने आपको फाल्गुन सुदी १५ फसली सन् ११७१ मे ६०० बीघे जमीन दी थी। आप आश्विन वदी फसली सन् ११९३ में परलोक सिधारे।

आपकी कोई भी स्फुट रचना नही मिलती। आपने अपने गुरु नन्दूरामदासजी की प्रारम्भ की हुई पुस्तक 'शब्द-संहिता-वाणीप्रमोद' को पूरा किया था। अत उसी में आपकी रचनाएँ सगृहीत हैं।

उदाहरण

(१)

सोई नर श्रोता ज्ञानी पंडित गुणवंत सोई, सोई धनवंत शूर भजत भगवंत है।
सोई जातिवंत अरु पांतिन्ह प्रसिद्ध सोई, सोई सुन्दर सुवंत सोई वेदन्त सुतंत है।
सोई विद्यमान कल्याण के भाजन सोई, सोई सुयशवान जाहि वरणत सुसन्त है।
सोई सब लक्षण विलक्षण रघुनाथ दास आश जाके रामपद पकज अनन्त है।।[१]

(२)

सुनह वचन सखि! मनदए दहए चहए तनु आज।
पवन परस तरसए जिव, मदन दहन शर साज॥
कोन परि उवरब हरि हरि, धैरज धरि धरि लाख।
छन छन तन अवसन होअ, सखि ने जिउति सखि भाख॥
सखि सेज रचल नलिनि दल, तैँ हुँ तन होअ अवसान।
वन कुहुकए घन पिकरव, सुनि सुनि दह दुहु कान॥
कि करब धुनि सुनि पिक रव, पिक रव मोहि न सोहाए।
हहरि हहरि खसु हिरदय, निरदय अजहुँ न आए॥
धरम करम बिछुडल मोर, पुरुब कएल कोन पाप।
धैरज सब तँहें वहथिक, रस बुझु नृपति प्रताप॥[२]

※

रमापति उपाध्याय

आप मिथिला-निवासी और मिथिला के महाराज नरेन्द्रसिंह (सन् १७४४-६१ ई०) के आश्रित कवि थे।[३] आपके पिता का नाम कृष्णपति झा था। वे स्वय भी एक कवि थे। आपका विवाह महाराज नरपति ठाकुर के पुत्र ठाकुरसिंह की पुत्री से हुआ था।

आपने 'हरिवंश-पुराण' के आधार पर छह अंको के एक नाटक की रचना की थी, जो 'रुक्मिणी-परिणय', 'रुक्मिणी-हरण', 'रुक्मिणी-स्वयवर' आदि नामों से प्रसिद्ध है।

१. शब्द-संहिता-वाणी-प्रमोद (वही), पृ० १६६।
२. मैथिली-गीत-रत्नावली (वही), पद स० ७७, पृ० ४५।
३. A History of Maithili Literature (वही), P. 411.

उदाहरण

(१)

प्रथमहिँ, ओ रे, ससि मुखि परिजन मुख सुन ।
ओ की, तुअ गुन अनुछन नेह उपज दुन ॥
विधि वस, ओ रे, वदन इन्दु तुअ देखि धनि ।
ओ की, मेलि जनि प्रेम पयोनिधि निगमनि ॥
अकमित, ओ रे, कोकिल पञ्चम कल धुनि ।
ओ की सेह सुनि पुनु पुनु मुरुछ दुसह गुनि ॥
तलपहिँ, ओ रे, अति कोमल नलिनी दल ।
ओ की, विअ भल परम दगध होअ अनुपल ॥
अवधिहुँ, ओ रे न मिलत जदि निरदय हरि ।
ओ की, छन भरि न जिउति आलि कोनहु परि ॥
सुनु धनि ओ रे, सुमति रमापति बुझि कह ।
ओ की, थिर रह पुरत मनोरथ हरि तह ॥ १० ॥[१]

(२)

गिरिवर लीन मलीन निशाकर अलप नखत नहि भासे ।
मुनित कमलवनि किए नहि तुअ धनि ! नयन सरोज विकासे ।
ओगे मानिनि !
सुरपति दिशि अनुराग देखिअ धनि ! तहओ ने तोहि अनुरागे ।
तुअ मानस परसन नहि सुन्दरि ! अम्बर परसन लागे ॥
तुअ मुख मौन विचारि कलावति ! पिक पञ्चम करु नादे ।
पिञ्जर कीर धीर मृदु भाखए तैँ होअ परम विषादे ॥
इन्दु मृणाल अमिय सरसीरुह, तुअ तनु कए निरमाने ।
मानस कुलिश चलिस तुअ विरचल, तहि न होअ अनुमाने ॥
बिसरिअ दोस, रोस सब दुरि कए, वचन अमिअ कह वाने ।
निशि-अवसान मान नहि राखिअ, सुमति 'रमापति' भाने ॥[२]

※

१. Journal of the Asiatic Society of Bengal (Vol 53, Part I, 1884, Spl No), PP 83-84
२. मैथिली-गीत-रत्नावली (वही), पद सं० ६२, पृ० ३५-३६ ।

राधाकृष्ण

कविता मे आप अपना नाम 'कृष्ण' भी लिखते थे ।

आपका निवास-स्थान जयनगर (दरभगा) था।[1] आप सगीत-विद्या-विशेषज्ञ और कवि थे। आपकी एक पुस्तकाकार-रचना 'राग-रत्नाकर' मिलती है, जिसमे सगीत के अनेक विषयो का विवरण है।[2]

उदाहरण

(१)

जुग याम निशा घनघोर छयो अंधियार घनौं सरसावत हैं ।।
रति सी रमणी रति मन्दिर में पति केलि कलानि रिझावत हैं ।।
शिर भूषण की प्रतिज्योति जगी द्युति भाम मनो दरसावत हैं ।।
यह दीपक-राग महाछबि सों लखि दीपक हूँ सकुचावत हैं ।।[3]

(२)

प्रात समय प्यारी उठि ओढी सेत सारी भारी फैल मुखचन्द की उजारी ज्योति जागनी ।
गोरे भुजमूल सिव पूजिके चढ़ाय फूल दोऊ करताल लै बजावै प्रेम पागनी ।
अहो उर लाल कंज लोचन विशाल बाल फटिक सिंहासन पै बैठी बड़ भागिनी ।
गावत कैलाश के बिलास मे हुलास भरी भैरवी बखानी यह भैरव की रागनी ।।[4]

*

रामकवि

आप मिथिला-निवासी और सम्भवत मिथिला के राजा राघवसिंह (सन् १७०४-४० ई०) के दरबारी कवि भी थे।[5] आपने बेतिया (चम्पारन) के राजा दिलीपसिंह के पुत्र ध्रुवसिंह को राजा राघवसिंह से युद्ध न करने के लिए अनुरोध किया था। मैथिली मे इसी सम्बन्ध की आपकी कुछ रचनाएँ मिलती है।

---

१. द्विजवासी जयनगर के गोड़ जात अभिराम ।
वरणो राधाकृष्ण कवि ग्रन्थ महा छविधाम ।।
भक्तविनोद तथा रागरत्नाकर (राजितशर्मा मलिक, द्वितीय भाग, प्रथम स०, १६३७ ई०), पृ० ४२ ।

२. इसकी रचना ११५३ फसली सन् (१७४६ ई०) में हुई थी। यह मुद्रित होकर राजितशर्मा मलिक की 'भक्तिविनोद' के साथ १६३७ ई० में प्रकाशित हुई थी।

३. भक्तविनोद तथा रागरत्नाकर (वही), पृ० १८ ।

४. वही, पृ० १८ ।

५. मिथिला-तत्त्व-विमर्श (प० परमेश्वर झा, प्रथम स०, १६४६ ई०, उत्तरार्द्ध) पृ० ३६-३७ ।

उदाहरण

न गहु खग्ग ध्रुवसिंह तोहि उपर यम चढ्यौ,
मिथिलापति सें वैर अवसि दिन दिन तोहि बढ्यौ।
तैं कपूत कुलवधिक ये तो राघोवर राजा,
अरिदल दलन समर्थ भीम भारत जीमि गाजा।
कवि कहत राम रे मूढ सुनु, जेहि दल प्रचण्ड भैरो रहत।
ठहरे न फौज जथारिन जब, सरदार खाँ ओ तेगा गहत ॥[1]

※

रामजी भट्ट

आप गंगा-तट पर स्थित 'भोजपुर' के निवासी गूजरवंशी थे।[2] आपके पितामह का नाम रामदेव और पिता का नाम गौरीनाथ था।

आपने संस्कृत 'अद्भुत-रामायण' का हिन्दी मे पद्यबद्ध अनुवाद किया था। इसकी रचना १७८६ ई० मे हुई थी।

आपकी रचना का उदाहरण नही मिला।

※

रामजीवनदास

आप परशुरामपुर मठ, तुरकोलिया (चम्पारन) के निवासी रविदास थे। कहते है, यौवन बीतते, बीतते आपकी आँखे जाती रही।[3]

हिन्दी मे आपकी बहुत ही कम रचनाएँ मिलती है।

उदाहरण

चरन चरन रहुन दिन मानो देवी कालिका
शरण शरण तोहि पुकारो भइ कठोर कालिका
डुबत जन के काहे बिसारो भइ बेहाल हालिका
लछमी सरोसती पारबती जानकी समस्त लोक मालिका
रामजीवन जन तुम्हारे डूबत भवसागर धारे,
त्राहि त्राहि मो पुकारो दरस दीन चंद्रिका।[4]

※

१. मिथिला-तत्त्व-विमर्श (वही), पृ० ३८।

२. खोज में उपलब्ध हस्तलिखित हिन्दी-ग्रंथों का सोलहवाँ त्रैवार्षिक विवरण : सन् १९३५-३७ ई० (स्व० डॉ० पीताम्बर दत्त बड़थ्वाल, २०१२ वि०), पृ० ४४।

३. आँखों के नष्ट हो जाने पर आपने एक झूमर लिखा था, जिसकी दो पंक्तियाँ इस प्रकार हैं —

तन मोरा थकले बीति गइले,
नयनों ना सूझेला हमार हो राम।

४. चम्पारन की साहित्य-साधना (वही), पृ० ५२।

रामनारायण प्रसाद

आप चम्पारन के गोविन्दगंज थाने के अन्तर्गत दामोदरपुर-ग्राम के निवासी थे।[१]

आप व्रजभाषा के उच्चकोटि के कवि कहे गये है। आपके कुछ पद श्रीगणेशचौबे (बँगरी, चम्पारन) को प्राप्त हुए है। परमानन्दजी के 'विरहमासा' के साथ आपके भी कुछ पद सगृहीत है।

उदाहरण

(१)

सियावर असरन सरन हरि विरद सोर सगरी।
शिव गनेश प्रह्लाद् व्यास ध्रुव राम नाम अगरी।
सुक कबीर नारद् ऋखि मीरा विख भये अमीय भरी।
मारजार भरदूल द्रौपदी नामलेत उबरी।
जमन अजामिल गनिका सबरी सुपच सदन कूबरी।
मृग निखाद् गज गिद्ध अहिल्या पदरज परसितरी।
सरनागत सुगरिव विभिपन बधिरिपु अभयकरी।
रामनाम महिमा अथाह कहि सेसहु थाकि परी।
रामनरायन राम नाम जपु डर बीच नेम धरी।।[२]

(२)

सुनु सखि साम सुनर बनवारी
मन मोहन मुरारी मो पर मोहनि डारी।
सीस बिराजित मोर पांखुरी कच कुंचित लटकारी।
सोभा भव चक्कारी।।
खंजन मीन सरोज साध द्दग भँहुअ वंक धनुधारी
श्याम सीत पर तीव्र धार सर दृष्टि कटाच्छ सुधारी
श्रुति सोनित मकराकृत कुण्डल झुकि कपोल कियारी
जनु मनोज जुग भवन पैठ निज द्वारे निसान विसारी
दाडिम फल जिमि दसन पंक्तिवर अधरविम्ब दुतिहारि
रामनरायन छवि पियुख चख चखति पलक पट डारी।।[३]

❀

---

१. श्रीगणेश चौबे (बँगरी, चम्पारन) से प्राप्त सूचना के आधार पर।

२. परिषद् के हस्तलिखित ग्रंथ-अनुसंधान-विभाग के अन्तर्गत 'चौबे-संग्रह' में संगृहीत परमानन्द के 'विरहमासा' से।

३. वहीं।

रामप्रसाद

आप बेतिया (चम्पारन) के महाराज आनन्दकिशोरसिह के दरबार मे थे।[१]

आपने अपने उक्त आश्रयदाता के आदेश पर 'आनन्दरस-कल्पतरु' नामक पुस्तक की रचना की थी, जो १८७७ वि० कार्त्तिक शुक्ल अष्टमी रविवार को पूरी हुई।[२] इस ग्रथ में रस, भाव, विभाव, अनुभाव, सचारी भाव, नायक-नायिका आदि के लक्षण सोदाहरण दिये गये हैं।

उदाहरण

औचक चाहि गई जब तें मनमोहन मूरति रावरी नीकि।
दौरति है तब तैं बिरहाकुल कुन्दन सी दुति ह्वै रही फीकी।
आँगन मै खिन भौन अटा छन सेज महादुख दायिनि जी की।
बे-तन तीर के पीरनी तें भई ऐसी दशा वृषभान लली की॥[३]

❀

रामरहस्यसाहब

आपका नाम पहले 'रामरज दूबे' था। आपकी कविताओ मे 'रामरहेस' नाम भी आया है।

आप टेकारी-राज्य (गया) के मन्त्री प० भगवान दूबे के पुत्र थे।[४] आपने कबीरचौरा (काशी) के १५वे गुरु महात्मा शरणदासजी से दीक्षा ली थी। १७६२ ई० के बाद आप गया मे रहने लगे। १८१० ई० मे आपका परलोकवास हुआ।

आप कबीरपथी महात्मा थे, और शास्त्रो का अच्छा अध्ययन किया था। कबीरपथ के सिद्धान्तो को नियमबद्ध एव तर्कसगत बनाकर उसे दार्शनिक और बुद्धिवादी रूप देने का श्रेय आपको ही है। कुछ लोगो का कहना है कि आपके समान शास्त्रज्ञ विद्वान् उत्तर-भारत की सत-परंपरा मे एक सुन्दरदास को छोडकर कोई नही हुआ। आपके लिखे कई ग्रथ है। इनमे प्रमुख 'पचग्रन्थी' है, जिसमे पाँच ग्रथ हैं। इसे कबीरपथी लोग 'सद्ग्रथ' कहते है।[५] कबीर के सिद्धान्तो को लोकप्रिय बनाने का इस ग्रथ को बहुत बडा श्रेय है। इसके पहले ऐसा विवेचनात्मक ग्रथ कोई नही था। कबीरपथ मे 'बीजक' के बाद इसी ग्रथ की सर्वमान्यता है।

उदाहरण

(१)

जथा अनेकन लहरिते, जल थिरता नहि पाय।
थीर जहाँ तहँ बाड़वा, नीरहिं सोख कराय॥
दुहुं प्रकार थिरता नहीं, ब्रह्महुं जग पर्यन्त।
जीवहि दुःख दुसह अति, त्राहि त्राहि विलखन्त॥[६]

---

१. 'साहित्य' (वही, अप्रैल १९५३ ई०), पृ० ६२।
२. इसकी हस्तलिखित प्रति मन्नूलाल पुस्तकालय, (गया) में सुरक्षित है।
३. 'साहित्य' (वही), पृ० ६१।
४. श्रीकृष्ण-अभिनन्दन-ग्रन्थ (२००५ वि०), पृ० ५९।
५. कबीरपथी विद्वान् बाबा राघवदास ने अभी हाल में इसकी एक सुन्दर टीका लिखी है, जो बड़ौदा से मुद्रित होकर प्रकाशित हुई है।
६ श्रीकृष्ण-अभिनन्दन-ग्रन्थ (वही), पृ० ६१।

(२)

कल्पित इच्छा ब्रह्म कहावा। ब्रह्म की इच्छा माया गावा।
ताते त्रिगुण भये मन भाई। मन माने चौरासी जाई।
कल्पित सृष्टि भयो विस्तारा। परे जीव सब ब्रह्म की धारा।
दुखित सुखित तेहि पद अनुरागी। जगैं न मोह जनित बुधि लागी ॥[१]

❀

रामेश्वर

आपका निवास-स्थान मिथिला में था।[२] आप महामहोपाध्याय गोकुलनाथ उपाध्याय के शिष्य थे। आप मिथिला के महाराज राघवसिंह (सन् १७०४-४० ई०) के समकालीन थे। आपने कुछ मैथिली पदो की रचना की थी, जो लोक-कठ मे सगृहीत है।

उदाहरण

हे सखि ! अहूँ एकसरि एलहुँ।
बूझि पड़ल षट्पति वाहन-रिपु-रिपु-पति संङ्ग पठैलहुँ ॥
प्रकट-सात-स्वामी तावत तो शशक डरें लुकैलहुँ ॥
भेल वेद-पति-पिताक भूषण वामावश अकुलैलहुँ ॥
ईश इशादिक वन्धन सागर सौं कोनहुना वहरैलहुँ ॥
वारह-वरक विरह-प्रतिपत्-प्रतिमे पुनि आबि समेलहुँ ॥
नव-नायिकाक वाहन-रिपु-पति जनकथ कानन धैलहुँ ॥
तैं एखन पन्द्रह प्रियतम कर शर नायक सँ डरैलहुँ ॥
के जानै की थिक हुइ पति गति जे अनुचित सब कैलहुँ ॥
रामचन्द्र प्रियतम दृश ईशक भाग्य बढ़ तैं ग्रवहैलहुँ ॥
कैल न तीनि ईश्वरिक पूजा अवइत खन अगुतैलहुँ ॥
तैं न आठपति भेल परापति अपनहिं सुख भुजि खेलहुँ ॥
रहि गेलहुँ अहि ठकक भरोसे तैं एहि काल ठकैलहुँ ॥
चौदह नायक हाथ रहै जे तहि मे जखन गँथैलहुँ ॥
वहु करुणा कै गोपसुता कह अति करकशा गनैलहुँ ॥
'रामेश्वर' भन पुरत मनोरथ हरि सौं हम वतिऐलहुँ।[३]

❀

---

१. श्रीकृष्ण-अभिनन्दन-ग्रथ (वही), पृ० ६३।
२. A History of Maithili Literature (वही), P. 409.
३. वही, पृ० ४०९-१०।

रामेश्वरदास

आपका जन्म शाहाबाद जिले के कवलपट्टी-ग्राम मे, १७७५ वि० (१७१८ ई०) में हुआ था।[१] आपके पिता लक्ष्मीनारायण[२] का देहात आपकी बाल्यावस्था मे ही हो गया। इसके पश्चात् आप अपने मामा के साथ बभनगाँवाँ-ग्राम मे रहने लगे, जहाँ आपके विवाहादि-सस्कार भी सम्पन्न हुए।

आप आरम्भ से ही भगवद्भक्त थे। एक बार एक घटना के कारण आपके मन मे विराग उत्पन्न हुआ, जिसके परिणामस्वरूप आप घर से निकलकर बारह वर्ष तीर्थ-स्थानो मे भ्रमण करते रहे। भ्रमण के इसी क्रम मे आपको महात्मा 'पूर्णानन्दजी' से भेंट हो गई। ये तत्कालीन योगियो मे सर्वश्रेष्ठ माने जाते थे।[३] उनसे योग की शिक्षा प्राप्त कर अपने ननिहाल-ग्राम के निकट ही 'गुडी' नामक स्थान मे रहने लगे। आपके घरवालो ने वही आपके लिए एक मठ बनवा दिया, जहाँ आपकी स्त्री भी जाकर भगवद्भजन करने लगी। धीरे-धीरे आपका सारा परिवार वही रहने लगा। आपके चार पुत्र हुए—गोपाल ओझा, परशुराम ओझा[४], ऋतुराज ओझा और कपिल ओझा।

आप एक सिद्ध सत थे। आपके यौगिक चमत्कार की अनेक किंवदन्तियाँ है। आप १८८५ वि० (१८२८ ई०) मे परलोक सिधारे। आपके सम्बन्ध मे अनेक चमत्कारपूर्ण घटनाएँ आज भी प्रचलित है।[५]

आप एक सुकवि थे। आपने एक सतसई की रचना की थी, जो अब अप्राप्य है। आपके रचे फुटकर १८०० पद आपके वर्तमान वशधर श्रीरघुवीरनारायण ओझा के पास हैं। इनमे खडीबोली के अतिरिक्त भोजपुरी के भी पद है।

उदाहरण

(१)

सरद चन्द आनन्द पूरन बदन इव रघुनाथ।
सुक उडगन सरस कुण्डल स्रवन सुर गुरु साथ॥
मोर मुकुतन मनिन झलकत सुभगतन छविछाये।
मनहुँ रवि ससि सकन्द उडुगन मिलि जमुनि जल आये॥
भाल लाल विशाल झलकत तिलक सुभग सुदेस।
मनहुँ छवि श्रृंगार सोभा प्रकट कीन्हों वेस॥

---

१. 'साहित्य' (वही, जुलाई १९५४ ई०), पृ० ७८।

२. श्रीदुर्गाशकरप्रसादसिंह इनका नाम चिन्तामणि ओझा बतलाते हैं। देखिए—भोजपुरी के कवि और काव्य (वही), पृ० १०२।

३. इनका आश्रम शाहाबाद के 'कर्जा' नामक गाँव में, गगा-तट पर था।

४. इनके वशज आज भी 'गुण्डी' ग्राम में बसे हुए हैं।

५. इस प्रकार की कुछ घटनाओं के लिए देखिए—'भोजपुरी के कवि और काव्य (वही), पृ० १०२-३।

भौंह आयत सुभकसर के बने युगल कमान।
नैन अम्बुज बान तीछन धरै मनसिज तान ॥
अधर अरुन सुवेस नासा बिम्बफल मुख कीर।
दसन दाडिम-बीज से कहत मानिक जीर ॥[1]

(२)

ताल झाल मृदंग खांजड़ी गावत गीत हुलासा रे।
कबहूँ हंसा चले अकेला कबहो संगी पचासा रे।
गेठी दाम न खरची बाँधे राम नाम के आसा रे।
रामचन्द्र तोरे अजब चाकरी रामेश्वर बिस्वासा रे ॥[2]

❀

लक्ष्मीनाथ परमहंस[3]

महात्मा साहेबरामदास के उपरान्त मिथिला के सबसे बडे योगाभ्यासी महापुरुष के रूप मे आपकी गणना होती है। कहते हैं, आपके बाद मिथिला मे आपके सदृश कोई महात्मा नहीं आविर्भूत हुआ। काव्य-कला की दृष्टि से भी आपका स्थान मैथिली-साहित्य मे विद्यापति, गोविन्ददास, उमापति आदि कवियो के उपरात ही माना जाता है।

कविता मे आपके नाम 'लक्ष्मीनाथ गोसाईं', 'लक्ष्मीपति', 'लखन', 'लछन' आदि मिलते हैं।

आपका जन्म सन् १७८८ ई० मे, सहरसा जिले के पास परसरमा नामक ग्राम मे हुआ था।[4] आपके पिता का नाम बच्चा झा था। उपनीत होने के पूर्व जब आप पिता की आज्ञा से गौ चराने जगल मे जाते थे, तब वहाँ विनोदार्थ हठयोग की क्रियाएँ किया करते थे। इससे आपका जन्मजात योगी होना सिद्ध होता है। यज्ञोपवीत होने के बाद आप 'दुहवी-महिनाथपुर' के प० श्रीरत झा के पास विद्याध्ययन के लिए भेजे गये। वहाँ आपने ज्योतिष और वेदान्त का अध्ययन किया। कुछ दिनो मे आप एक प्रसिद्ध वेदान्ती हो गये।

विद्याध्ययन के उपरान्त आपका विवाह 'कहुआ' ग्राम (दरभगा) के सुखदत्त (या सोखादत्त झा) की पुत्री से हुआ। इसके दो वर्ष पश्चात्, पत्नी के गर्भवती होने पर लगभग २७ वर्ष की अवस्था मे, आप घर से विरक्त होकर नैपाल की ओर चल पडे। भगवान् पशुपतिनाथ के दर्शन कर आप इधर-उधर भ्रमण करने लगे। एक दिन अकस्मात् एक पहाडी गुफा मे, गोरखनाथ की शिष्य-परम्परा के लम्बानाथजी से आपकी भेंट हो गई। उनसे आप ९ वर्षों तक योग की शिक्षा लेते रहे। वहाँ से लौटकर आप

---

१. 'साहित्य' (वही), पृ० ८८-८९।
२. भोजपुरी के कवि और काव्य (वही), १०४।
३. आपके विस्तृत जीवन-परिचय के लिए देखिए—डॉ० ललितेश्वर झा द्वारा सम्पादित 'गोस्वामी लक्ष्मीनाथ की पदावली' की भूमिका।
४. प० [illegible] झा 'निर्भर' ([illegible], सहरसा) के द्वारा प्रेषित सूचना के आधार पर।

दरभगा जिले के 'चरबरल-रहुआ' ग्राम मे पहुँचे। वही रहकर आपने योग-सिद्धि प्राप्त की। सिद्धि प्राप्त करने के पश्चात् वनगाँव में एक मन्दिर और एक कुटी बनाकर रहने लगे। वनगाँव के अतिरिक्त आपने फटिकी[१], तारागाँव, महिनाथपुर, लखनौर और परसरमा आदि स्थानो में मन्दिरो का निर्माण कराया। आसपास के सभी राज-रियासतो मे आपका बहुत मान था। आपके प्रधान-शिष्यो मे शकरपुरा-स्टेट के अधिपति और एक प्रसिद्ध ईसाई सज्जन श्रीजॉन[२] भी थे। आपकी मृत्यु लगभग ८५ वर्ष की आयु में १८७२ ई० (१२८० फसली, अगहन सुदी ५) मे ५ दिसम्बर को हुई।[३]

आप एक भक्त के अतिरिक्त एक सुकवि भी थे। नित्य नये-नये गीत और पद्य बनाते और उन्हे सगीतज्ञो द्वारा अपने मन्दिरो मे गवाते थे। इन रचनाओ पर सूर और तुलसी का विशेष प्रभाव ज्ञात होता है। आपकी लिखी छोटी-बडी दस पुस्तके है— (१) श्रीराम-गीतावली (२) श्रीकृष्ण-गीतावली, (३) श्रीकृष्ण-रत्नावली (अनुवाद), (४) राम-रत्नावली, (५) अकारादि-दोहावली, (६) भाषा-तत्त्वबोध (अनुवाद), (७) गुरु चौबीसा, (८) प्रश्नोत्तर-माला (अनुवाद), (९) योग-रत्नावली, (१०) पच-रत्नावली[४]। इन रचनाओ की भाषा मुख्यत खडीबोली, अवधी, व्रजभाषा और मैथिली है।

उदाहरण

(१)

नाथ हो कोटिन दोष हमारो।
कहाँ छिपाऊँ, छिपत ना तुमसे, रवि ससि नैन तिहारो ॥टेक॥
जल, थल, अनल, अकास, पवन मिलि, पाँचो है रखवारो।
पल-पल होरि रहत निसि बासर तिहुँ पुर साँझ सकारो ॥
जागत, सोवत, ऊठत, बैठत करत, फिरत व्यवहारो।
रहत सदा सँग, साथ न छोड़त, काल पुरुष बरियारो ॥
बाहर भीतर बैठि रह्यो है, घट-घट बोलनि हारो।
दुख-सुख पाप-पुन्य के मालिक, निज जन जानि उबारो ॥
कहाँ लाज करि नारि नाह सों जो देखत तन सारो।
'लछमीपति' के स्वामी केशव भव-नद पार उतारो ॥[५]

---

१ यह स्थान दरभगा के अन्तर्गत झझारपुर-स्टेशन से ७-८ मील की दूरी स्थित है। कहते है, यहीं आपका निर्वाण हुआ। आज भी यहाँ आपकी पूजा की सामग्री, पलग, पादुका आदि सुरक्षित हैं।

२ ऐसा परिचय इसी ग्रन्थ में यथास्थान मुद्रित है।

३. कुछ लोग आपका मृत्युकाल सन् १८८२ ई० बतलाते हैं।

४ इनमें से कई पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। पुस्तकों में वर्णित विषयों के लिए देखिए—गोस्वामी लक्ष्मानाथ की पदावली (डॉ० ललितेश्वर झा, प्रथम स०, १९५७ ई०), पृ० ५-१२।

५. बिहार की साहित्यिक प्रगति (बिहार हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के प्रथम से पचीसवें अधिवेशन तक के सभापतियों का भाषण, श्रीराजाबहादुर कीर्त्यानन्दसिंह के भाषण से सन् १९५६ ई०), पृ० १५६।

(२)

जागो कान्ह कमल दोउ लोचन मैं तेरी बलि जाई ।
हे हूँ हरखि सरोरुह लोचन मुख से बसन दुराई ।
मुख पंकज देखन के कारण द्वारे भीड़ भरि आई ।
ब्रह्मा शेष महेश शारदा नारद बीण बजाई ।
करत कोलाहल ग्वाल बाल मिलि दामोदर गुण गाई ।
बछरू छीर पीवत नहि तुम बिनु कहत यशोदा माई ।
भोर भए रजनीचर भागे शशि हित मन मलिनाई ।
हरषित भ्रमर कमल पट खूले दिनकर रथ अरुनाई ।
उठे श्यामसुन्दर मनमोहन भैया हरष जनाई ।
लक्ष्मीपति सब दर्शन पाइ आनन्द उर न समाई ।[1]

(३)

मोहन बिनु कौन चरैहैं गैया ।
नहिं बलदेव नही मनमोहन रोवहि यशोदा मैया ।
को अब भोरे बछरू खोलिहैं को जैहैं गोठ दुहैया ।
एकसरि नन्द बबा क्या करिहैं दोसरो न काउ सहैया ।
को अब कनक कटोरा भरि भरि माखन चोर लुटैया ।
को अब नाचि-नाचि दधि खैहे को चलिहै अधपैया ।
को अब गोप सखा सग खेलिहैं को ब्रज नागरि हँसैया ।
को गोपियन के चीर चोरैहै को गहि मुरली बजैया ।
को अब इत उत तैं घर ऐहै बबा-बबा गोहरैया ।
लक्ष्मीपति गोपाल लाल गुण सुमरि-सुमरि पछतैया ।[2]

(४)

लखि साओन केर आओन ।
वृन्दावन तरुवर सब फूलल, लागए कुन्ज सोहाओन ॥
गुन्जए अलि घन-ननन-ननन-हनहन, मत्त मधुर रस पाओन ।
चलए पवन सन-नननन-नननन, सुमनक वास लोभाओन ॥
झनन-झनन झिल्ली झनकए, दादुर दरव बढ़ाओन ।
पिहुआ पिअ पिअ पिअ पिअ पिअकहि, कोकिल कल कुहुकाओन ॥
गोपी गोप सङ्ग लए मोहन रास रचल मनभाओन ।
तन-नन-नननन मुरली टेरए, सुनि मेघवा झरिलाओन ॥
झम्प झम्प झुकि झुकारे नारे नारे, झलकन गहन रिझाओन ।
'लक्ष्मीपति' नाचए यदुनन्दन प्रेम प्रवाह बहाओन ॥[3]

---

१. गोस्वामी लक्ष्मीनाथ की पदावली (वही), पृ० ६-७ ।
२. वही, पृ० २० ।
३. मैथिली-गान-रत्नावली (वही), पद सं० ८३, पृ० ५८ ।

लाल झा

आप दरभगा जिले के मँगरौनी-ग्रामनिवासी[१] और मिथिला के महाराज नरेन्द्रसिंह (सन् १७४४-६१ ई०) के आश्रित थे।

आपने व्रजभाषा मे 'कन्दर्पीघाट की लडाई' और मैथिली मे 'गौरी-स्वयवर-नाटक'[२] की रचना की थी। प्रथम पुस्तक मे आपने अपने आश्रयदाता के युद्ध का वर्णन किया है। आपके लिखे बहुत-से 'सोहर' भी लोक-कठ मे मिलते है।

उदाहरण

(१)

हे हर कोन हरल मोर नाह।
अछल अभेद भेत्र नहि मरमहुँ ले नहि मन अवगाह।
पल विसलेख पहर साजोमानिअ कोन परि होयत निवाह॥
शोक कलाप दाप वह मानस उर उपजाव्रए धाह।
विहरक अवधि अवूह पइल छोअ चहुदिश लागु अथाह॥
मानक आधि वेआधि धाधि वरू, रग रसभ गेल दूर।
विहि भेल मोर कौन निरदय मोर हरलहि शिरक सिंदूर॥
कुसुमक वान जहाँ न जकर वश सब गुन आगर कन्त।
से मोर साथ हाथ धए लाओल की काम बन्धु वसन्त॥
सुकवि लाल कह धैरज धय रहु हरिसुत होएत अनग।
ओ मनमथ रति तोहि पलटि पुनु होएत ने विधि संग॥[३]

(२)

जय हरिगमनी जय हरिगमनी, देथु अभयवर हर रमनी।
अति विकराल कपाल गृम शोभित, कचतर झलक मनी॥
लम्बित कचतर छपित छपाकर, भुजपर भूषण भुजङ्गफनी।
खप्पर वर करवाल ललित कर, शुम्भ निशुम्भ असुर दलनी॥
रिपु भट विकट निकट झटपट कए धए पटकल चटपट अवनी॥
कुपित नयन पर नयन विराजित, अरुण-अरुण युग कमल सनी॥
लह लह रसन वसन वाङिम विज, निज गल जनमल दुख समनी॥
सुर नर मुनि हरखित मम मुखि हरि, हर सुर के तोहरि सनी॥
रक्तबीज महिषासुर मारल, असुर सँहारल समर सुनी।
हमर कुमति मति तुअ पद पय गति, विसरि सुजन मोहि एको मनी।
जगत जननि पद पङ्कज मधुकर, सरस 'सुकविलाल' भनी॥[४]

❀

१. मिथिला-तत्त्व-विमर्श (वही), पृ० ५६।

२. इस नाटक की एक प्राचीन हस्तलिखित प्रति पटना-विश्वविद्यालय के पुस्तकालय में सुरक्षित है। मिश्रबन्धुओं ने इसका नाम 'गौरीपरिणयनाटक' बतलाया है। देखिए—मिश्रबन्धु-विनोद (वही, द्वितीय भाग, द्वितीय स०, १९८४ वि०), पृ० ८१६।

३ A History of Maithili Literature (वही), P 320.

४. प्रो० ईशनाथ झा (दरभगा) से प्राप्त।

वंशराज शर्मा 'वंशमनि'

आप वीरभानपुर (चनपुर-भभुआ, शाहाबाद) के निवासी थे।[1] आपके पिता का नाम बुलाकीराम शर्मा था।[2]

आपने 'रस-चन्द्रिका'[3] नाम से 'बिहारी-सतसई' की ब्रजभाषा-टीका, फाल्गुन कृष्ण ६, रविवार, १८५० वि० (१७९४ ई०) में, की थी। टीका १२ अध्यायों में विभक्त और सरस कवित्त-सवैयों में है।

उदाहरण

(१)

ये सखि सुन्दर स्याम की री, यह मूरति मोहिनी मोहि लगै।
नेक निरेखत ही न बनै पै तऊ जग अद्भुत जोति जगै।
'वंश' उपाउ अनेक किये तें, छुपाये छुपै न कहीं सो उगै।
चित अंतरऊ हरि राखिये जो प्रतिबिंबि तऊ जग जोति जगै।[4]

(२)

चकृत भयो है चित जकि सी रही है बाल हालऊ न मो पै कह्यो जात वाके तनके।
बूझे ही अनेक बार निपट समीप ह्वै कै बोलति है मृदुल बडे बार गनके।
जानी नहिं जात मो पै कहूँ धौं भयो है आली लागी डीठि काहू की है कैंधौं वाके मन के।
कैंधौं काहू डीठि हूँ पै अटकि रही है डीठि, बूझियत 'वंशमनि' वाके बोलपन के।[5]

※

---

१ श्रीउदयशंकर शास्त्री (काशी) द्वारा प्रेषित सूचना के आधार पर।

२. नगर चयनपुर के निकट वीरभानपुर ग्राम।
ताको पति सुत लोकमनि विमद बुलाकी नाम।
ताके सुत भए तीनि पुनि नंदरूप जनरूप।
मानिकचंद प्रसिद्ध जग वंश राज गुन भूप।
रसिक रैन रस चंद्रिका किनो स्वमति अनुहारि।
इमि जो चूक परी जो कछु लखौ स्वजन सुधारि॥
—'ब्रजभारती' (त्रैमासिक, कृष्णदत्त वाजपेयी, फाल्गुन २०११ वि०), पृ० ५०।

३ यह टीका उक्त शास्त्रीजी के पास है।

४ 'ब्रजभारती' (वही), पृ० ५१। मूल—
मोहन मूरति स्याम की, अति अद्भुत गति जोइ।
बसत सुचित अन्तर तऊ, प्रतिबिंबित जग होइ॥

५ वही, पृ० ५२। मूल—
चकी जकी सी ह्वै रही, बूझे बोलति नीठि।
कहूँ डीठि लागी लगी, कै काहू की डीठि॥

वृन्दावन

आपका जन्म बारा-ग्राम (शाहाबाद) में माघ शुक्ल चतुर्दशी, १८४८ वि० (१७९२ ई०) मे हुआ था।[१] आपके पिता का नाम 'धर्मचन्द' और माता का 'सिताबी' था। बारह वर्ष की अवस्था मे आप अपने पिता के साथ काशी चले गये। संयोगवश वही आपका विवाह एक सम्पन्न परिवार मे रुक्मिणी' नामक कन्या से हो गया, और आप वही एक सरकारी खजाची के पद पर काम करने लगे। आपके दो पुत्र हुए—अजितदास[२] और शिखरचन्द। एक बार आपने 'ईस्ट-इंडिया-कम्पनी' के एक अँगरेज-किरानी को अपनी ससुराल की टकसाल देखने से रोका था, जिस पर वह बहुत क्षुब्ध हुआ। पीछे जब वह काशी के जिलाधीश के रूप मे नियुक्त हुआ, तब कोई अभियोग लगाकर उसने आपको जेल भेज दिया। किन्तु कुछ ही दिनो के बाद जब उसने कारागार में जाकर आपको ईश्वर-प्रार्थना मे लीन देखा, तब आपको मुक्त कर दिया।[३] आप १९१५ वि० (१८५८ ई०) में परलोक सिधारे।

आपने पन्द्रह वर्ष की अवस्था से ही रचना करना आरम्भ कर दिया था। जैनधर्मावलम्बी होने के कारण आपकी अधिकाश रचनाएँ जैनधर्म-सबंधी है। आप आशुकवि थे। आपकी प्राय. सभी रचनाएँ व्रजभाषा मे है। यो, खड़ीबाली मे भी आप रचनाएँ करते थे। आपकी रचित पुस्तके, उनके विषय और उनके रचना-काल इस प्रकार है—(१) चौबीसी-पाठ[४] (२४) तीर्थकरो की स्तुति,(१८७५ वि०), (२) तीस-चौबीसी-पाठ (स्तुति, १८७६ वि०), (३) छन्द-शतक (सौ प्रकार के छंद बनाने की विधि, १८९८ वि०), (४) प्रवचनसार (कुदकुदाचार्य के प्राकृत-ग्रथ का पद्यानुवाद, १९०५ वि०), (५) अर्हतपासा-केवली (शकुनग्रथ, १९०५ वि०)। आपकी स्फुट कविताओ का सग्रह-ग्रथ 'वृन्दावन-विलास' है। इसके अतिरिक्त १८९१ वि० में लिखा हुआ एक 'जैनछन्दावली' नामक ग्रंथ भी आपका बतलाया जाता है।[५]

---

१. मिश्रबन्धु-विनोद (वही, द्वितीय-भाग, द्वितीय सं०, १९८४ वि०), पृ० ८७२।

२. इन्हींको पढाने के लिए आपने एक छन्दोग्रन्थ की रचना की थी। ये एक बड़े ही सफल कवि थे। इनका विवाह आरा (शाहाबाद) में हुआ था, जहाँ आकर ये बस गये। इनके वशज इस समय आरा में ही हैं।

३. आपकी यह प्रार्थना 'सकट-मोचन-स्तोत्र' के नाम से प्रसिद्ध हुई।

४. कहते हैं, इसकी रचना आपने एक रात में ही कर डाली थी।

५. आपने गोस्वामी तुलसीदास के 'रामचरित-मानस' की भाँति एक 'जैन रामायण' भी लिखने की इच्छा की थी, किन्तु आपकी यह इच्छा पूरी न हो सकी। आपके आदेश पर आपके पश्चात आपके पुत्र अजितदास ७१ सर्गों तक उक्त ग्रंथ की रचना कर असमय काल-कवलित हो गये। इनके पुत्र हरिदास ने उक्त ग्रंथ को पूरा करना चाहा, किन्तु दुर्भाग्यवश वे भी वैसा नही कर सके।

उदाहरण

(१)

बेजान में गुनाह मुझसे बन गया सही,
कक्करी के चोर को कटार मारिये नहीं।
आनन्द कंद श्री जिनद देव है तुही,
जस बेद औ पुरान में परमान है यही।
केवली जिनेश की प्रभावना अचिंत मित,
कंज पै रहैं सु अतरिच्छ पाद कजरी;
मूस औ बिडाल मोर व्याल बैर टाल-टाल,
हैं जहाँ सुमीत ह्वै निचीत भीत भंजरी।
अंगहीन अंग पाय हर्ष को कहा न जाय,
नैनहीन नैन पाय मंजु कंज खंजरी,
और प्रातिहार्य की कथा कहा कहै सुवृन्द
शोक थोक को है सुअशोक पुष्प मंजरी ॥[1]

(२)

जो आपनो हित चाहत है जिय तौ यह सीख हिये अवधारो।
कर्मज भाव तजो सबही निज आतम को अनुभौ रस गारो॥
श्री जिनचंद सों नेह करो मित आनँद कंद दसा विसतारो।
मूढ़ लखै नहिं गूढ़ कथा यह गोकुल गाँव को पैंडो ही न्योरो ॥[2]

※

वेणीदत्त झा

कविता मे आप अपना नाम केवल 'दत्त' रखा करते थे।

आप दरभगा जिले के 'हाटी' ग्रामनिवासी थे।[3] मिथिला के राजा माधवसिंह (सन् १७७६-१८०७ ई०) आपके भानजा थे।

मैथिली मे रचित आपकी कुछ कविताएँ लोक-कठ में सुरक्षित है।

---

१. मिश्रबन्धु-विनोद (वही), पृ० ८७३।

२. हिन्दी जैन साहित्य का सक्षिप्त इतिहास (कामताप्रसाद जैन, प्रथम स०, १६४७ ई०), पृ० १६४।

३. मैथिली-गीत-रत्नावली (वही), पृ० ८४।

उदाहरण

(१)

सून भवन नवि नागरि मदन-उजागरि रे।
पहिल वयस ऋतु कादरि, निशि घन वादरि रे।।
गाढ गहल पहु रहि रहि कुच युग गहि-गहि रे।
कान कलप कत नहि नहि, शिव शिव कहि कहि रे।।
वालहिं वसन पहु मोचल, किछु नहि सोचल रे।
मदन महीपति सोचल, जत मन रोचल रे।।
केश पाश शिर छूटल, कर चूडि फूटल रे।
उरज हार भल टूटल, हरि सुख लूटल रे।।
'दत्त' नवल रस गाओल, रसिक बुझाओल रे।
रसमथ बिअनि डोलाओल, धनि सुख पाओल रे।।[१]

(२)

कतए गमओलहुँ राति आँखि कोना रङ्गलहुँ रे।
काजर देलहुँ भौंहँ सिन्दुर कोना अनलहुँ रे।।
विनु गुन माल हृदय अछि, अछि कत वेणी रे।
पट अछि अधिक मलीन, अधिक सुख श्रेणी रे।।
घुरि घर जाउ ओतए चल, जतए निशि रहलहुँ रे।
हमर छमव अपराध, 'दत्त' कवि कहलहुँ रे।।[२]

※

वेदानन्दसिंह

आप बनैली-राज्य (पूर्णिया) के अधिपति थे।[३] आपके पिता का नाम चौधरी दुलारसिंह था, जिन्होने नेपाल-युद्ध मे ब्रिटिश-सरकार की सहायता कर 'राजा' की उपाधि प्राप्त की थी। आपके पूर्वजो मे प० गदाधर झा[४] बडे विद्वान् व्यक्ति थे। आपके पात्र राजा पद्मानन्दसिंह तथा राजा कीर्त्यानन्दसिंह अच्छे साहित्यिक हुए। सन् १८५१ ई० मे आप परलोक सिधारे।

आपने हिन्दी मे 'वेदानन्द-विनोद' नामक एक प्रामाणिक वैद्यक-ग्रंथ लिखा था। आपकी रचना का कोई उदाहरण नही मिला।

※

१. मैथिली-गीत-रत्नावली (वही), पद सं० ७८, पृ० ४५-४६।
२. वही, पद स० ७९, पृ० ४६।
३. रजत-जयन्ती-स्मारक-ग्रंथ (वही), पृ० १२८।
४. इन्हीं की विद्वत्ता पर प्रसन्न होकर दिल्ली के पठान-सम्राट् गयासुद्दीन तुगलक ने कुछ गाँव जागीर में दिये थे। इनकी दसवीं पीढी में चौधरी परमानन्द झा हुए, जिन्होंने आठ-नौ लाख वार्षिक आमदनी की रियासत कायम कर पूर्णिया जिले के बनैली-ग्राम में अपनी राजधानी बसाई।

व्रजनाथ

मैथिल कवि प० नन्दन झा[१] के प्रपौत्र होने के कारण आप दरभगा जिले के उजान-ग्रामवासी थे ।

मैथिली मे रचित आपकी कुछ काव्य-रचनाएँ यत्र-तत्र प्राप्त होती है ।

उदाहरण

चलु सखि ! चलु सखि ! परिछनिहारि । चन्द्रवदनि धनि सुदिन विचारि ॥
वरगुण निरखि परिछु व्रजनारि । परम मनोहर कृष्ण मुरारि ॥
हँसि हँसि वचन कहू दुइ चारि । फाँस लगाए नाक धए नारि ॥
चीतक हार गरौं देल डारि । चतुरा सभ मिलि परिछन हारि ॥
आगु पाछु भेलि जत शुभ नारि । वाम वहिन वए पढ़इत गारि ॥
भन 'व्रजनाथ' सकल निरधारि । राज दुलार दुलहि सुकुमारि ॥[२]

❋

शंकरदत्त

आप पटना-निवासी[३] और राधावल्लभ-सम्प्रदाय के उपासक थे ।

आपने सस्कृत और हिन्दी मे कई ग्रथो की रचना की थी । आपकी हिन्दी-रचनाएँ इस प्रकार हैं—(१) हरिवश-प्रशस्ति (२) हरिवश-हस-नाटक (३) सद्वृत्ति-मुक्तावली तथा (४) राधिका मुख-वर्णन (काव्य) । आपकी रचना का उदाहरण उपलब्ध नही हुआ ।

शम्भुनाथ त्रिवेदी

आप चम्पारन जिले के गोविन्दगज थाने के ममरखा-ग्राम-निवासी थे ।[४] आपके पिता का नाम श्रीअहिनाथ त्रिवेदी था । आपके पूर्वज कन्नौज की ओर से यहाँ आये थे और वेतिया राज-दरवार मे उन्हे आश्रय मिला था ।

आप सस्कृत और हिन्दी के एक मर्मज्ञ विद्वान् एव कवि थे । आपने अनेक सस्कृत-स्तोत्रो की रचना की थी । कई सस्कृत-ग्रथो का आपने हिन्दी-अनुवाद भी किया था । इन्हा मे एक 'वहुला-कथा' भी है ।[५] इसकी भाषा पर भोजपुरी का विशेष प्रभाव है ।

---

१. इनका परिचय इसी ग्रथ में यथास्थान मुद्रित है ।
२ मैथिली-गीत-रत्नावली (वही), पद स० ४४, पृ० २४ ।
३ मिश्रवन्धु-विनोद (वही, द्वितीय-भाग, द्वितीय सं०, १९८४ वि०), पृ० ७८० ।
४. चम्पारन की साहित्य-साधना (वही), पृ० २२ ।
५. इसकी एक जीर्ण-शीर्ण और खण्डित प्रति विहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् (पटना) के 'चौवे-सग्रह' में सुरक्षित है । इसकी रचना १८५५ वि० की कार्तिक कृष्ण द्वादशी को पूरी हुई थी ।

उदाहरण

हमरा ना जीव कै लोभा। तुम्ह कस बोलहु व्याघ्र असोभा ॥
तोहरे मन यौ बाहे चोषा। सत्य कहावहु हमसे चोषा ॥
सत्य मेदनी सत्य अकासा। सत्यहु तै रवि करहि प्रकासा ॥
सत्य छाडि मोहि आन न भाई। सत्य निसाकर अमृत वाई ॥[१]

❋

शिवनाथदास

आप सारन जिले के तेलपा-मठ मे निवास करते थे।[२] आप एक दरियापथी साधु थे। आपने उक्त मठ मे ही रहकर १८८५ वि० की पौष कृष्ण पचमी को 'शिवनाथ-सागर'[३] नामक ग्र थ की रचना पूरी की थी। इस ग्र थ मे आपने दरियासाहब का नाम कई बार वडी श्रद्धा के साथ लिया है और उन्हे अपना सत्-गुरु तथा अपने को उनका दास वतलाया है। इसकी भाषा विशुद्ध और परिमार्जित नही है। इसे भोजपुरी-प्रभावित सधुक्कडी भाषा कह सकते है।

उदाहरण

प्रथमहि वन्दौ सतपुरुष पुराना। जाकर जाप करहिं भगवाना।
तव पगु बन्दौ अलख जगदीशा। विमल नाम मनि पावों पद ईशा ॥
ब्रह्मा विष्णु बन्दौं गौरी महेशा। वन्दौ गणपति आदि गणेशा।
वन्दौ रामकृष्ण जगन्नाथा। भक्त वत्सल भक्ते ही सनाथा ॥[४]

❋

श्रीकान्त

आपका नाम 'गणक' भी मिलता है।

आप मिथिला-निवासी और मिथिला के राजा नरेन्द्रसिंह (सन् १७४५-६० ई०) के आश्रित कवि थे।[५]

आपका एक नाटक 'कृष्ण-जन्म' मिलता है। इसके अतिरिक्त आपने मैथिली मे कुछ स्फुट पदो की भी रचना की थी, जो विभिन्न सग्रहो मे प्राप्त होते है।

---

१. परिषद् में संगृहीत 'बहुला-कथा' की हस्तलिखित प्रति से।

२. 'साहित्य' (वही, जुलाई १९५२ ई०), पृ० ३४।

३. इस ग्रंथ में आपने ऋषि कुम्भज और परब्रह्म परमेश्वर तथा कई व्यक्तियों के वार्त्तालाप के रूप में निर्गुण-उपासना, योग, नाम-स्मरण, साधु-सेवा, अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष आदि विषयों पर विवेचन किया है। स्थान-स्थान पर शीर्षक में कुम्भज-वचन और साहव-वचन आदि उल्लिखित हैं। ग्रंथ-रचना के लिए दोहा, चौपाई, सोरठा, नराच और साखी छन्दों का आश्रय लिया है। इसकी हस्तलिखित प्रति बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् (पटना) के प्राचीन ग्रंथशोध-विभाग में सुरक्षित है।

४. परिषद में संगृहीत हस्तलिखित 'शिवनाथ-सागर' से।

५. मैथिली-गीत-रत्नावली (वही), पृ० ८१।

उदाहरण

(१)

मालति ! न करु विमुख अलिराज ।
जँ अभिलाष लाख तोहेँ विसरल, तइओ ने तेजए समाज ।।
वारि कमल वन मधुकर निअ मन वास पास ओझराए ।
भेद पिशुनकर, तेँ केओ परिहर, प्रेम महातरु लाए ।।
हुनकाँ तोहरि सनि, बहुत लता धनि ! तोहरा हुनिसन एक ।
तसु अपमान, आन कह अनुचित, किछु नहि तकर विवेक ।।
चान मलिन भेल, अरुण उदय लेल, पङ्कज दल परगास ।
तुअ अनुगत भए, अधिक आस धए, मधुलिह भमए उदास ।।
विलसि करए रस, नेह तकर वश, सुकवि 'गणक' इहो भान ।
सिंह नरेन्द्र नृपति, गुणिजन-गति, रसविन्दुक रसजान ।।[१]

(२)

भाविनि ! वुझल तोहर अनुराग ।
दुरजन हँस, पुरजन देअ दुरयश, कि कहब अपन अभाग ।।
करु परसन हँसि, सुललित मुख शशि न करसि हृदय कठोर ।
अपन शपथ सुनु, तुअ दरसन विनु, परम विकल मन मोर ।।
कएल न कबहुँ, सबहुँ मोहि बरजल, अरजल तोहर सिनेह ।
एहन करम मोर, कि देव दुषन तोर, भाव न धन-जन गेह ।।
शीतल मलय, पवन बहि बीतल, भमर भमए वन गेल ।
तारक शशि कर तिमिर तिरोहित, रोहित दिनमणि भेल ।।
अवसर अरथित, न करह दुरथित, हेरि पुरह हितकाम ।
'गणक' चतुर भन, परवश कएमन, परिदेवन परिणाम ।।
मिथिलापति गुनिगन निज जन गति पारिजात-अनुरूप ।
बूझ नरेन्द्र रसिक रसविन्दुक मेदिनि-मदन सरूप ।।[२]

※

श्रीपति

आप मिथिला-निवासी थे ।[४] आपने कालिदास के 'रघुवश' की टीका लिखी थी । इससे अधिक आपका कोई परिचय नहीं मिला ।

---

१. मैथिली-गीत-रत्नावली (वही), पद स० ६५, पृ० ३७-३८ ।

२ वही, पद स० ६६, पृ० ३७-३८ ।

३. डॉ० जयकान्त मिश्र ने मिथिला में, इस नाम के दो कवियों के, विभिन्न कालों में होने का पता दिया है ।

४. A History of Maithili Literature (वही), P. 415-16.

उदाहरण

कनकलता सन तनुवर धनिला, चिकुर रचल जलधर बिनु पनिला।
नहि कचभार सम्हारए वेरि वेरि लचकय रे की।
अमल कमल दल सरस नयनमा, चातक पीक मधुर सुर वैनमा।
चाहए राह गरासए बिनु दुखे छाड़ए रे की।[१]

※

सदलमिश्र

आप हिन्दी की वर्त्तमान गद्य-शैली के प्रवर्त्तको मे प्रमुख थे। यो आपके वहुत पहले भी हिन्दी-गद्य की परम्परा मिलती है। किन्तु उस गद्य की भाषा आज की गद्य-भाषा मे वहुत-कुछ भिन्न थी। आपके समकालीन गद्यकारो मे भी केवल आपके गद्य की ही भाषा ऐसी हुई, जो पुरानी होती हुई भी वर्त्तमान खडीवोली के वहुत निकट रही। उस युग मे आपके गद्य की भाषा लोगो को विशेष रुची और समकालीन तथा परवर्त्ती लेखको ने उसी को अपनाया।

आपका जन्म अनुमानत १७६८ ई० मे, आरा नगर के मिश्रटोला मुहल्ले में हुआ था।[२] आपके पूर्वज शुकदेवमिश्र शाहावाद जिले के 'धुपडीहा' ग्राम से 'भदवर' (शाहावाद) आये, जहाँ आप तथा आपके वशज वहुत दिनो तक रहे।[३] इतिहास-प्रसिद्ध वावू कुँवरसिह के समय मे ये लोग आरा आकर वस गये।[४]

---

१. A History of Maithili Literature (वही), P. 416.

२. ये भगवान् श्रीकृष्ण के अनन्य भक्त और एकान्त प्रेमी थे। किसी कारणवश धुपडीहा (शाहावाद) ग्राम के लोगों से इनकी अनवन हो गई और ये भदवर (शाहावाद) चले आये।

३. नासिकेतोपाख्यान (सदलमिश्र, स० श्यामसुन्दरदास, तृतीय स०, १९९५ वि०, भूमिका), पृ० १-२। आपके पौत्र रघुनन्दनमिश्र को मैंने स्वय देखा था। उस समय (सन् १९१८-२० ई०) वे अत्यन्त वृद्ध थे। लगभग ७५ वर्ष की अवस्था रही होगी। उन्होंने अपने घर के अन्दर मुझे ले जाकर वह स्थान दिखाया था, जहाँ सदलमिश्र पूजापाठ किया करते थे। उनके एकमात्र सुपुत्र भगवतीमिश्र टाउन स्कूल (आरा) में मेरे विद्यार्थी थे—वड़े प्रतिभाशाली और होनहार—सदलमिश्र की आत्मा के प्रकृत प्रतिविम्व-तुल्य। परतु उन्हीं दिनों माता-पुत्र का देहान्त हो गया, जिससे सदलमिश्र की वश-परम्परा समाप्त हो गई। सदलमिश्र का वह घर मिश्रटोले की उस पतली गली में था, जिसके पच्छिम छोर पर वैद्यराज प० ब्रह्मदेवमिश्र का घर है और पूरवी छोर पर विद्वद्वर प० चक्रपाणिमिश्र का। ये दोनों ही क्रमशः आयुर्वेद तथा साहित्य-शास्त्र के मर्मज्ञ विद्वान् थे। चक्रपाणिजी के घर के पार्श्व भाग में प्रो० अक्षयवटमिश्र की ससुराल का मकान था। अक्षयवटजी ने ही रघुनन्दनमिश्र से मेरा परिचय कराया था, फिर भगवतीमिश्र के साथ में उनके पास प्राय जाया करता था और वे अपने दादाजी (सदलमिश्र) के विषय में सुनी-सुनाई बातें कहानी की तरह कहा करते थे। —संपादक

४. आपके वशज १९२० ई० तक आरा में वर्त्तमान थे।

आपके पिता का नाम प० नन्दमणिमिश्र था। आप तीन भाई थे, जिनमे आपका नम्बर दूसरा था।[१] आपके वशवृक्ष मे ही हिन्दी के प्रसिद्ध लेखक प० ईश्वरीप्रसाद शर्मा का नाम आता है।

आप एक प्रखर प्रतिभाशाली व्यक्ति और सस्कृत-साहित्य के प्रकाड विद्वान् थे। अनेक राजदरबारो मे अपने पाण्डित्य का परिचय देते हुए आप लगभग चौबीस वर्ष की अवस्था मे कलकत्ता पहुँचकर फोर्ट विलियम कॉलेज के प्रिसिपल जॉन गिलक्रिस्ट से मिले। आपकी विद्वत्ता पर मुग्ध होकर उन्होने कॉलेज के एक हिन्दी-अध्यापक के पद पर आपकी नियुक्ति कर ली। लगभग तीस-पैंतीस वर्षो तक कलकत्ता रहकर आप घर लौटे, जहाँ आपकी मृत्यु ८० वर्ष की आयु मे हुई। आपका मृत्यु-काल अनुमानत सन् १८४७-४८ ई० माना गया है।

कलकत्ता मे, फोर्ट विलियम कॉलेज के 'वर्नाक्यूलर सोसायटी' के अधिकारियो ने हिन्दी-गद्य मे पाठ्य-पुस्तके लिखने का भार आगरा-निवासी लल्लूलालजी के अतिरिक्त आप को भी सौंपा था, जिसके परिणाम-स्वरूप आपने कुछ ग्र थो का रूपान्तर सस्कृत से हिन्दी और हिन्दी से सस्कृत मे किया। सस्कृत से हिन्दी मे रूपान्तरित आपकी पहली पुस्तक है 'चद्रावती' या 'नासिकेतोपाख्यान'।[२] इस प्रकार की आपकी दूसरी पुस्तक है 'रामचरित' या 'अध्यात्मरामायण'।[३] हिन्दी से सस्कृति मे किन पुस्तको का रूपान्तर आपने किया, इसका कुछ पता नही चलता। हाँ, १८६७ वि० मे गोस्वामी तुलसीदास के 'रामचरित-मानस' का एक संशोधित-मुद्रित सस्करण आपके नाम पर अवश्य मिलता है।[४]

उदाहरण

(१)

किसी समय बद्रिकाश्रम में शौनक आदि ऋषियों ने सूत से पूछा—अब कुछ विशेष हरि का यश आप हमें सुनाइए। तब वे लगे कहने कि एक बेर नारद योगी पर उपकार के लिये सिगरे लोक फिरते फिरते सत्यलोक मे जा पहुंचे। तो वहां देखा कि मूरति धारण किये चारो दिश वेद खडे है, प्रातःकाल के सूर्य का ऐसा वर्ण ओ भक्तन को मनभावन फल दायक सकल शास्त्र का सार जाननिहार जगत का नाथ ब्रह्मा सरस्वती को साथ ले बीच सभा मे बैठा है और मारकण्डेयादि मुनि बार-बार उसको बडाई कर रहे हैं।

---

१ अन्य भाइयों के नाम थे—बदलमिश्र और सीतारामिश्र।

२. यह पुस्तक बा० श्यामसुन्दरदास के सम्पादन में १६०५ ई० में काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा से पहली बार प्रकाशित हुई थी।

३ इनकी एक हस्तलिखित अविकलप्रति 'इण्डिया-आफिस लाइब्रेरी' (लन्दन) में है, जिसकी प्रतिलिपि कराकर बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् (पटना) में मँगाई गई है। परिषद् से आपके दोनों ग्रंथ 'सदलमिश्र-ग्रंथावली' के नाम से प्रकाशित हो रहे हैं।

४. इसकी एक प्रति काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा में है।

तब दूर से देखते ही नारद ने दंडवत किया ओ भक्ति से स्तुति कर हाथ जोड़ तिस के आगे जा खड़ा भये कि इतने में अति हर्षित हो मुस्कुरा के ब्रह्मा बोल उठा—ए योगी! तू क्या पूछना चाहता है? मुंह खोल के कह, प्रसन्न होए सब मैं तुझे बताऊंगा।[१]

(२)

सिंधु सुता मुख चन्द्र चकोर, जा लग सिद्धि रहें कर जोर।
विविध रूप होए विघन विदारे, प्रतिपालक सोहेव हमारे॥
जगमग जोति जासु तन लसे, संत जनन के मानस बसे।
आनन्द रूप गजानन बड़े, भक्तन काज रहत जो खड़े॥
नृपति वीर जबते तूँ भए, होत सिंगार जगत को नये।
फूल उठी वसुधा हरषानी, धन-धान्यन ते अति अकुलानी॥
घर घर मंगलचार घनेरे, रंग ओ राग करहिं बहुतेरे।
सुचित होय नर करें कलोलें, मणि भूषण पहरे अनमोलें॥
रण-अंगन पगु देत तुम्हारे, इंद्रहु हो पर त्राहि पुकारे।
थर-थर कांप उठें दिगपाल, निज शस्त्रन धरती मह डाल॥[२]

(३)

तब मुनि से रहा नहीं गया, सो निकट चले आए और देखकर जी में कहा कि हो न हो यह अहल्या है कि द्रौपदी, कि इन्द्र की अप्सरा तिलोत्तमा कहीं से भूल पड़ी। इसके हाथ पाँव के आगे क्या कमल का फूल कि जिनके देखने से तनिक भी नहीं मेरी आँखें तृप्त होती हैं। और चन्द्रमा समान वदन, केहरि कटि मृग का सा चञ्चल नयन बड़ी-बड़ी छाती कि जैसे सोने का दो कलस होय, लाल अधर, तोते की सी नाक कि जिसके नीचे एक तिल कुछ और ही शोभा दे रहा है। इस भाँति रूप देख चकित हो निदान पूछा कि कहो कहाँ से आई हो और क्यों इतनी आतुर हो रोती हो?[३]

(४)

नरक विनासी सुख के रासी हरि चरित्र नहिं गाए।
क्रोध लोभ को नीच संग कर कहो कौन फल पाए॥
त्यजि आचार महा मद माते हृदय चेत ने ल्याए।
आतुर ह्वै नारिन के पीछे मानुष जनम गँवाए॥[४]

❀

---

१. परिषद् में सुरक्षित उक्त 'रामचरित' या 'अध्यात्मरामायण' की अविकल प्रतिलिपि से।
२. वही।
३. नासिकेतोपाख्यान (श्यामसुन्दरदास, प्रथम सं०, १९०५ ई०), पृ० १२।
४. वही, पृ० ४६।

सदानन्द

आपका वास्तविक नाम 'चित्रधरमिश्र' था। घर से विरक्त होने पर आपका नाम बदल गया।

चम्पारन जिले के मझौलिया स्टेशन से तीन मील पश्चिमोत्तर दिशा मे मिर्जापुर के निकट 'चनवाइन' नामक गाँव के आप निवासी थे।[१] बाल्यकाल मे आप अपने गाँव के पास की ही एक पाठशाला (रतनमाला) मे पढते थे। कहते है, एक दिन अपनी पाठशाला के रास्ते मे आपने एक पेड के नीचे एक पत्ते मे रोटी, मिट्टी के बरतन मे पानी तथा उसी के समीप एक पुस्तक पडी देखी। आपने पुस्तक पढी तथा जनेऊ उतारकर रख दिया। उसके बाद रोटी खाई, पानी पिया तथा वही से विरक्त होकर कही चले गये।

आपकी गणना चम्पारन के सतमत के प्रवर्त्तको मे होती है।[२] आपके गुरु के नाम का पता नही चलता। आप एक सिद्ध संत के अतिरिक्त एक सुकवि भी थे। कहा जाता है कि आपकी सिद्धि से प्रभावित होकर तत्कालीन बादशाह ने आपको वृत्ति दी थी।[३] आपके सम्बन्ध मे कई चामत्कारिक घटनाओ की चर्चा आज भी होती है। आपके शिष्यो मे मनसाराम, जीताराम और परपन्तराम प्रसिद्ध सन्त हो गये है। आपने जीवित समाधि ली थी।[४]

आपने हिन्दी मे बहुत-सी पुस्तको का प्रणयन किया था, जिनमे से अधिकाश अग्निकाड मे जलकर भस्म हो गई। शेष पुस्तके, जो भोजपुरी मे रचित है, चम्पारन के मुसहरवा-निवासी श्रीनरसिंह चौबे के पास है।

मँगुराहा (चम्पारन) के श्रीमकेश्वरनाथ मिश्र का कहना है कि आपकी जो पुस्तके अग्निकाड मे स्वाहा हुई, उनमे 'ज्ञानमुक्तावली', 'योगागमुक्तावली', 'ज्ञानस्वरोदय', 'योगागरत्न' आदि प्रमुख है।[५] इनके अतिरिक्त 'भैरोभव', 'जोगीनामा' आदि आपकी पुस्तको की भी चर्चा मिलती है।

आपकी रचना का कोई उदाहरण नही मिला।

※

---

१. सतमत का सरभग-सम्प्रदाय (वही), पृ० १४५।

२. आपके द्वारा प्रवर्तित शाखा के मठ अधिकतर चम्पारन के 'मलाही' और मगुराहा नामक स्थानों में है।

३ इस वृत्ति के दो परवानों की मूल प्रति, बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् (पटना) के हस्तलिखितग्रंथ अनुसंधान-विभाग में सुरक्षित है।

४ आपकी समाधि आज भी चम्पारन के 'चनाइनवान' नामक स्थान में है। समाधि पर सुन्दर मंदिर बना है। आपकी समाधि के पास ही आपकी दो क्वाँरी बहनों की भी समाधि है। कहते हैं, ये दोनों आपकी शिष्या ही थीं। इन सभी समाधियों की पूजा तिल-संक्रान्ति के दिन होती है।

५ परिषद् में प्रेषित श्रीमकेश्वरनाथमिश्र के एक पत्र के आधार पर।

साहबरामदास

आपका वास्तविक नाम 'साहबराम झा' था, किन्तु वैराग्य-ग्रहण के पश्चात् आप 'साहवरामदास' कहलाने लगे। आपकी रचनाओ में आपके नाम के कई रूप मिलते हैं जैसे—'साहवदास', 'साहबजन', 'साहब' आदि।

आपकी गणना मिथिला के चोटी के भक्त-कवियो मे होती है।

आप कुसुमौली-ग्राम (दरभगा) के निवासी थे।[२] 'प्रीतम' नाम के अपने एकमात्र पुत्र की आकस्मिक मृत्यु हो जाने के कारण पुत्र-शोकवश आप भगवान् श्रीकृष्ण के अनन्य भक्त एव वैष्णव वैरागी हो गये। वैराग्य-ग्रहण के पश्चात् आपने योगिराज वलिरामदास[३] से दीक्षा ली। इन्होने आपको योग-साधना मे सिद्ध कर दिया, जिसके परिणामस्वरूप आप दो-दो घटे भगवान् श्रीकृष्ण के आगे समाधिस्थ हो पडे रहते थे। आपने अनेक तीर्थ-यात्राएँ भी की। तीर्थ-यात्रा से वापस आकर भी आप निश्चिन्त न रह सके। मिथिला मे ही अनेक स्थानो पर भटकते रहे। इसी कारण मिथिला मे आपके कई मठ मिलते है। इन मठो मे पचाढी[४]-मठ (दरभगा) विशेष प्रसिद्ध है। आपके सम्बन्ध मे अनेक किंवदन्तियाँ आज भी प्रचलित है।[५]

आपने कृष्ण-भक्ति-सम्वन्धी लगभग ५०० स्फुट पदो की रचना सन् ११५३ फसली (१७४६ ई०) मे की थी।[६] इन पदो पर व्रजभाषा की गहरी छाप है।

---

१. आपके विस्तृत जीवन-परिचय के लिए देखिए—डॉ० ललितेश्वर झा द्वारा सम्पादित और भारत प्रकाशन-मंदिर (लहेरियासराय) द्वारा प्रकाशित, 'साहबरामदास की पदावली' की भूमिका, पृ० १-२६।

२. A History of Maithili Literature (वही), P. 443.

३. ये भी बाल-वैरागी थे और बचपन में ही क्वेटा-स्थित अपना घर छोडकर निकल पड़े थे। 'मुड़िया-रामपुर' के एक वैरागी महात्मा से दीक्षा प्राप्त कर ये तीर्थाटन करने निकले और जीवन के अतिम दिनों में सिद्धि प्राप्त कर अपनी जन्मभूमि में एक कुटिया बनाकर रहने लगे। इनकी समाधि आज भी उस स्थान पर विद्यमान है।

४. पचाढी के अतिरिक्त आपके अन्य प्रसिद्ध मठ एकमा, दिगौन, क्वेटा, जमैला और कैथाही में हैं।

५. कुछ प्रसिद्ध किंवदन्तियों के लिए देखिए—साहेबरामदास की पदावली (डॉ० ललितेश्वर झा, प्रथम स०, १९५५ ई०, भूमिका), पृ० १६-२०।

६. इन पदों के दो सग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। इनमें प्रथम, जिसमें ४३४ पद हैं, प० चन्दा झा के सम्पादन में यूनियन प्रेस, (दरभगा) से प्रकाशित हुआ था। दूसरा सग्रह, जिसमें आपके चुने हुए १९३ पद हैं, डॉ० ललितेश्वर झा के सम्पादन में भारत प्रकाशन-मंदिर (लहेरिया-सराय) से प्रकाशित हुआ है।

उदाहरण

(१)

है मेरा मन राजी निस दिन वृंदावन के वासी से।
ध्यान धरो हरि चरन मनाओ काम कौन मोरा काशी से।
जनम जनम की प्रीति बनी है मुरलीधर सुखरासी से।
कहि न रहो मन मन भौ परवश नेह लग्यो अविनासी से।
या ब्रज में उपहास करो कोउ डर नाहि मोहि हासी से।
राजिव नयन रसिक नन्दनन्दन बाँधी प्रेम की फाँसी से।
अब तौ संग कबहि नहि छुटिहैं यमुना कुंज विलासी से।
एक पलक सगरो निसि वासर विसरै नहि मोहि छाती से।
साहेबदास गुपुत मन हरि के कहिए न आन उपासी से॥[१]

(२)

जखन आएल रघुनन्दन रे मारिच मृगमारी।
सून भवन बिनु जानकि रे, बइसल हिय हारी॥
कलपि पुछथि रघुनन्दन रे, सुनु लछुमन भाई।
आज कहाँ छथि जानकि रे, वन रहलि छपाई॥
खन खन भवन विलोकथि रे, खन करथि पुछारी।
चन्द्रवदनि धनि बिछुड़लि रे, सिर करतल मारी॥
पल पल वितय कलप सम रे, जामिनि भेल सेसे।
'साहेबराम' रमाओल रे, चल सीताक उदेसे।[२]

※

हरलाल

आपका जन्म हरिहरपुर (गोपालगज) ग्राम-स्थित, एक मध्यम-वर्गीय परिवार मे १८०१ वि० (१७४४ ई०) मे हुआ था। आप बिलकुल अशिक्षित थे, किन्तु स्वाध्याय के बल पर एक विद्वान् संत हो गये।

कहते है, चितापुर-मठ के सूरतराम का आपने १८३६ वि० मे शिष्यत्व ग्रहण किया था। अपने जीवन के अन्तिम दिनो मे बडहरवा नामक ग्राम मे गडकी के तट पर एक मठ बनवाकर आप वही स्थायी रूप से रहने लगे थे। आपके सम्बन्ध मे बहुत-सी चामत्कारिक घटनाए चम्पारन मे आज भी प्रचलित है। आपका निर्वाण १८९६ वि० मे हुआ।

मधुक्कडी भाषा मे रचित आपके कुछ स्फुट पद बडहरवा-मठ मे मिलते है।

---

१. साहेबरामदास की पदावली (वही, भूमिका), पृ० १५।
२. A History of Maithili Literature (वही), P. 446.
३. चम्पारन की साहित्य-साधना (वही), पृ० ४३।

उदाहरण

भाई रे पिया के खेल कठिनाई
अरध-उरध बिच कमल फुलानी ताहि बिच भौंरा लुभाई।
सिल-सन्तोष विवेक हिये धरि ज्ञान के दीप जलाई।
पाँच के मारि पचीस के बस करि सत्य सून्य मन लाई।
गुरु प्रसाद साधक की महिमा अनहद नाद सुनाई।
कित मुरलीधर कित पीताम्बर नारद बेनु बजाई।
बालक राम देखो घट भीतर सूरतराम दरसाई।
सत्य सोहागिन मातु शारदा जन हरलाल मिली जाई।[1]

※

हरिचरणदास

आपका उपनाम 'हरिकवि' था।

आप सारन जिले के चैनपुर-ग्राम के निवासी थे।[2] आपका जन्म १७६६ वि० (१७०९ ई०) मे हुआ था। आपके पिता का नाम 'रामधन' था। पहले आप सारन

---

१. चम्पारन की साहित्य-साधना (वही), पृ० ४३।

२. (क) 'साहित्य-सदेश' (जनवरी, १९५६ ई०), पृ० ३०६।
(ख) श्रीमोतीलाल मेनारिया ने 'राजस्थानी भाषा और साहित्य' के पृष्ठ १८६ में लिखा है कि 'ये किशनगढ के रहनेवाले थे।' पर वस्तुत. यह सत्य नहीं है। वे किशनगढ के निवासी निश्चय ही नहीं थे। हाँ, वस अवश्य गये थे। मूलत: वे विहार के ही निवासी थे। वे स्वय ही अपनी लेखनी से 'कर्णाभरण' की अतिम प्रशस्ति में इस प्रकार सूचित करते हैं—

राजत सुबे विहार में है सारनि सरकार
सालग्रामी सुरसरित सरजू सोभ अपार ॥३८॥
सालग्रामी सुरसरित मिली गग सो आय
अतराल में देस सौं हरि कवि को सरसाय ॥३९॥
परगन्ना गोआ तहाँ गाँव चैनपुर नाम
गगा सो उत्तर तरफ तह हरि कवि को धाम ॥४०॥
सरजूपारी द्विज सरस वासुदेव श्रीमान
ताको सुत श्री रामधन ताकौ सुत हरि जाम ॥४१॥
नवापार में ग्राम है चढ्या अभिजन तास
विस्वेसेस कुल भूपवर करत राज विभास ॥४२॥
मारवाड में कृष्णगढ तिह किय हरि कवि वास
कोम जु कर्नाभरन यह कीनौ है जू प्रकास ॥४३॥

देखिए—'सम्मेलन-पत्रिका' (पौष-फाल्गुन, शक १८७९) में श्रीमुनिकान्तिसागर-लिखित 'हिन्दी-साहित्य के इतिहास के अज्ञात आधार-कवि वृन्द के वंशज' शीर्षक लेख का फुटनोट, पृ० ५-६।

जिलान्तर्गत 'वढिया' (नावापुर) के जमींदार विश्वसेन के आश्रय में थे।[1] इसके पश्चात् आप कुछ दिनों के लिए वृन्दावन रहे, जहाँ से कृष्णगढ (मारवाड) गये और महाराज राजसिंह द्वारा सम्मानित होकर वहाँ बस गये।[2] आप १८३५ वि० (१७७८ ई०) में परलोकवासी हुए।

आप एक सफल कवि थे। आपकी काव्य-रचना सरस, प्रौढ और भावपूर्ण होती थी। आपने केशवदास-कृत 'रसिकप्रिया' और 'कविप्रिया', विहारीलाल-कृत 'सतसई' तथा महाराज यशवन्तसिंह-कृत 'भाषा-भूषण' की टीकाएँ रची थी।[3] आपकी तीन अन्य पुस्तकें भी मिलती हैं—'सभा-प्रकाश', 'वृहत्कवि-वल्लभ' और 'कर्णाभरण'[4]। कुछ लोग आपकी रचनाओं में 'मोहनलीला', 'रामायणसार' और 'भागवत-प्रकाश' नामक ग्रन्थों की भी गणना करते और बतलाते हैं कि इनमें प्रथम दो अप्राप्य हैं।[5]

उदाहरण

(१)

आनन्द को कंद वृषभानुजा को मुख-चंद लीला ही तें मोहन के मानस को चोरै हैं।
दूजो तैसो रचिवे को चाहत विरंचि नित ससि कौं बनावै अजौं मन को न मोरै हैं।
फेरत हैं सान आसमान पै चढाय फेरि पानिप चढाइवे को वारिधि में बोरै हैं।
राधिका को आनन के जोत न विलोकै विधि टूक टूक तोरै पुनि टूक टूक जोरै हैं।[6]

(२)

पूरन प्रभू की कृपा पूरन भई है ऐसी वान किरपान लियैं सुन्दर सुजान हैं।
विद्या के विधान बुधिवान छलवान छैल जानत जिहान जग देत जिन्हैं मान हैं।
वस्त्रम सुकवि कहै बाजत निसान जहाँ रंगैं किरपान सुने जग मैं बषान हैं।
कौन करै मान तासों सुन्दर सुजान नारि वार वार वारी जात प्रानन के प्रान हैं॥[7]

※

1. हस्तलिखित हिन्दी-पुस्तकों का संक्षिप्त विवरण (काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा, प्रथम भाग), पृ० १५८-१६३।
2. आज भी किशनगढ-दरबार में एक चित्र है, जिसमें एक कवि पूरे राजकीय सम्मान के साथ एक पालकी में विराजमान हैं और महाराजा स्वयं उस पालकी में नौल्हाद कंधा लगाये हुए हैं। कहा जाता है कि उक्त कवि हरिचरणदासजी ही हैं। —'सम्मेलन-पत्रिका' (वही), पृ० ५।
3. इनकी प्रथम तीन की प्राचीन हस्तलिखित प्रतियाँ श्रीउदयशंकर शास्त्री (काशी) के संग्रहालय में सुरक्षित हैं।
4. इसी पुस्तक की अन्तिम प्रशस्ति में आपने अपना छन्दोबद्ध परिचय भी दिया है। इसकी हस्तलिखित प्राचीन प्रति आगरा-विश्वविद्यालय के हिन्दी-विद्यापीठ के संग्रहालय में सुरक्षित है।
5. 'साहित्य-सन्देश' (वही), पृ० ३०६।—देखिए, श्रीगोपालशर्मा द्वारा लिखित टिप्पणी।
6. राजस्थानी भाषा और साहित्य (मोतीलाल मेनारिया, प्रथम सं०, २००६ वि०), पृ० १८६।
7. 'सम्मेलन-पत्रिका' (वही), पृ० ७।

हरिनाथ

आप मिथिला-निवासी और मिथिला-नरेश महाराज प्रतापसिंह (सन् १७६१-७५ ई०) तथा माधवसिंह (सन् १७७६-१८०७ ई०) के दरबार में थे।

आपका जन्मकाल १८०४ वि० (१७४७ ई०) था। १६वीं शती में आपके एक सम्बन्धी प० हर्षनाथ झा एक प्रसिद्ध कवि हुए। आप मैथिली मे बहुत-सी कविताओ की रचना की थी, जिनमे कुछ यत्र-तत्र उपलब्ध होती है।

उदाहरण

पहिरि चुन्दरि चारु चन्दन, चकृत चहु दिशि नयन खञ्जन,
देखल द्वार कपाट लागल, हरि नै जागल रे।
कत कला कय कत जगाओल कतहु किछु नहि शब्द पाओल।
एहेन कुपुरुष नींद मातल जनि रसातल रे॥
गेलि एकसरि मध्य यामिनि, पलटि आइलि निरसि कामिनि,
एहि अवसर जे नै जागल थिक अभागल रे।
भनहि कवि 'हरिनाथ' मन दय हाथ मारति गेलि रस लय,
पाछाँ की वौ नींद टूटत पलक छूटत रे॥ [2]

❀

१. मिश्रबन्धु-विनोद (वही, द्वितीय भाग, द्वितीय स०, १९८४ वि०), पृ० ८१४।
२. मिथिला-गीत-सग्रह (वही, तृतीय भाग), पृ० ११-१२।

परिशिष्ट

परिशिष्ट—१

(बिहार के वे साहित्यकार, जिनकी पुस्तकाकार अथवा स्फुट रचनाएँ नहीं प्राप्त होतीं, किन्तु संक्षिप्त परिचय प्राप्त हैं।)[1]

८वीं शती

जोगीपा

आपका नाम 'अजोगीपा' भी मिलता है। आपका निवास-स्थान 'उदन्तपुरी'[2] कहा गया है। प्राय सभी विद्वान् उक्त स्थान को आधुनिक 'बिहारशरीफ' का पुराना नाम मानते है।[3] आप सिद्ध 'शवरीपा' के शिष्य थे। चौरासी सिद्धो मे आपका स्थान ५३वां है।

※

९वीं शती

खड्गपा

आपका निवास-स्थान मगध था।[4] आप 'चर्पटीपा' के शिष्य थे। चौरासी सिद्धो मे आपका स्थान १५वां है।

※

---

१. कुछ ऐसे बिहारी सिद्ध मिलते हैं, जिनकी कोई भी पुस्तकाकार अथवा स्फुट रचना नहीं प्राप्त होती। किन्तु सिद्ध-काल के विशेषज्ञों का कहना है कि प्राय: सभी सिद्धों ने पुरानी हिन्दी में रचना की थी, इसी आधार पर यह अनुमान किया जाता है कि इन सिद्धों ने भी निश्चय ही रचनाएँ की होंगी, जो काल-चक्र में पड़कर आज लुप्त हो गई हैं।

२. द्रष्टव्य, 'जयन्ती-स्मारक ग्रन्थ' ([illegible], पृ० ५४३ से ५५५) में श्रीसूर्यनारायण व्यास का 'ओदन्तपुरी (उदन्तपुरी)' शीर्षक लेख।

३. [illegible] ([illegible]), पृ० [illegible]।

४. [illegible], पृ० [illegible]।

चवरीपा

आपके नाम 'जवरि', 'अजपालिपा' आदि भी मिलते हैं। आपका निवास-स्थान मगध कहा गया है।[1] आप 'कन्हपा' की तीसरी पीढ़ी में पड़ते हैं। सिद्धों में आपका स्थान ६४वाँ है। डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी के अनुसार आप 'चामरीनाथ' या 'चामरिपा' से अभिन्न व्यक्ति हैं।[2]

※

मणिभद्रा (योगिनी)

आपका निवास-स्थान राहुलजी ने एक स्थान पर मगध[3] और दूसरे स्थान पर 'अगचेनगर'[4] लिखा है। हमारा अनुमान है कि आप मगध की ही थीं। आप सिद्ध 'कुकुरिपा' की शिष्या थीं। चौरासी सिद्धों में आपका स्थान ६५वाँ है।

※

परिशिष्ट—२

(बिहार के वे साहित्यकार, जिनके परिचय तो प्राप्त नहीं होते, किन्तु रचनाओं के उदाहरण प्राप्त हैं।)

१२वीं शती

मल्लदेव[5]

कुसुमित कानन माँजरि पासे।
मधुलोभेँ मधुकर धाओल आसे॥
सजनी हिअ मोर झूरे।
पिआ मोर बहु गुने रहल बिदूरे॥ ध्रुवं॥
माव-मास कोकिल रय विरल[6] नादे।
मन बसि मनभर[7] कर अवसादे॥
तन्हि हम पिरिति एक पराने।
से आबे दोसर क राखत आने॥
हृदय हार राखल मोरे।
अइसन पिआर मोर गेल छाड़ि रे॥
नृप मलदेव कह सुन ...।[8]

※

---

१ गंगा-पुरातत्त्वांक (वही), पृ० २२३।

२. नाथ-सम्प्रदाय (वही), पृ० १३८।

३ पुरातत्त्व-निबन्धावली (वही), पृ० १५३।

४ गंगा-पुरातत्त्वांक (वही), पृ० २२३। सम्भव है, यह 'अगचेनगर' बिहार के ही किसी स्थान का पुराना नाम रहा हो।

५. विद्यापति ने अपनी 'पुरुष-परीक्षा' में आपको कर्णाट-कुल के संस्थापक नान्यदेव का पुत्र बतलाया है।

६. शुद्ध पाठ 'वर्वरि वन' है।

७ शुद्ध पाठ 'मनमथ' है।

८. The Songs of Vidyapati (वही, Appandix—A), पद सं० ८, पृ० ग।

१३वीं शती

कारनाट

(१)

जगत विदित वैद्यनाथ सकल गुण आगर हे।
तोहे प्रभु त्रिभुवननाथ दया के सागर हे॥
अङ्ग भस्म सिर गंग गले बिच विषधर हे।
लोचन लाल विशाल भाल बिच शशिधर हे॥
जानि सरन दीनबन्धु सरण धय रहलहुं हे।
मनदय करु प्रतिपाल अगम जल पड़लहुं हे॥
सुनिय सदाशिव गोचर मम एहि अवसर हे।
कौन सुनत दुख मोर छाड़ि तोहि दोसर हे॥
'कारनाट' निजदोष औगुन कतेक हम भाषब हे।
तोहे प्रभु त्रिभुवननाथ अपन कय राखब हे॥[1]

(२)

साजे हैं बरात कोटि कोटि गजरथ की, बाजे नगाड़ा शंख तुरही घन छाँह मे॥
पताका फहराने देखि, गाहनि भहराने नाग माला है बाँह मे॥
योगिनी गण करत गान बाउरि सी धरत ध्यान, कैसे वर लायो है हिमाचल की उछाह में॥
'कारनाट' कहत भवसागर के देवगण, फूलन की झपसी भई तपसी के विवाह मे॥[2]

※

१६वीं शती

रत्नाकर[3]

कनकलता अरविन्दा। दवना-माजरि उगि गेल चन्दा॥
केओ बोल भमए भमरा। केओ बोल नहि नहि चलए चकोरा॥
केओ बोल गेयानें बेडला। केओ बोल नहि नहि मेघ मिलला॥
सशय पर जन मही। केओ बोल तोर मुख सम नही॥
कवि 'रतनाजी' भाने। मदन कलङ्क दुअओ असमाने॥
मिलु रति-मदन-समाजा। देवल देवि लखनचन्द राजा॥[4]

※

---

१. मिथिला-गीत-संग्रह (तृ[illegible], प्रथम भाग), पद सं० ६८, पृ० २८।
२. वही (चतुर्थ भाग), पद सं० ६४, पृ० २८।
३. इनका उपनाम 'रतन जी' मिलता है।
४ [illegible] (१९[illegible]), पद सं० १४, पृ० ८। '[illegible] कवि नागन [illegible] लोचन का मैं [illegible]। [illegible] अनुरूप [illegible]।'—वही, पृ० ७१। यह पद [illegible], ३७[illegible], पृ० [illegible]

श्यामसुन्दर[१]

दूरहिँ ऊरु रहल गहि ठास । चरन पाओल थलकमल-उपाम ।।
सेदविन्दु परिपूरल देह । मोतिम फरलि सौदामिनि-रेह ।।
सङ्केत-निकेत मुरारि निहारि । अपनि अधिनि नहि रहलिअ नारि ।।
पुलकित भेल पयोधर गोर । दगध मदन पुनु आँकुर तोर ।।
वजइतेँ वचन भेल सरभङ्ग । कदलीदल जकाँ काँपए अङ्ग ।।
रसमय 'श्यामसुन्दर' कवि गाव । सकल अधिक भेल मनमथ-भाव ।।
कृष्णनरायण[१] ई रस जान । कमलावतिपति गुनक निधान ।।[२]

कुमुदी

जतनहुँ जतैओनरे रे निरवह एकान्हुततेओ अँगिरलह ।
दरसन दिन सओरे रे बोलितह नयन जुडाएत तोहतह ।
हमे अवलावलिरे रे दएजिव तरवि दुसहनरि शिवशिव ।
से सवेविसरु आवे रे रे की हेतु मरओमथथहेमकर केतु ।
कवि कुमुदी कह रे रे थिररह सुपुरुष वचन पसान रेह ।[३]

❋

१७वीं शती

गंगाधर

जय जय देवि दुर्गे दनुज दारिनि भक्त जन सन्ताप
हारिनि प्रबलदनु मुण्डालि मालिनि चण्डादारिनि हे ॥
मत्तमहिषासुर गरासिनि शखचक्रकृपाण पासिनि
चकित श्रृन्दारक विलासिनि समर हासिन हे ।।
श्री त्रिविक्रम नृपति नागर ममलकीर्ति कदम्ब
सागर महित कैरव वन विभाकरमिति समाचर हे ।।
रचित गंगाधर सुगीते धरणिपालक रचिणीते
सकल सुरनर सिद्धि ललिते वेद चरिते हे ।।[४]

❋

---

१. मिथिला की राजपञ्जियों से पता चलता है कि ये महेशठाकुर के कुछ दिन पूर्व एक राजकुलोत्पन्न व्यक्ति थे। सम्भवतः आप इन्हीं के आश्रित कवि थे।

२. मैथिली-गीत-रत्नावली (वही), पद स० २१, पृ० ११-१२। यह पद 'रागतरंगिणी' में भी संगृहीत है।—देखिए, वही, पृ० ११५।

३ रागतरंगिणी (वही), पृ० ६७-६८।

४. वही, ७८।

चतुरानन

(१)

जयमङ्गला जयमङ्गला, होह परसनि देवि तोरितबला ॥
मधुकैटभ महिषासुर अतिबल धूम्रलोचन खयकारी।
शुम्भनिशुम्भ दैत्र कंटकरन खनहिं महाबल देल विदारी ॥
जैसे सुरगन देलह अभयबल सकल असुरगन मारी।
तैसे आस पुरह जगमाता रिपुगन हलह सँभारी ॥
जे अभिमत कए जे नर चिन्तए से नर से फल पावे।
सर्व काज सिधि करह भवानी कवि चतुरानन गावे ॥[1]

※

जयकृष्ण

(१)

नयन निमिष जनि देखइत चउगुन भउ मोहि भान।
पतिमङ्ग रतिरङ्ग गुनितहुँ कलप अलप परिमान ॥
हरि हरि साप आरसमय असमय परिहरि गेल।
तँ हिअ कओन पराभव, जँ दुइ आध न भेल ॥
नाह निकारुन कि कहब, दारुन विकरब सूनि।
कोन परि जीवन राखब, कत झोंखब शिर धूनि ॥
गरल मृणालवलय वस, मलयज मोहि न सोहाव।
निवसवृशें हिमधामा महिमा विसरि सताव ॥
'जयकृष्ण' कवि रसमय भन, धैरज धर वर-नारि।
अचिरहिँ मिलत मधुरपति, गुनगौरव अवधारि ॥[2]

(२)

जय कालिके कर खड्गधारिणी, मत्त गजवर गामिनी।
चिकुर चामर चारु चन्द्र, तिलक भान समागिनी ॥
कनक कुण्डल गण्ड मण्डित, शम्भु गेहिनी कामिनी।
भओँह भ्रमर कमान सञ्जल, दसन जगमग दामिनी ॥
नयन नीरज वदन विधुछवि, तीन नयन विलासिनी।
अधर लाल विशाल लोचिनि, शोक मोचिनि शूलिनी ॥

---

१. रागतरङ्गिणी (वही), पृ० ६१।

२. मैथिल-गान-रत्नावली (वही), पद सं० २८, पृ० ११। यह पद 'रागतरंगिणी' में भी संगृहीत है।—देखिए, वही, पृ० ८७-८८।

विकट आनन अति भेआउनि, हस्त खप्पर धारिणी।
योगिनीगण हास खलखल सङ्ग नाच पिशाचिनी॥
श्याम तनु अभिराम सुन्दरि बाज रुनझुन किङ्किणी।
जङ्घ कदली अङ्ग कुण्डल, पादपद्म विभूषिणी॥
करजोड़ि 'जयकृष्ण' करत गोचर, सिंहवाहिनी वाहिनी।
हरखि हेरिअ मोहि शङ्करि! त्वरित मन दुख नाशिनी॥[1]

※

पूरनमल

साजयति सुरसरिद्मर दानव नागनरवरवासिनी॥
कासकुसुममृडालमुकुता धवल धार प्रवाहिनी॥
तिलतुलित तण्डुल कुसुम चन्दन विबुध पूज्य सुधाविनी।
सुरनगर वीथी···· ·· · · ··· ब्रह्महस्त निवासिनी॥
पुरमथनमरतककलितशोभा कृष्ण चरणतरङ्गिनी।
जगधम्म सरसिज सोम भासा सलिल राशि सोहाग्नी॥
जह्नुकन्या भीष्म जननी धरणि मध्य विभूषिनी।
कविराज पूरन मल्ल भाषित पतित पामर पाविनी॥[2]

※

प्रीतिनाथ

(१)

नवमी तीथि उजागर, सब विधि आगर रे० ललना०
जनमल रघुकुल बालक, अति सुखदायक रे०॥
उदय धाव अवधपुर, दुंदुभि बाजए रे० ललना०
दशरथ-मन आनन्द, दान सभ पाओल रे०।
नगरिनि औरि पसारल, प्रभु कें ओडारल रे० ललना०
पुनि पुनि वसन निहारल, निजकुल तारल रे०॥
विविध यतन हरखाइलि, शुभशुभ भाखलि रे० ललना०
हिनहि जगत प्रतिपालक, त्रिभुवन-बालक रे०॥
'प्रीतिनाथ' कवि गाओल, गावि सुनाओल रे० ललना०
श्याम सुन्दर रघुराज, जगत पद पाओल रे०॥[3]

---

१. प्रो० ईशनाथ झा (दरभंगा) से प्राप्त।
२ रागतरंगिणी (वही), पृ० ५१-५२।
३ प्रो० ईशनाथ झा (दरभंगा) से प्राप्त।

(२)

बारि बएस तेजि गेह, पिआमन ओहे सँदेह ।। ध्रु० ।।
ओरे तन्हिमन अछ ओहे भाँन, एतए समए भेल आन ।।
तोरित पठाओब सँदेश, आबे नहि उचित विदेस ।
जौवन रूप सिनेह, सेहे सुमरि खिन देह ।
प्रीतिनाथ नृप[1] भान, अचिरे होएत समधान ।।[2]

※

भवानीनाथ

नाव डोलाव अहीरे, जीवइते न पाओव तीरे । खर नीरे लो ।।
खेव न लेअए मोले, हँसिहँसि कीवहु बोले । जीअ डोलों लो ।
कमेहिके औलिहुँ आपे, बेडलहुं मोहि बडे सापे । मोरे पापे लो ।।
करितहुँ पर उपहासे, परलिहु तन्हिविधि फासे । नहि आसे लो ।
न बुझसि अबुझ गोआरी, भजिरहु देव मुरारी । नहि गारी लो ।।
भवानीनाथ हेन भाने, नृपदेव जतरस जाने । नव कान्हे लो ।।[3]

※

यदुपति

गौर देह सुढार सुवदनि श्यामसुन्दर नाह ।
जनि जलद ऊपरँ तलित सञ्चर सरुप ऐसन आह ।।
पीठि परु घनश्याम वेनी देखि ऐसन भाँन ।
जनि अजर हाट कपाट करेँ गहि लिखनि लिखु पचवान ।।
मघन मञ्चर ग्गन न थिर रह मनिक मेखल राव ।
जनि मदनराए दोहाए दए नए जवन तसु जस गाव ।।
रमनि नहि अवमाव मानए रयनि वरु अवसान ।
ओजे रमनि राधा रसिक यदुपति मिह भूपनि भान ।।[4]

※

१ इस गीत से यह ज्ञात होता है कि [illegible] ये कहाँ के राजा थे ।
२ रागतरंगिणी (उद्धृ.), पृ० ८० ।
३ वही, पृ० ९५ ।
४. वही, पृ० ६० ।

सदानन्द

जय जय दुर्गे दुर्गतिहारिनि सब सिधिकारिनि देवी।
भुगुति मुकुति दुहु दुखें विनु पाविअ (तुअ) पद-पङ्कज सेवी॥
विष्णु विरञ्चि-विभावसु-वासव-शिव तुअ धरए धेआने।
आदि-सकति भगवति भव-भाविनि केओ न अन्त तुअ जाने॥
तनु अति सुन्दर मरकत मनि जनि तीनि नयन भुज चारी।
शङ्ख चक्र शर कर धनु धारिनि शशिशेखर-अनुसारी॥
मनिमय कुण्डल हार मनोहर नूपुर घनहन बाजे।
किङ्किनि रन रन सुललित कङ्कन भूषन विविध विराजे॥
पञ्चानन-वाहिनि दाहिनि होहु सुमरि महेश-बिमोही।
'सदानन्द' कह चरन-युगल तुअ सरन कएल जग जोही॥[१]

❋

१८वीं शती

जीवदत्त

(१)

जय जय शङ्करि! सहज शुभङ्करि! समरभयङ्करि श्यामा।
बाउरि वेश केश शिर फूजल शववाहिनि हरवामा॥
वसन विहीन छीन छवि लहलह रसन दशन विकराला।
कटि किङ्किणि शवकुण्डल-मण्डित उरपर मुण्डक माला॥
श्रक वह छिधुर धार धरणी धर धरणीधर सम बाढ़ी।
खल खल हास पास दुइ योगिनि वाम दहिन भय ठाढ़ी॥
कट कट कए कत असुर सहारल, कटि कटि केल ढेरी।
घट घट छिधुर धार कत पीउली मगमातलि फेरी फेरी॥
विकट स्वरूप काल देखि काँपथि, के पुनि असुर वेचारे।
तुअ पद प्रेम नेम जेहि अन्तर ताहि अमिअ रस-सारे॥
'जीवदत्त' भन शिव सनकादिक, सभक शरण एक तोही।
निर-अवलम्ब जानि करुणामयि! करिअ कृतारथ मोही॥[२]

❋

१ मैथिली-गीत रत्नावली (वही), पद सं० १६, पृ० ८-९। यह पद 'रागतरंगिणी' में भी संगृहीत है।
—देखिए, वही, पृ० ११२।

२. वही, पद सं० ५६, पृ० ३३-३४।

धर्मनन्द

सखि हे ! कि कहब पहुक समाजे ।
निअर बसन्त कन्त नहि आएल रसमय समय विराजे ।।
दुसह दिवस परवस भेल वालम सुधि बिसरल सभ मोरा ।
ओतहि पाओल पहु हमसनि की धनि जें रहु परदेश मोरा ।।
उपवन परसन, परसन वरसन हिरदय दए पँचबाने ।
कुसुम कुसुम पर मधुकर अनुसर कोकिल कलरव गाने ।।
'धरमनन्द' भन प्रेम अरज जन बड जन ने कर निरासे ।
जइओ गगन बस तइओ प्रेमरस शशधर कुमुद बिकासे ।।'[1]

❀

बलभद्र

ओकि माधव ! देखल रमणि एक ताही ।
जगत मनोहर रूप सार लए विहि निरमाओल जाही ।।
जकर वदन छवि तुलना कारण कुमुद-बन्धु निरधारी ।
हर शिरलोचन ज्वलन वास कए करथि कठिन तप भारी ।।
सिन्दुर विन्दु जड़ाव जटित विच केशरि आड सभारी ।
जनि रवि विधु गुरु एक सङ्ग भए फल गुण रहल विचारी ।।
लोचन रूप पराजित सरसिज मीन वारि परवेशे ।
निज मन मानि ग्लानि हरिणी वन, खञ्जन गमन विदेशे ।।
कुटिल भौंहँ अति वाम विलोकन, काजर रेह मिलाने ।
तीनि भुवन जय केतु काम जनु, सगुन धनुख धर वाने ।।
सुभग नासिका अधर मनोहर-सुषमा वरनि न जाए ।
बिम्ब लोभ जनि कीट बैसल अछि, कवि कहि रहए लजाए ।।
अमियसार सँ वचन अधिक प्रिय, उपमा कहल न जाए ।
अनुदिन शिक्षा कर पिक वीणा, समता अजहु न पाए ।।
कनक किंकिणी लसित पीत पट, तामें झाँपल देहा ।
महिम इन्द्र धनु नव घन पर जनु, चपल चञ्चला-रेहा ॥
अङ्ग अङ्ग छवि कतेक कहब तोहि, देखि करिय परमाने ।
सखी वचन सुनि मुदित मनहि हरि, कवि 'बलभद्र' बखाने ।।[2]

❀

१ [illegible] (…), पद सं० ५४, पृ० ३१ ।
२ वही, पद सं० ७३, पृ० ८२-८३ ।

रमण

जखन एहन घड़ि, पलटि आओत हरि, देखब नयन भरि,
आगे सजनी, विरह वेदन छुटि जाएत रे की ।
हरखि जाएब घर, मिलब गरहिँ गर, सुपहु धरब कर,
आगे सजनी कुसुमक तलप ओछाएब रे की ।
बैसब निकट भए, मुख सम्मुख दए बीअनि कर कए,
आगे सजनी हरखि हेरब मिठ भाखब रे की ।
काहि कहब दुःख, विसरल सब सुख, नै देखिअ पहु मुख,
आगे सजनी अह निशि पिअ पथ हेरिअ रे की ।
मोरे लेखेँ आङन, भए गेल त्रिभुवन वेधल मदन मन,
आगे सजनी, घर भए गेल अन्हारे रे की ।
परक रमनि सनि, न होअ परसमनि, जइओ सुन्दरि धनि,
आगे सजनी, ई बुझि बैसु हिअ हारिअ रे की ।
दछिन पवन बह, चित नहि थिर रह, हमरो वाम विह,
आगे सजनी, विफल यौवन मोर बीतए रे की ।
सुकवि 'रमण' कह बढ़ जन दुख सह, धैरज धए रह,
आगे सजनी, अचिर आओत तोर वालम रे की ।[1]

❊

वागीश्वर

जय जय निगुण-सगुण तनु-धारिणि ! गगन-विहारिणि ! माहे ।
कतकत विधि हरि हर सुर पतिगण लिरिजि लिरिजि तोहेँ खाहे ।।
निगुण कहव कत सगुण सुनिअ जत ततमन कए रहु वेदे ।
थाकि थाकि वैसल छथि झँखइत, नहि पावथि परिछेदे ।।
तोहरहि सँ सभतन, तोहरहि सँ तन्त्र मन्त्र कत लाखे ।
केओ नारि-तन, केओ पुरुष-तन अपन अपन कए भाखे ।।
सुदृढ़ भक्ति रसवश तुअ अनुपम, ई बुझिअ परमाने ।
भक्ति मुक्ति वर दिअओ गोसाँउनि ! कवि 'वागीश्वर' भाने ।।[2]

❊

---

१. मैथिली-गीत-रत्नावली (वही), पद सं० ६१, पृ० ३५ ।
२. वही, पद सं० ८०, पृ० ४६ ।

शङ्कर

गिरिनन्दिनि शुभदीन हरखि मिथिलापुर आई ।
चन्द्र कोटि छवि-विमल वदन लखि, आनन्द उर न समाई ॥
नयन चकोर शरद विधु मण्डल, एकटक रहिअ लगाई ।
मोहित मधुकैटभ मद भञ्जिनि सुर गण शक्ति समूले ॥
महिष महाहन्त सबल विपद लखि, सुमन सुवरखए फूले ॥
शोभा धाम कामना सुरतरु, जनमन दायिनि चैन ॥
मणिमय अजिर कनक गिरिवासिनि, नाशिनि धूमरनैन ।
चण्डमुण्ड शिरखण्डिनि भगवति, रक्तबीज संहारी ॥
शुम्भनिशुम्भदनुज कुलदारिणि, सिहक पीठि सवारी ।
सुर-गन्धर्वयक्ष किन्नरगण, कर गोचर कर जोडी ।
पावि अभय वर दहिन हाथ तुअ, अति हरखित चित मोरी ॥
तारा-पद-सरोज-शरणागत, सेवक 'शङ्कर' गाई ।
नित अभिनव मङ्गल मिथिलापुर, घर घर बाज बधाई ॥[1]

※

शूलपाणि

सौरभ भमर लोभाएल सजनी गे, विधिवश मधुरस आएल ॥
सुपहु सकल गुण-सागर सजनी गे, उचित ने अधिक अनादर ॥
विहुँसि वदन करु परसन सजनी गे, लुबुध मधुप तुअ दरसन ॥
माधवि विरओ महधि मधु सजनी गे, भावक मुखल भमर बँधु ॥
'शूलपाणि' कह धनि सुनु सजनी गे, समय न पाविअ पुनुपुनु ॥[2]

※

शोभनाथ

निय मन मानिनि ! करिअ विचार । एहि जगजीवन प्रेम पसार ॥
जइओ बन्धु जन कर उपहास । तइओ न नागरि करए निरास ॥
सपनहुँ करिअ न दरसन बाध । कुल-कामिनि नहि गुन अपराध ॥
सुमिरिअ पुरुष विलासक रीति । तुअ छन रहि दुर उपजल प्रीति ॥
'शोभनाथ' भन तजि मन लाज । अबहुँ राखु धनि अपन समाज ॥[3]

※

---

1. [illegible]
2. [illegible]
3. [illegible]

परिशिष्ट—३

(बिहार के बाहर के वे साहित्यकार, जिनका कार्यक्षेत्र बिहार था।)

नवीं शती

कण्हपा

आपके नाम 'कानफा', 'कानपा', 'कान्हूपा', 'कानूपा', 'काण्हपा', 'कृष्णवज्र', 'कर्णपा', 'कृष्णपा', और 'कृष्णाचार्य' भी मिलते हैं। कहते हैं, आपका रग काला होने के कारण 'कृष्णपा' और कान लम्बे होने के कारण आप 'कर्णपा' कहे गये।

अपका जन्म-स्थान डॉ० विनयतोष भट्टाचार्य ने उडीसा[1], म० म० हरप्रसाद शास्त्री ने वगाल[2] और महापण्डित राहुल साकृत्यायन ने एक स्थान पर[3] कर्णाटक और दूसरे स्थान पर सोमपुरी[4] बतलाया है। आपका जन्म-स्थान चाहे जहाँ-कही भी हो, इतना निश्चित है कि आपका कार्य-क्षेत्र बिहार ही था। आपकी रचनाए भी पुरानी-हिन्दी मे ही मिलती है।

आपने अपने को 'कापाली' या 'कापालिक' कहा है। आपके एक पद मे आपके गुरु का नाम 'जालन्धरिपा' या 'हाडीपा' मिलता है। आपके शिष्यो मे वीणापा, भदेपा, धर्मपा, महीपा, आदि प्रसिद्ध हैं। इनके अतिरिक्त आपकी दो शिष्याओ 'नखला' और 'मेखला' की चर्चा भी मिलता है।

अपनी विद्वता एव कवित्व-शक्ति के कारण ही आप अस्पष्ट सिद्धो में सर्वश्रेष्ठ गिने जाते हैं। चौरासी सिद्धो में आपका स्थान १७वाँ है।

'तिब्बती 'स्तन्-ग्युर' मे आपके छह ग्रथ दर्शन के और ७४ ग्रथ तन्त्र के सगृहीत हैं। इन ७४ तन्त्र ग्रंथो मे निम्नलिखित ६ ही अपभ्रश या पुरानी हिन्दी मे है —(१) गीतिका (२) महाढुढन (३) वसततिलक (४) असवध-दृष्टि (५) वज्रगीति और (६) दोहा-कोश।

उदाहरण

नगर बाहिरे डोम्बि तोहोरि कुडिया। छाइ छोई जाई सो बाह्मण नाडिया॥
आलो डोम्बि तोए सम करिब म संग। निघिण काण्ह कपालि जाई लाग॥
एक सो पदुम चौषठि पाखुडी। तहिँ चडि णाचअ डोम्बि वापुडी॥
हालो डोम्बि तो पूछमि सद्भावे। आइससि जासि डोम्बि काहरि नावेँ॥
ताँति विकणअ डोम्बी अवर न चँगेडा। तोहोर अन्तरे छडि नड पेंडा॥
तूँ लो डोम्बी हाँउ कपाली। तोहोर अन्तरे मोए घेणिलि हाडेरी माली॥
सरवर भाँजिअ डोम्बी खाअ मौलाण। मारमि डोम्बी लेमि पराण॥[5]

※

१. Budhist Esoterism (वही), P. 75.
२. 'बौद्धगान ओ दोहा (वही), पृ० २४।
३. गगा-पुरातत्त्वाक (वही), पृ० २२२।
४. पुरातत्त्व-निबंधावली (वही), पृ० १४६।
५ हिन्दी-काव्य-धारा (वही), पृ० १५०।

संक्षिप्त जीवनी मिली थी, उसके अनुसार आपका जन्म-स्थान कपिलवस्तु (वर्त्तमान तिलौराकोट, तौलिहवा, नैपाल की पश्चिमी तराई) के पास 'झोतकरणी' नाम का एक गाँव था।[1] किन्तु इतना तो निश्चित है कि आपका भी कर्मक्षेत्र बिहार ही था। आपके पिता का नाम 'नानूक' और माता का नाम 'सावित्ती' (सावित्री) था। कहते है, १८ वर्ष की अवस्था मे आपने सम्पूर्ण शास्त्रो को पढ लिया। सबसे पहले ग्यारह वर्ष की अवस्था मे आपने एक दडी का शिष्यत्व ग्रहण किया। फिर क्रमश. सिद्ध नारोपाद, सिद्ध रत्नाकर शान्ति और प्रसिद्ध प्रमाणशास्त्री ज्ञानश्रीमित्र का शिष्यत्व, आपने विभिन्न शास्त्रो के अध्ययन के लिए, स्वीकार किया। कही-कही 'डमरूपा' भी आपके गुरु कहे गये हैं। आपके शिष्यो मे 'दीपकर श्रीज्ञान' और सिद्ध 'चेलुकपा' उल्लेखनीय है।

अपने शिक्षा-काल में शिक्षा प्राप्त करने तथा पीछे धर्म-प्रचार करने के लिए आपने अपने देश के विभिन्न स्थानो तथा बाहर तिब्बत की भी यात्रा की। राजगृह में 'कालशिला' के दक्षिण बहुत दिनो तक आपने एकान्तवास भी किया था। यही आपने अपने शिष्य दीपकर श्रीज्ञान को छह वर्ष अपने निकट रखकर शिक्षा दी थी।

आप बडे ही विद्वान् तथा सिद्ध पुरुष थे। कदाचित् इसी कारण आपकी गणना विक्रमशिला के आठ महापण्डितो मे हुई।

आपने कितने ही ग्रथो की टीकाएँ लिखी थी, जिनकी सख्या आज अज्ञात है। तिब्बती 'स्तन्-ग्युर' मे लिखित आपके निम्नलिखित ग्रथ अपभ्रश या पुरानी हिन्दी मे सगृहीत है— (१) अबोध बोधक, (२) गुरुमैत्री गीतिका, (३) चतुर्मुद्रोपदेश, (४) चित्तमात्रदृष्टि, (५) दोहातत्त्वनिधितत्त्वोपदेश और (६) चतुर्वज्रगीतिका।

आपकी रचना का कोई उदाहरण नही मिला।

※

१५वीं शती

लालचदास

आपकी रचनाओ मे 'लालच', 'जनलालच', 'लालन' आदि नाम भी मिलते है।

आपका जन्म-स्थान तो उत्तर-प्रदेश मे रायबरेली जिले का डलमऊ-ग्राम था, किन्तु आपका कार्यक्षेत्र मुख्य रूप से बिहार ही रहा। बिहार मे अधिकतर आप दरभगा जिले के 'रोसडा' नामक स्थान मे रहते थे। रोसड़ा के पास एक मदिर है, जो आपका निवास-स्थान बतलाया जाता है।[2]

---

१ दोहाकोश (वही), पृ० ४७१।

२ रोसडा (दरभगा) निवासी श्रीयदुलाल आर्य से प्राप्त सूचना के आधार पर।

बिहार के विभिन्न सग्रहालयो मे आपके दो हस्तलिखित ग्रंथ प्राप्त होते हैं। उनके नाम है—'हरिचरित्र'[1] और 'विष्णुपुराण'[2]। दोनो ही ग्रंथ अवधी-भाषा मे, दोहे-चौपाई मे लिखे गये है। प्रथम 'श्रीमद्भागवत' के दशम स्कन्ध का हिन्दी-अनुवाद है और द्वितीय 'विष्णुपुराण' का साराश। 'रामचरितमानस' से १०८ और 'पद्मावत' से ७० वर्ष पूर्व रचित होने के कारण, भाषा और साहित्य दोनो दृष्टियो से प्रथम का विशेष महत्त्व ज्ञात होता है।

उदाहरण

(१)

चरनन्ह अति सिंगार बनावा। एडिन्ह जनु मजीठ रचि लावा॥
कहि न जाय नख जोति अपारा। अँगुरिन्ह उदित भयउ जनु तारा॥
नूपुर शब्द भयउ झकारा। सोवत मदन जगावन हारा॥
अति अनूप गुलफो को थंभा। जघ भयउ केदलि को थंभा॥
लटकि रही कटि ऊपर चँवरो। लकहीन जनु डोले भँवरी॥
नोवि गाँठ दिन्ह विधि मोरी। अति गंभीर नाभि सुठि थोरी॥
पीन पयोधर सुभग सोहाये। कनक कलश जनु नेत बैठाये॥
शारद रूप बखानऊँ, जो सबकी गति भान।
मैं मतिहीन अधम नर, अति अचेत अज्ञान॥[3]

(२)

करहु क्रिपा सब हरि गुन गावो। परमहंस कह भेद सुनावो॥
गृह सुत मातु पिता नहि जाके। रेख रूप नहि कछु ताके॥
सीस न आखि बदन नहि रसना। जनम करम कछु आहि न रचना॥
स्रवन वचन कर पल्लव नाहीं। परम पुरान पुरुख निजु आहीं॥
नाभि कवल तै ब्रह्म उपाने। निरगुन के प्रभु इहै न जाने॥
दिव्य पुरुख एक खोजत आए। परमहस को अंत न पाए॥
हंस रूप हरि आए देखावहि। चतुरवेद ब्रह्मा समुझावहि॥
इहे कथा हरि नारद पाई। व्यास देव कह आनि सुनाई॥

---

१. डॉ० शिवगोपालमिश्र ने अपने 'अवधी के प्राचीन कवि लालचदास' शीर्षक लेख में बतलाया है कि इस ग्रंथ को लालचदास स्वय पूर्ण नहीं कर सके थे। उन्होंने इसे पूर्ण करने का श्रेय हस्तिनापुर-निवासी 'आसानन्द' नामक व्यक्ति को दिया है।—देखिए, 'साहित्य-सदेश' (दिसम्बर, १९५८ ई०), पृ० २६७।

२. इन दोनों ग्रंथों की हस्तलिखित प्रतियाँ बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् (पटना) के हस्तलिखित ग्रंथ-अनुसधान-विभाग तथा बिहार के अन्य संग्रहालयों में भी सगृहीत हैं।

३. परिषद् के हस्तलिखित ग्रंथ-अनुसंधान-विभाग में संगृहीत 'हरि-चरित्र' की हस्तलिखित-प्रतियों से।

सुनि सुकदेव वचन सुख लागी। उपजी भगति भए अनुरागी॥
उह तो हरिपद सदा वियोगी। सब तजि भए विहगम जोगी॥
अम्रित कथा भागवंत, प्रगटित एहि संसार।
चरन सरन जन लालच, गावहि गुन बिस्तार॥[1]

*

१६वीं शती

भगीरथ[2]

आप सम्राट् अकबर के सेनापति राजा मानसिंह के आश्रित कवि थे। मानसिंह सन् १५८८ ई० से १६०५ ई० तक बिहार के सूबेदार थे।

कहा जाता है कि आप एक कुशल कवि थे। 'कसनारायण-पदावली' मे आपके दो पद[3] सगृहीत है।

आपकी रचना का उदाहरण नही मिला।

*

१७वीं शती

दिनेश

आप 'मगपुरपट्टन'[4] नामक स्थान के निवासी कवि दामोदर के पुत्र और भोजपुराधीश महाराजाधिराज प्रबलसिंहदेव के आश्रित थे। आपने 'रसिक-सजीवनी'[5] नामक ग्रंथ लिखा था, जिसमे भोजपुर (शाहाबाद) के राजवश की कीर्त्ति-कथा के साथ काव्य-शास्त्र के सिद्धान्तो का निरूपण है। आपके द्वारा रचित एक और ग्रथ 'नखशिख' कहा जाता है।[6]

---

१ 'साहित्य' (वही, अक्टूबर, १९५८ ई०), पृ० २३-२४।

२ मिथिला के राजा महेशठाकुर के एक छोटे भाई का नाम भगीरथठाकुर था। कहा नहीं जा सकता कि दोनों भिन्न व्यक्ति थे या अभिन्न।

३ ११७ और १४६ संख्यक पद।

४. इस स्थान का कोई पता नहीं मिला।

५. सन् १८९६ ई० में श्रीजगन्नाथदास 'रत्नाकर' ने इसका सम्पादन कर हरिप्रकाश यन्त्रालय (काशी) से इसे प्रकाशित किया था।

६ रत्नाकरजी ने 'रसिक-सजीवनी' की भूमिका में लिखा है—"शिवसिंह ने जिस दिनेश के 'नखशिख' का जिक्र किया है, उससे सजीवनीकार की रचनाओं का अत्यधिक साम्य है। अतः दोनों को एक मानना गलत नहीं हो सकता।"

—देखिए 'रसिक-सजीवनी' की भूमिका, पृ० ५।

उदाहरण

राधे की ठोढी को बिन्दु 'दिनेश' किधौं बिसराम गोबिन्द के जी को।
चाह चुम्भौ कनको मनि नीलको कैधों जमाव जम्यो रजनी को।
कैधों अनंग सिंगार के रंग लख्यो बरबोच बरयो करपीको।
फूले सरोज मे भौंरी बसी किधौं फूल समीमें लग्यो अरसी को।।[१]

※

१८वीं शती

देवदत्त

आपका पूरा नाम 'देवदत्त' था, किन्तु आप 'दत्तकवि' के नाम से ही प्रसिद्ध थे।

आपका जन्म-स्थान तो असनी और कन्नौजी के बीच गगा तटवर्त्ती ग्राम 'जाजमऊ' था,[२] किन्तु टिकारी (गया) के कुँवरसिंह के आश्रित कवि होने के कारण आप अधिकतर टिकारी मे ही रहते थे। चरखारी (मध्यप्रदेश) के राजा खुमानसिंह के भी आप कुछ दिनो तक आश्रित थे।

आपकी रचनाएँ है—'सज्जनविलास', 'वीरविलास', 'ब्रजराज पचाशिका', 'लालित्य-लता' और 'द्रोणपर्व भाषा'।

मिश्रबधु और आचार्य शुक्ल ने इनमे लालित्य-लता की वडी प्रशसा की है और इसीके आधार पर आपको 'पद्माकर की श्रेणी का कवि' बतलाया है।

उदाहरण

(१)

ग्रीषम मे तपै भीषम भानु, गई बनकुँज सखीन की भूल सों।
घाम सों बाम-लता मुरझानी, बयारि करैं घकश्याम दुकूल सों।
कंपत यों प्रगट्यो तनस्वेद उरोजन 'दत्त' जू ठोढी के मूल सों।
द्वै अरबिंद-कलीन पै मानो गिरै मकरंद गुलाब के फूल सों।[३]

(२)

लाल है भाल सिंदूर भरो मुख सुंदर चारु जु बाहु बिसाल है;
साल है सत्रुन के उर को इतै सिद्धित सोम-कला धरे भाल है।
भाल है दत्त जू सूरज कोटि की कोटिन काटत संकट जाल है,
जाल है बुद्धि बिवेकनि को यह पारबती को लडाइतो लाल है।[४]

※

---

१. शिवसिंह सरोज (वही), पृ० १२४।

२. आचार्य पं० रामचन्द्र शुक्ल आपका जन्म-स्थान माढो (कानपुर) मानते हैं। —देखिए 'हिन्दी-साहित्य का इतिहास' (आचार्य पं० रामचन्द्र शुक्ल, संशोधित और प्रवर्द्धित सं०), १९९७ वि० पृ० ३५३।

३. वही।

४. मिश्रबन्धु-विनोद (वही, द्वितीय भाग, तृतीय सं० १९८४ वि०) पृ० ६४३।

परिशिष्ट—४

(बिहार के वे साहित्यकार जिनके नाम के अतिरिक्त और कोई परिचय एवं उदाहरण नहीं मिले।)

१६वीं शती

गोपीनाथ[1]

✻

वीरनारायण[2]

✻

१८वीं शती

रघुनाथ कवि

✻

लक्ष्मीनाथ[3]

✻

लोरिक[4]

✻

---

१. इसी नाम के एक और कवि मोरंग के राजा लक्ष्मीनारायण के आश्रय में थे। इनका एक मैथिली में रचित पद (८४ संख्यक) 'कंसनारायण-पदावली' में मिलता है। कहा नहीं जा सकता कि ये आपसे कोई भिन्न व्यक्ति थे या अभिन्न।

२. इसी नाम के किसी कवि का मैथिली भाषा में रचित एक पद ५३ संख्यक 'कंसनारायण पदावली' में संगृहीत है। इस नाम के एक कवि नेपाल के राजा त्रैलोक्यमल्ल (सन् १५७२-८६ ई०) के आश्रित थे। कहा नहीं जा सकता कि उक्त पद किस 'वीरनारायण' का है।

३. आपके नाम के पहले 'ठाकुर' शब्द भी मिलता है। मिश्रबन्धुओं ने आपको 'मैथिल कवि' बतलाया है। —देखिए 'मिश्रबन्धु-विनोद' (वही, तृतीय भाग, द्वितीय सं०, १९८५ वि०) पृ० १२२३।

४. मिश्रबन्धुओं ने आपको मगही-कवि बतलाया है। —देखिए 'मिश्रबन्धु-विनोद' (वही, तृतीय भाग, द्वितीय सं०, १९८५ वि०), पृ० १००५।

परिशिष्ट—५

(बिहार के वे साहित्यकार, जिनका स्थिति-काल अज्ञात है। किन्तु अनुमानत. ऐसा प्रतीत होता है कि वे क्रमानुसार १५वीं से १८वीं शती तक के हैं।)

आतम

माधव रजनी पु (नु) कतए आउति सजनी, शीतल ओरे चन्दा,
वड़ पूने मीलत गोविन्दा, ना रे की ॥ध्रु०॥
मुख ससि हेरि, अधर अमिअ कत वेरी,
अनन्दे ओरे पिवइ मुइलओ मदन जिअवै ना रे की ॥ध्रु०॥
हरि देल हरवा, अलपित रतन पवरवा,
जीव लाए रे घरवा निधन नाओ
निधाने ना रे की ॥
आतम गवइ वडे पुने पुनमत पवइ
मानसओ पुरला सकल कलुख
विहि हरला ना रे की ॥[1]

※

टुडरस[2]

चतुर नायिका शिशिर ऋतुमध्ये क्रीड़ा करत ततच्छन ऐन,
आयो सुभग चहूँ दिशि चितवत कर गहे कनक बनक सुख दैन।
रोके माख प्रवास अंकुधर सारंग अवनन पर वैन;
टुडरस कवि अचरज दीठो फिरि गयो चतुर समझकर वैन।[3]

※

१. The Songs of Vidyapati (वही, Appendix—B), पद स० २, पृ० च।
२. मिश्रबन्धुओं ने आपको 'पुरबिया' कहा है। —देखिए 'मिश्रबन्धु-विनोद' (वही, तृतीय भाग, द्वितीय सं०, १९८५ वि०), पृ० ९७५।
३. वही।

पृथिवीचंद

एकसर अथिकहु राजकुमार। अमोल जुवतिहि अछए अपार॥
मति भरमलि थिक ओल उआर। जागि पहर के करत विआर॥
कइए सनान समुखि घर आव। पथिक बैसल पथ कर परथाव॥
विधि हरि लेलि मोरि पेअसि नारि। सहइ न पालिअ मदनक धालि॥
कओन सङ्गे बैसि खेपब कओने भाति। लगहिक दोसर नहि देखिअ राति॥
पहिआ नागर अथिक सही। उकुति मनोरथ गेल कही॥
'पृथिवीचन्द' भन मेदिनि सार। इ रस बुझए मनिक दुलार॥[१]

❋

सरसराम[२]

देख परवेस परम सुकुमारि। हस्ति गमनि ब्रिखभानु दुलारि॥
तनु अनुपम आनन सानन्द। दामिनि उपर उगल नव चन्द॥
नासा लखित नयन नहिं थीर। जनि तिल फुल अलि दुहु दिस फीर॥
भाङि जाएत कुच भर परिनाम। तै जनि त्रिबलि गुन बान्हल काम॥
सरसराम भन राधा रूप। रस बुझ रसमय सुन्दर भूप॥१२॥[३]

❋

---

१. The songs of Vidyapati (वही, Appendix-A), पद स० १२, पृ० घ।
२. मिश्रबन्धुओं ने आपको 'मैथिल कवि' बतलाया है। —देखिए, 'मिश्रबन्धु-विनोद' (वही, तृतीय भाग, द्वितीय स०, १९८५ वि०), पृ० १००८।
३. Journal of the Asiatic Society of Bengal (वही, 1884), P. 87.

परिशिष्ट[1] — ६

क्रम सं०	स्थिति-काल	साहित्यकार का नाम	स्थान	ग्रंथ-संख्या	प्रवृत्ति
१.	सातवी शती	ईशानचन्द्र (चिन्तातुराक)	शाहाबाद	×	कवि
२.	आठवी शती	कर्णरीपा (कनेरिन, आर्यदेव, वैरागीनाथ)	नालंदा	१	,,
३.	,,	कंकालीपा (कोकलिपा, ककलिपा, ककरिपा)	मगध	१	×
४.	,,	भुसुकपा, (भुसु, भुसुकुपा, शान्तिदेव)	नालदा	१	कवि
५.	,,	लीलापा (लीलावज्र)	मगध	१	×
६.	,,	लुइपा (लूहिपा, मत्स्यान्त्राद)	,,	५	कवि
७.	,,	शबरपा (शवरीपा, महा-शबर, शबरेश्वर, शवरी-श्वर, नवसरह)	विक्रमशिला या मगध	६	,,
८.	,,	सरहपा (राहुलभद्र, सरोजवज्र, सरोरुहवज्र पद्म, पद्मवज्र)	राज्ञी-नगरी (भगल या पुण्ड्रवर्द्धन)	१६	,,
९.	नवी शती	कम्बलपा (कम्वलाम्ब-रपा, कामरीपा, कमरिपा)	मगध	३	,,
१०.	,,	घण्टापा (वज्रघण्टापा)	नालंदा	१	×

१. (क) 'ग्रंथ-संख्या' के 'कॉलम' में जिन साहित्यकारों के नाम के आगे 'क्रॉस' (×) का चिह्न दिया हुआ है, उनमें अधिकाश की स्फुट रचनाएँ ही उपलब्ध होती हैं। कुछ ऐसे भी साहित्यकार हैं, जिनकी ग्रन्थाकार रचना के साथ स्फुट रचनाएँ भी मिली हैं, और कुछ ऐसे भी हैं, जिनकी किसी प्रकार की रचना नहीं मिली है।

(ख) साहित्यकारों के सभी ग्रंथ स्वतः देखे नहीं गये हैं। अतः संभव है कि भ्रमवश कुछ संस्कृत-ग्रंथों की भी गणना हो गई हो।

क्रम स०	स्थिति-काल	साहित्यकार का नाम	स्थान	ग्र थ-संख्या	प्रवृत्ति
११.	नवी शती	चर्पटीपा (पचरीपा)	चम्पा (भागलपुर)	१	×
१२.	,,	चौरंगीपा (पूरनभगत)	मगध	२	कवि (-गद्यकार?)
१३.	,,	डोम्भिपा (डोम्बीहेरुक)	,,	४	कवि
१४.	,,	धामपा (धर्मपा, गुण्डरीपा)	विक्रमशिला (भागलपुर)	३	,,
१५.	,,	महीपा (महिलपा, महीधरपा, महित्ता, माहीन्दा, महिआ)	मगध	१	,,
१६.	,,	मेकोपा	भगल (भागलपुर)	१	×
१७.	,,	विरूपा (विरूपाक्ष, कालविरूप, धर्मपाल)	त्रिउर (मगध)	८	कवि
१८.	,,	वीणापा	गौडदेश (बिहार)	१	,,
१९.	दसवी शती	कंकणपा (कोकणपा, कोकदत्त)	विष्णुनगर (मगध)	१	,,
२०.	,,	चमरिपा	,,	१	×
२१.	,,	छत्रपा	भिगुनगर (मगध)	१	×
२२.	,,	तिलोपा (भिक्षु प्रज्ञाभद्र)	,,	४	कवि
२३.	,,	थगनपा (स्थगण)	मगध	१	×

क्रम सं०	स्थिति-काल	साहित्यकार का नाम	स्थान	ग्रंथ-संख्या	प्रवृत्ति
२४.	दसवी शती	दीपकर श्रीज्ञान (चन्द्रगर्भ, गुह्यज्ञानवज्र, अतिशा)	विक्रम-मनिपुर (भागलपुर)	५	×
२५.	,,	नारोपा (नाडपा, नाडकपा, नरोपन्त)	मगध	२	×
२६.	,,	शलिपा (शीलपा, सियारी, शृगालीपा)	,,	१	×
२७.	,,	शान्तिपा (रत्नाकर शान्ति)	,,	१	कवि
२८.	ग्यारहवी शती	गयाधर	वशाली (मुजफ्फरपुर)	१	×
२९.	,,	चम्पकपा	चम्पा (भागलपुर)	१	×
३०.	,,	चेलुकपा	भगल (भागलपुर)	१	×
३१.	,,	जयानन्तपा (जयनन्दीपा)	,,	२	कवि
३२.	,,	निर्गुणपा	पूर्वदेश (भगल और पुण्ड्रवर्द्धन)	१	×
३३.	,,	लुचिकपा	भगलदेश (भागलपुर)	१	×
३४.	बारहवी शती	कोकालिपा	चम्पारन	१	×
३५.	,,	पुतुलिपा	भगलदेश (भागलपुर)	१	×

क्रम सं०	स्थिति-काल	साहित्यकार का नाम	स्थान	ग्रंथ-संख्या	प्रवृत्ति
३६	बारहवीं शती	विनयश्री	पूर्वी मिथिला	×	कवि
३७.	तेरहवीं शती	हरिब्रह्म	विहार	×	,,
३८	चौदहवीं शती	अमृतकर (अमियकर)	मिथिला	×	,,
३६.	,,	उमापति उपाध्याय	कोइलख (दरभगा)	१	कवि-नाटककार
४०	,,	गणपति ठाकुर	विसफी (दरभगा)	×	कवि
४१	,,	ज्योतिरीश्वर ठाकुर (कविशेखराचार्य)	श्रीमत्पल्ली-ग्राम (मिथिला)	१	गद्यकार
४२.	,,	दामोदर मिश्र	मिथिला	१(?)	कवि
४३	,,	विद्यापति ठाकुर	विसफी (मिथिला)	×	कवि-नाटककार -गद्यकार
४४.	पन्द्रहवीं शती	कंसनारायण	मिथिला	×	कवि
४५.	,,	कृष्णदास (कृष्णकारखदास)	रोसड़ा (दरभगा)	४	,,
४६.	,,	गजसिंह	मिथिला	×	,,
४७.	,,	गोविन्द ठाकुर	भदौरा (दरभंगा)	२	कवि (-टीकाकार ?)
४८.	,,	चन्द्रकला	तरौनी (दरभंगा)	×	कवि
४६.	,,	चतुर्भुज (चतुर चतुर्भुज)	मिथिला	×	,,
५०.	,,	जीवनाथ	,,	×	,,
५१.	,,	दशावधान ठाकुर	,,	×	,,

क्रम स०	स्थिति-काल	साहित्यकार का नाम	स्थान	ग्रंथ-सख्या	प्रवृत्ति
५२.	पन्द्रहवी शती	भानुदत्त (भानुकर)	सरिसब (दरभंगा)	×	कवि
५३.	"	मधुसूदन	मिथिला	×	"
५४.	"	माधवी	"	×	"
५५.	"	यशोधर (नवकविशेखर, कविशेखर)	"	×	"
५६.	"	रुद्रधर उपाध्याय	"	×	"
५७.	"	लक्ष्मीनाथ (लखिमिनाथ)	"	×	"
५८.	"	विष्णुपुरी (तीरभुक्तिपरमहस, तीरभुक्तिसन्यासी)	तरौनी (दरभंगा)	×	"
५९.	"	श्रीधर (सिरिधर)	मिथिला	×	"
६०.	"	हरपति	बिसफी (दरभंगा)	×	"
६१.	सोलहवी शती	कृष्णदास	लोहना (दरभगा)	×	"
६२.	"	गदाधर (गजाधर)	मिथिला	×	"
६३.	"	गोविन्ददास	लोहना (दरभंगा)	×	"
६४.	"	दामोदर ठाकुर	भौर (दरभंगा)	×	"
६५.	"	धीरेश्वर	मिथिला	×	"

क्रम स०	स्थिति-काल	साहित्यकार का नाम	स्थान	ग्रंथ-सख्या	प्रवृत्ति
६६.	सोलहवी शती	पुरन्दर	मिथिला	×	कवि
६७.	,,	बलवीर	,,	१	(कवि ?)
६८.	,,	भीषम	,,	×	कवि
६९.	,,	भूपतिसिंह (रूपनारायण, नृपनारायण, नृपसिंह, भूपनारायण, सिंहभूपति)	,,	×	,,
७०.	,,	महेश ठाकुर	भौर (दरभंगा)	×	×
७१.	,,	रतिपति मिश्र	मिथिला	१	कवि-अनुवादक
७२.	,,	रामनाथ	,,	×	कवि
७३.	,,	रूपारुण	,,	×	×
७४.	,,	लक्ष्मीनारायण	,,	२	×
७५.	,,	विश्वनाथ 'नरनारायण'	,,	×	कवि
७६.	,,	सविता	ननीजोर (सारन)	×	(कवि ?)
७७.	,,	सोनकवि	परसरमा (सहरसा)	×	कवि
७८.	,,	हरिदास	लोहना (दरभगा)	×	,,
७९.	,,	हेमकवि	परसरमा (सहरसा)	×	,,
८०.	सत्रहवी शती	कृष्णकवि (श्रीवुच)	,,	१	,,
८१.	,,	गोविन्द	मिथिला	१	कवि-नाटकका
८२.	,,	दरियासाहब	धरकधा (शाहाबाद)	१८	कवि
८३.	,,	दलेलसिंह (दलसिंह)	रामगढ (हजारीबाग)	४	,,
८४.	,,	दामोदरदास	हजारीबाग	×	×

क्रम सं०	स्थिति-काल	साहित्यकार का नाम	स्थान	ग्रंथ-संख्या	प्रवृत्ति
८५.	सत्रहवीं शती	देवानन्द (आनन्द देवानन्द)	परहटपुर (मिथिला)	१	कवि-नाटककार
८६.	,,	धरणीदास (गैबी, धरणीधरदास)	माँझी (सारन)	५	कवि
८७.	,,	धरणीधर	मिथिला	×	,,
८८.	,,	पदुमनदास	रामगढ (हजारीबाग)	२	कवि-अनुवादक
८९.	,,	प्रबलशाह	डुमराँव (शाहाबाद)	१	कवि
९०.	,,	भगवान मिश्र	मिथिला	×	गद्यकार
९१.	,,	भूधर मिश्र	मुँगेर	१	कवि
९२.	,,	भृगुराम मिश्र	,,	३	×
९३.	,,	मँगनीराम	पदुमकेर (चम्पारन)	१	कवि
९४.	,,	महीनाथ ठाकुर	मिथिला	×	,,
९५.	,,	रामचरणदास (जनसेवक)	पटना	१	,,
९६	,	रामदास (सरसराम, राम)	लोहना (दरभगा)	१	कवि-नाटककार
९७	,,	रामप्रियाशरण सीताराम	मिथिला	१	कवि
९८.	,,	रामयति	भोजपुर (शाहाबाद)	×	,,
९९.	,,	रुद्रसिंह	रामगढ (शाहाबाद)	१	×
१००.	,,	लोचन	उद्यान (दरभगा)	१ (संग्रह)	कवि
१०१.	,,	विधातासिंह	तारणपुर (पटना)	×	,,

क्रम सं०	स्थिति-काल	साहित्यकार का नाम	स्थान	ग्रंथ-संख्या	प्रवृत्ति
१०२.	सत्रहवीं शती	शंकर चौबे (शंकरदास)	इसुआपुर (सारन)	१	कवि
१०३.	,,	शीतलसिंह	शीतलपुर (सारन	×	(कवि?)
१०४.	,,	साहबराम (कविराजाधिराज)	अम्बा (शाहाबाद)	३	(कवि?)
१०५.	,,	हलधरदास	पद्मौल (मुजफ्फरपुर)	१	कवि
१०६.	,,	हिमकर	सरिसब (दरभंगा)	×	,,
१०७.	अठारहवीं शती	अग्निप्रसादसिंह	सोनपुर (सारन)	३	,,
१०८.	,,	अचलकवि (अच्युतानन्द)	परसरमा (सहरसा)	×	,,
१०९.	,,	अजबदास (अजाएबपाण्डेय, अजब)	कर्जा (शाहाबाद)	३	,,
११०.	,,	अनिरुद्ध	मिथिला	×	,,
१११.	,,	अनूपचन्ददुबे (रामदास)	धनगाई (शाहाबाद)	×	(कवि ?)
११२.	,,	आनन्द	मिथिला	×	कवि
११३.	,,	आनन्दकिशोरसिंह	बेतिया (चम्पारन)	१	,,
११४.	,,	इमवी खाँ	भभुआ (शाहाबाद)	१	कवि-गद्यकार (-टीकाकार
११५.	,,	ईशकवि	मिथिला	१	कवि
११६.	,,	उदयप्रकाशसिंह	बक्सर (शाहाबाद)	१	(टीकाकार ?

क्रम सं०	स्थिति-काल	साहित्यकार का नाम	स्थान	ग्रंथ-संख्या	प्रवृत्ति
११७.	अठारहवीं शती	उमानाथ	हरिपुरी (दरभगा)	×	कवि
११८.	,,	ऋतुराजकवि	सुखपुरा-परसरमा (सहरसा)	×	,
११९.	,,	कमलनयन	सरिसव (दरभगा)	×	,,
१२०.	,,	किफायत	दुमका (पूर्णिया)	१	,,
१२१.	,,	कुंजनदास (अखौरी कुंजबिहारी लाल, कुंजबिहारी दास, कुंजन)	कोरी (शाहाबाद)	१	,,
१२२.	,,	कुलपति	नवटोल-सरिसब (दरभगा)	×	,,
१२३.	,,	कृष्णाकवि	सुखपुरा-परसरमा (सहरसा)	×	,
१२४	,,	केशव	मिथिला	×	,,
१२५.	,,	गणेशप्रसाद	धमार (शाहाबाद)	१	(टीकाकार ?)
१२६.	,,	गुणानन्द	भगारथपुर (दरभंगा)	×	कवि
१२७.	,,	गुमानी तिवारी	पटना	२	,,
१२८	,,	गोकुलानन्द	उजान या सरिसब (दरभगा)	१	कवि-नाटककार

क्रम स०	स्थिति-काल	साहित्यकार का नाम	स्थान	ग्रंथ-सख्या	प्रवृत्ति
१२९.	अठारहवी शती	गोपाल	बेहटा (दरभगा)	३	कवि
१३०	,,	गोपालशरणसिंह	बक्सर (शाहाबाद)	१	(टीकाकार ?)
१३१.	,,	गोपीचन्द	मगही-क्षेत्र	×	×
१३२.	,,	गोपीनाथ	शाहआलम-नगर (सहरसा)	२	×
१३३.	,,	गौरीपति (गारी)	दरभगा	×	कवि
१३४.	,,	चन्दनराम	अम्बा (शाहाबाद)	३	,,
१३५.	,,	चन्द्रकवि	मिथिला	×	,
१३६.	,,	चन्द्रमौलि मिश्र (मौलि)	गया	१	,,
१३७.	,,	चक्रपाणि	मिथिला	×	,,
१३८.	,,	चतुर्भुज मिश्र	,,	१	,,
१३९.	,	चूडामणिसिंह	हजारीबाग	१	×
१४०.	,,	छत्तरबाबा	पण्डितपुर (चम्पारन)	×	कवि
१४१	,,	छत्रनाथ (छत्रपति, नाथ, कविदत्त, कृवीश्वरदत्त)	हाटी-उभटी (दरभगा)	४	,,
१४२.	,,	जगन्नाथ (जगरनाथराम	हवेली-खडगपुर (मुंगेर)	१	,,
१४३.	.,	जयरामदास (गोस्वामी जयरामदास ब्रह्मचारी, सिद्धबाबा)	जोगियाँ (शाहाबाद)	२९	,,
१४४.	,,	जयानन्द (करणजयानन्द)	भगीरथपुर (दरभगा)	१	कवि-नाटककार

क्रम०	स्थिति-काल	साहित्यकार का नाम	स्थान	ग्रंथ-संख्या	प्रवृत्ति
१४५.	अठारहवीं शती	जॉन क्रिश्चियन (जॉन अधम, अधमजन)	बनगाँव (सहरसा)	२	कवि
१४६.	,,	जीवनबाबा	राजापुर (शाहाबाद)	?	×
१४७.	,,	जीवनराम (रघुनाथ)	शिवदाहा (मुजफ्फरपुर)	१	कवि
१४८.	,,	जीवारामचौबे (युगलप्रिया)	इसुआपुर (सारन)	१	(टीकाकार ?)
१४९.	,,	झब्बूलाल	नयागाँव (सारन)	×	(कवि ?)
१५०.	,,	टेकमनराम	झखरा (चम्पारन)	×	कवि
१५१.	,,	तपसी तिवारी	ममरखा (चम्पारन)	×	,,
१५२.	,,	तुलाराम मिश्र	सतबरिया (चम्पारन)	×	,,
१५३.	,,	दयानिधि	पटना	×	,,
१५४.	,,	दिनेश द्विवेदी	टेकारी (गया)	२	,,
१५५.	,,	देवाराम	कर्जा (शाहाबाद)	×	,,
१५६.	,,	देवीदास	रामगढ़ (हजारीबाग)	१	,,
१५७.	,,	नन्दनकवि	उजान (दरभंगा)	?	,,
१५८.	,,	नन्दीपति (बादरि, कलानिधि)	मिथिला	१	कवि-नाटककार
१५९.	,,	नन्दूरामदास	ब्रह्मपुरा (मुजफ्फरपुर)	१	कवि

क्रम०	स्थिति-काल	साहित्यकार का नाम	स्थान	ग्रंथ-संख्या	प्रवृत्ति
१६०	अठारहवी शती	नवलकिशोरसिंह	बेतिया (चम्पारन)	×	कवि
१६१.	„	निधि उपाध्याय (जिरवन झा)	कोइलख (दरभगा)	×	„
१६२.	„	पंडितनाथ पाठक	मुहम्मदपुर (गया)	×	(कवि ?)
१६३.	„	प्रतापसिंह (मोदनारायण)	मिथिला	१	„
१६४.	„	प्रियादास	पटना	६	×
१६५.	„	बालखडी (रामप्रेम साह)	पिपरा (गोविन्दगंज)	×	कवि
१६६.	„	बुद्धिलाल	मिथिला	×	„
१६७.	„	बेनीराम	इचाक (हजारीबाग)	२८	„
१६८.	„	ब्रह्मदेवनारायण 'ब्रह्म'	नयागाँव (सारन)	×	„
१६९.	„	भजनकवि (कविशेखर)	मिथिला	×	„
१७०.	„	भवेश	भट्टपुरा (दरभगा)	×	„
१७१.	„	भिनकराम	सहोरवा-गोनरवा (चम्पारन)	×	„
१७२.	„	भीखमराम (भीखामिश्र)	माधोपुर (चम्पारन)	१	„
१७३.	„	मनबोध (भोलन)	जमसम (दरभगा)	१	कवि-अनुवादक
१७४.	„	महीपति	मिथिला	×	कवि
१७५.	„	माधवनारायण (केशव, केशन कवि)	„	×	(कवि ?)
१७६	„	मानिकचद दूबे	धनगाई (शाहाबाद)	×	कवि

क्रम सं०	स्थिति काल	साहित्यकार का नाम	स्थान	ग्रंथ-संख्या	प्रवृत्ति
१७७	अठारहवी शती	मुकुन्दसिंह	रामगढ (हजारीबाग)	२	(कवि ?)
१७८	,,	मोदनारायण	मिथिला	×	कवि
१७९	,,	रघुनाथदास	ब्रह्मपुरा (मुजफ्फरपुर)	×	,,
१८०	,,	रमापति उपाध्याय	मिथिला	१	कवि-नाटककार
१८१	,,	राधाकृष्ण (कृष्ण)	जयनगर (दरभगा)	१	कवि
१८२.	,,	रामकवि	मिथिला	×	,
१८३.	,,	रामजीभट्ट	भोजपुर	१	(कवि-अनुवादक?)
१८४.	,,	रामजीवनदास	तुरकोलिया (चम्पारन)	×	कवि
१८५.	,,	रामनारायण प्रसाद	दामोदरपुर (चम्पारन)	×	,
१८६	,,	रामप्रसाद	वेतिया (चम्पारन)	१	,,
१८७	,,	रामरहस्यसाहब (रामरजदूबे, रामरहेस)	टेकारी (गया)	५	,,
१८८	,,	रामेश्वर	मिथिला	×	,,
१८९.	,,	रामेश्वरदास	कवलपट्टी (शाहाबाद)	१	,,
१९०.	,,	लक्ष्मीनाथ परमहंस (लक्ष्मीनाथ गोसाईं, लक्ष्मीपति, लखन, लछुन)	परसरमा (सहरसा	१०	,,
१९१.	,,	लाल झा	मंगरौनी (दरभंगा	२	कवि-नाटककार
१९२.	,,	वशराजशर्मा 'वशमनि'	वीरभानपुर (शाहाबाद)	१	कवि-टीकाकार

क्रम सं०	स्थिति-काल	साहित्यकार का नाम	स्थान	ग्रंथ-सख्या	प्रवृत्ति
१९३.	अठारहवी शती	वृन्दावन	वारा (शाहावाद)	७	कवि
१९४.	,,	वेणीदत्त झा (दत्त)	हाटी (दरभगा)	×	,,
१९५	,,	वेदानन्दसिंह	वनैली (पूर्णिया)	१	×
१९६.	,,	व्रजनाथ	उजान (दरभगा)	×	कवि
१९७.	,,	शकरदत्त	पटना	४	(कवि-नाटककार ?)
१९८	,,	शुम्भुनाथ त्रिवेदी	ममरखा (चम्पारन)	१	कवि-अनुवादक
१९९	,,	शिवनाथदास	तेलपा (सारन)	१	कवि
२००	,,	श्रीकान्त (गणक)	मिथिला	१	कवि-नाटककार
२०१.	,,	श्रीपति	,,	१	कवि-टीकाकार
२०२.	,,	सदल मिश्र	आरा (शाहावाद)	२	अनुवादक-गद्यकार
२०३	,,	सदानन्द (चित्रधर मिश्र)	चनवाइन (चम्पारन)	६	(कवि ?)
२०४.	,,	साहवरामदास (साहव-राम झा, साहवदास, साहवजन, साहव)	मिथिला	×	,,
२०५.	,,	हरलाल	हरिहरपुर (गोपालगज)	×	,,
२०६.	,,	हरिचरणदास (हरिकवि)	चैनपुर (सारन)	१०	कवि-टीकाकार
२०७.	,,	हरिनाथ	मिथिला	×	कवि

*

मूल पुस्तक में आये उद्धरणों[1] की प्रथम पंक्ति की अकारादिक्रम से सूची

१. उद्धरणों के आगे कोष्ठक में, 'ग०' संकेत का अर्थ गद्य और 'परि०' का अर्थ परिशिष्ट है।

❋

ग्रंथनामानुक्रमणिका[1]

१ जिन नामों के आगे कोष्ठक में 'प०' है, वे 'पत्र-पत्रिकाएँ' हैं।

*

सहायक ग्रंथों की सूची[1]

१. श्रीवाल्मीकि रामायण सटीक—स० श्रीवासुदेव लक्ष्मण शास्त्री पणशीकर, पाण्डुरग जावजी, निर्णयसागर प्रेस, बम्बई।

२. शब्दकल्पद्रुम स० स्यार-राजा राधाकान्तदेव बहादुर, वरदाप्रसाद वसु तथा हरिचरणवसु, ७१ पथरिया घाट स्ट्रीट, कलकत्ता।

३. पुस्तक-भण्डार रजतजयन्ती-स्मारक ग्रंथ—पुस्तक-भण्डार, लहेरियासराय और पटना।

४ कीर्त्तिलता —स० बाबूराम सक्सेना, नागरी-प्रचारिणी सभा, काशी।

५. विद्यापति—स० मित्र-मजूमदार, यूनाइटेड प्रेस लि०, पटना-४।

६. संस्कृत-साहित्य का इतिहास—पं० बलदेव उपाध्याय, शारदा-मंदिर, काशी।

७. हिन्दी शब्द-सागर—स० श्यामसुन्दर दास, नागरी-प्रचारिणी सभा, काशी।

८ अध्यात्म रामायण—स० मुनिलाल, गीता प्रेस, गोरखपुर।

९. बिहारसंस्कृतसमिते समावर्त्तनमहोत्सवे मिथिलेशमहेशरमेशव्याख्यानात्मक दीक्षान्त भाषणम्—श्रीआदित्यनाथ झा, मत्री, बिहारसंस्कृतसमितेः।

१०. संस्कृत-साहित्य का इतिहास—महेशचन्द्र प्रसाद, लेखक, छपरा।

११. संस्कृत-साहित्य की रूपरेखा—स्व० प० चन्द्रशेखर पाण्डेय शास्त्री तथा शान्तिकुमार नानूराम व्यास, साहित्य-निकेतन, कानर, बरेली।

१२. संस्कृत-साहित्य का इतिहास—हंसराज अग्रवाल तथा डॉ० लक्ष्मणस्वरूप, राजहंस प्रकाशन, सदरबाजार, दिल्ली।

१३. मध्यकालीन भारतीय संस्कृति—म० म० गौरीशंकर हीराचन्द ओझा, हिन्दुस्तानी एकाडेमी, प्रयाग।

१४. अमरकोष—रामश्रमी टीका, निर्णय सागर प्रेस बम्बई।

१५. महाभाष्य—रामश्रमी टीका, निर्णय सागर प्रेस, बम्बई।

१६. प्राकृत-भाषाओं का व्याकरण—डॉ० रिचर्ड पिशल, बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्, पटना-३।

१७. हिन्दी-साहित्य का इतिहास—आचार्य प० रामचन्द्र शुक्ल, नागरी-प्रचारिणी-सभा, काशी।

---

१. यह सूची केवल उन्हीं ग्रंथों की है, जिनका उल्लेख पाद-टिप्पणियों में हुआ है। —स०

१८ हिन्दी-साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास—डॉ० रामकुमार वर्मा, रामनारायणलाल, प्रकाशक तथा पुस्तक-विक्रेता, प्रयाग।

१९. मिश्रबन्धु-विनोद—मिश्रबन्धु गंगापुस्तक-माला, लखनऊ।

२०. हर्षचरितम्—बाणभट्ट, चौखम्बा संस्कृत सिरीज, काशी।

२१. **Sanskrit English Dictionary**—Sir Monier-Williams, Oxford University Press, London.

२१. कविता-कौमुदी—रामनरेश त्रिपाठी, नार्दर्न इंडिया पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली।

२३ शुक्ल-अभिनन्दन-ग्रन्थ—हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, मध्यप्रदेश।

२४. हर्षचरित-एक सांस्कृतिक अध्ययन—डॉ० वासुदेवशरण अग्रवाल, बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्, पटना-३।

२५. जैन साहित्य और इतिहास—नाथूराम प्रेमी, संशोधित, साहित्य माला, ठाकुरद्वार, बम्बई-२।

२६. पुरातत्त्वनिबन्धावली—राहुल सांकृत्यायन, इंडियन प्रेस लिमिटेड, प्रयाग।

२७. बौद्धधर्म-दर्शन—आचार्य नरेन्द्रदेव, बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्, पटना-३।

२८. बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् के सप्तम वार्षिकोत्सव के सभापति-पद से किया गया डॉ० हजारी प्रसाद द्विवेदी का भाषण (मार्च १९५८ ई०),—बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्, पटना-३।

२९. बौद्धगान-ओ-दोहा—म० म० हरप्रसाद शास्त्री, बंगीय साहित्य-परिषद्, कलकत्ता।

३०. हिन्दी-काव्यधारा—राहुल सांकृत्यायन, किताब-महल, इलाहाबाद।

३१. **An Introduction to Budhist Esoterism**—Benoytosh Bhattacharya, Humphrey Milford Oxford University Press, London.

३२. नाथ-सम्प्रदाय—डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी, हिन्दुस्तानी एकेडेमी, इलाहाबाद।

३३. सिद्ध-साहित्य—डॉ० धर्मवीर भारती, किताब-महल, प्रयाग।

३४. दोहाकोश—राहुल सांकृत्यायन, बिहार-राष्ट्रभाषा परिषद्, पटना-३।

३५. राजेन्द्र-अभिनन्दन-ग्रंथ—नागरी-प्रचारिणी सभा, आरा।

३६. योग-प्रवाह—पीताम्बरदत्त बड़थ्वाल, श्रीकाशी विद्यापीठ, बनारस।

३७. बुद्ध और उनके अनुचर—भदन्त आनन्द कौसल्यायन, प्रयाग पब्लिशिंग हाउस, प्रयाग।

३८ तिब्बत में सवा वर्ष—राहुल सांकृत्यायन, शारदा-मंदिर, नई दिल्ली।

३९. बिहार—एक ऐतिहासिक दिग्दर्शन—जयचन्द्र विद्यालंकार और पृथ्वीसिंह मेहता पुस्तक-भण्डार, लहेरियासराय और पटना।

४०. तिब्बत में बौद्धधर्म—राहुल सांकृत्यायन, किताब महल, इलाहाबाद।

४१. महाकवि विद्यापति—हरिनन्दन ठाकुर 'सरोज', प्रभात लाइब्रेरी, मधुबनी, दरभंगा।

४१. विद्यापति-गीत-संग्रह—डॉ० सुभद्र झा, मोतीलाल बनारसीदास, बनारस।

४३. रागतरंगिणी—बलदेव मिश्र, राजप्रेस, दरभंगा।

४४. विद्यापति की पदावली—नगेन्द्रनाथ गुप्त, इंडियन प्रेस, प्रयाग।

४५. पारिजातहरण—चेतनाथ झा, दरभगा प्रेस कम्पनी, दरभगा।
४६. **A History of Maithili Literature**—J. Mishra, Tribhukti Publications, Allahabad
४७. धूर्त्तसमागम (हस्त०)—बिहार-रिसर्च-सोसायटी (पटना) मे सुरक्षित।
४८ श्रीज्योतिरीश्वर ठाकुर-प्रणीत वर्ण-रत्नाकर—डॉ० सुनीतिकुमार चटर्जी तथा प० बबुआजी मिश्र, एशियाटिक सोसायटी, कलकत्ता।
४९. मैथिली गीत-रत्नावली—बदरीनाथ झा, ग्रन्थालय प्रकाशन, दडिभङ्गा।
५० **An Introduction to the Maithili Language of North Bihar Containing Grammar, Chrestomathy and Vocabulary**—Grierson, Asiatic Society, Calcutta.
५१. विद्यापति-विशुद्ध-पदावली—शिवनन्दन ठाकुर, मैथिली-साहित्य-परिषद्, लहेरियासराय, दरभगा।
५२. क्रियाबोध (हस्त०)—बिहार-राष्ट्रभाषा परिषद्(पटना)के हस्तलिखित-ग्रन्थ-अनुसधान-विभाग में सुरक्षित।
५३. मध्यकालीन हिन्दी-कवयित्रियाँ—डॉ० सावित्री सिन्हा, आत्माराम ऐण्ड सस, काश्मीरी गेट, दिल्ली।
५४ विद्यापति-पदावली—कुमुद विद्यालंकार, रीगल बुक डिपो, दिल्ली।
५५. गोविन्द-गीतावली—मथुराप्रसाद दीक्षित, पुस्तक-भण्डार, लहेरियासराय और पटना।
५६. मिथिला-भाषामय-इतिहास—बख्शी म० म० मुकुन्द शर्मा, चौखम्बा सस्कृत-पुस्तकालय, बनारस सिटी।
५७ मिथिला-गीत-संग्रह—भोला झा, श्री रमेश्वर प्रेस, दरभगा।
५८. गीतगोविन्द का मैथिली-अनुवाद (हस्त०)—बिहार रिसर्च सोसायटी (पटना) में सुरक्षित।
५९. पदकल्पतरु—श्रीसतीशचन्द्रराय, वगीय-साहित्य-परिषद्, कलकत्ता।
६०. मिथिलाराज-प्राप्ति-कवितावली—पं० जगदीश कवि, राजप्रेस, दरभगा।
६१. राघव-विजयावली—पं० जगदीश कवि, राज प्रेस, दरभंगा।
६२. मैथिली-साहित्यक इतिहास—प्रो० कृष्णकान्त सिंह, मिथिला-प्रकाशन, लहेरियासराय।
६३. संत-कवि दरिया : एक अनुशीलन—डॉ० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री, बिहार-राष्ट्रभाषा परिषद्, पटना-३।
६४. राम-रसार्णव (हस्त०)—मन्नूलाल पुस्तकालय (गया) मे सुरक्षित।
६५. गोविन्दलीलामृत (हस्त०)—बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्, (पटना) मे सुरक्षित।
६६. हस्तलिखित हिन्दी-पुस्तकों का संक्षिप्त विवरण—नागरी-प्रचारिणी सभा, काशी।
६७. धरनीदास जी की बानी—धरनीदास, वेलवेडियर प्रेस, प्रयाग।

६८ भोजपुरी के कवि और काव्य—दुर्गाशंकरप्रसाद सिंह, बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्, पटना-३।

६९. बिहार-दर्पण—रामदीन सिंह, खड्गविलास प्रेस, पटना।

७०. राजस्थान में हिन्दी के हस्तलिखित ग्रंथों की खोज—प्राचीन-साहित्य-संस्थान, राजस्थान-विश्वविद्यापीठ, उदयपुर।

७१. An Account of the district of Purnea in 1809-10 by Francis Buchanan—Bihar and Orissa Research Society, Patna.

७२. पंचामृत—शुकदेव ठाकुर, खड्गविलास प्रेस, पटना।

७३. चम्पारन की साहित्य-साधना—रमेशचन्द्र झा, भारती प्रकाशन, सुगौली, चम्पारन।

७४. विभिन्न कवियों के पदों के संग्रह (हस्त०)—बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद (पटना) के हस्तलिखित-ग्रंथ अनुसधान-विभाग मे सुरक्षित।

७५. नरेन्द्र-विजय—प० महेश झा, राज प्रेस, दरभंगा।

७६. पोथी विद्याधर (हस्त०)—बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् (पटना) के हस्तलिखित ग्रंथ-अनुसधान विभाग मे सुरक्षित।

७७. शिवपुराण-रत्न—बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् (पटना) के हस्तलिखित-ग्रंथ-अनुसंधान-विभाग मे सुरक्षित।

७८. श्रीमत्खण्डवलाकुल-विनोद्—पं० गोपाल झा, राज प्रेस, दरभंगा।

७९. Linguistic Survey of India—Sir George Abraham Grierson, Government of India, Central Publication Branch, Calcutta.

८०. उद्‌वन्त प्रकाश (हस्त०)—बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् (पटना) के हस्तलिखित-ग्रंथ-अनुसधान-विभाग में सुरक्षित।

८१. सन्तमत का सरभंग-सम्प्रदाय—डॉ० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री, बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्, पटना-३।

८२. श्रीमद्‌भगवद्‌गीता (हस्त०)—बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् (पटना) के हस्तलिखित-ग्रंथ अनुसधान-विभाग में सुरक्षित।

८३. शिवदीपक (हस्त०)—बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् (पटना) के हस्तलिखित-ग्रंथ अनुसंधान विभाग में सुरक्षित।

८४ डॉ० जार्ज अब्राहम ग्रियर्सन-कृत हिन्दी-साहित्य का इतिहास—किशोरीलाल गुप्त, हिन्दी-प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी।

८५. भाषा सार—बा० साहबप्रसाद सिंह, खड्गविलास प्रेस, बाँकीपुर, पटना।

८६. हरिहरकथा (हस्त)—बिहार-राष्ट्रभाषा परिषद् (पटना) के हस्तलिखित-ग्रंथ-अनुसंधान-विभाग में सुरक्षित।

८७. शिवसिंह-सरोज—शिवसिंह, नवलकिशोर प्रेस, लखनऊ।

८८. प्राचीन हस्तलिखित पोथियों का विवरण—बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्, पटना-३।

८९. पाण्डव-चरितार्णव (हस्त०)—बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् (पटना) के हस्तलिखित-ग्रंथ-अनुसधान-विभाग में सुरक्षित।

९०. शब्द-संहिता वाणी-प्रमोद—श्रीविश्वम्भरदासजी, राघोपुर बखरी, सीतामढी, मुजफ्फरपुर।
९१. सीतासौरभ-मंजरी (हस्त०)—बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् (पटना) के हस्तलिखित-ग्रंथ-अनुसधान-विभाग में सुरक्षित।
९२. भक्तविनोद तथा रागरत्नाकर—राजित शर्मा मलिक (प्रकाशक का पता नही मिला)।
९३. मिथिला-तत्त्व-विमर्श—प० परमेश्वर झा, श्रीपरमेश्वर पुस्तकालय, तरौनी, दरभगा।
९४. खोज में उपलब्ध हस्तलिखित हिन्दी-ग्रंथों का सोलहवाँ त्रैवार्षिक विवरण : सन् १९३५-३७ ई०—स्व० डॉ० पीताम्बरदत्त बडथ्वाल, नागरी-प्रचारिणी सभा, काशी।
९५ बिरहमाला (हस्त०)—बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् (पटना) के हस्तलिखित-ग्रंथ-अनुसधान-विभाग मे सुरक्षित।
९६. श्रीकृष्ण-अभिनन्दन-ग्रंथ—श्रीकृष्ण-अभिनन्दन-समिति, मुंगेर।
९७. गोस्वामी लक्ष्मीनाथ की पदावली—डॉ० ललितेश्वर झा, भारत-प्रकाशन-मदिर, लहेरियासराय।
९८. बिहार की साहित्यिक प्रगति—बिहार-हिन्दी-साहित्य सम्मेलन, पटना-३।
९९. हिन्दी जैन साहित्य का सक्षिप्त इतिहास—कामता प्रसाद जैन, भारतीय ज्ञानपीठ, काशी।
१०० बहुला-कथा (हस्त०)—बिहार राष्ट्रभाषा-परिषद् (पटना) के हस्तलिखित-ग्रंथ-अनुसधान-विभाग में सुरक्षित।
१०१. शिवनाथ-सागर (हस्त०)—बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् (पटना) के हस्तलिखित-ग्रंथ-अनुसधान-विभाग में सुरक्षित।
१०२. नासिकेतोपाख्यान—सदलमिश्र, नागरी-प्रचारिणी सभा, काशी।
१०३. रामचरित्र या अध्यात्म-रामायण (हस्त०)—बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् (पटना) के प्रकाशन-विभाग मे सुरक्षित।
१०४. साहब रामदास की पदावली—डॉ० ललितेश्वर झा, भारत प्रकाशन-मंदिर, लहेरियासराय।
१०५. राजस्थानी भाषा और साहित्य—मोतीलाल मेनारिया, हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग।

❀

सहायक पत्र-पत्रिकाएँ[1]

१ वंगीय साहित्य-परिषद्-पत्रिका (त्रैमासिक)—वगीय-साहित्य-परिषद्, कलकत्ता।
२. सरस्वती (मासिक)—इडियन प्रेस, प्रयाग।
३ गंगा (मासिक)—गगा-कार्यालय, सुल्तानगज, भागलपुर।
४. साहित्य (त्रैमासिक)—बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् एव बिहार हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, पटना ३।
५ Journal of the Asiatic Society of Bengal—Asiatic Society, Calcutta.
६. Journal of the Bihar and Orissa Research Society—Bihar and Orissa Research Society—Patna.
७. हिन्दुस्तानी (त्रैमासिक)—हिन्दुस्तानी ऐकेडमी, इलाहाबाद।
८. Patna Univerversity Journal—Patna University, Patna.
९. मिथिला मिहिर (मासिक)—राज प्रेस, दरभगा।
१०. कल्याण (मासिक)—गीताप्रेस, गोरखपुर।
११. वार्षिकी (वार्षिक)—नवयुवक-पुस्तकालय, मोतीहारी।
१२ आभा—आभा-परिषद्, सोनपुर।
१३ भोजपुरी (मासिक)—बाल-हिन्दी-पुस्तकालय, आरा।
१४ प्रदीप (दैनिक)—सर्चलाइट प्रेस, पटना।
१५ श्रीवेङ्कटेश्वर समाचार (दैनिक)—वेकटेश्वर स्टीम प्रेस, बम्बई।
१६. साप्ताहिक शाहाबाद (साप्ताहिक)—आरा, शाहाबाद।
१७. Champaran District Gazetteer—The Bihar and Orissa Government Press.
१८ व्रजभारती (त्रैमासिक)—व्रज साहित्य-मण्डल, मथुरा।
१९. साहित्य-संदेश (मासिक)—साहित्य-रत्न-भण्डार, आगरा।
२०. सम्मेलन-पत्रिका (मासिक)—हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग।

❀

१. यह सूची भी केवल उन्हीं पत्र-पत्रिकाओं की है, जिनका उल्लेख पाद-टिप्पणियों में हुआ है। इनके अतिरिक्त और भी पत्र-पत्रिकाएँ सहायक सिद्ध हुई हैं। —सं०

शुद्धि-पत्र

वक्तव्य

पृ०	प०	अशुद्ध	शुद्ध
ख	१३	अम्बष्ठजा	अम्बष्ठजी
ख	१४	काफा	काफी
ग	१	शोध- ंस्थानो	शोध-संस्थानो
ग	१८	शाघ्र	शीघ्र

भूमिका

पृ०	प०	अशुद्ध	शुद्ध
ण	२८	बेनापुरीजी	बेनीपुरीजी
न	१४	आर	और
प	१३	था	थी
फ	४	उल्लेखनाय	उल्लेखनीय
फ	२७	सामग्री-ंग्रह	सामग्री-संग्रह

प्रस्तावना

पृ०	प०	अशुद्ध	शुद्ध
१२	२४ (टि०)	गेसूदराज बन्दानवज	गेसूदराज बन्दानवाजने
१६	९	प्राचान	प्राचीन
१६	२२	आर	और
१७	२१	अंख्य	असख्य
२२	१३	इसी	इस
२४	२२	आर	और
२६	१३	शता	शती
२७	६	आर	और
२७	११	ंभव	सभव

मूल पुस्तक

पृ०	प०	अशुद्ध	शुद्ध
२	१७	छाड़िअ	छाडिअ
३	३-४	विल में शयन करने वोल प्रभु	(विल मे शयन करनेवाले प्रभु)

पृ०	प०	अशुद्ध	शुद्ध
४	१०	भुसुक का)	(भुसुक का)
६	२	का	की
६	३	आर	और
६	१२ और १७	लुई	लुइ
६	२०	गवरापा	शवरीपा
६	२२	गुना	गुनी
७	१	इसा	इसी
७	१४	छाड़ु छाड़	छाडु छाड
७	१७	पुकड़ए	पुडकए
७	१८	वाड़िर	वाडिर
१०	४	द्विवेदा	द्विवेदी
१०	६	भा	भी
१०	२३	केड़ु आल	केडुआल
१०	२४	मागा	माँगा
१२	१२	इसा	इसी
१२	१८	चनपुर	चैनपुर
१२	१७	पृ० ५६	(पृ० ५६)
१४	६	नाड़ी	नाडी
१४	१४	कवडी	कवडी
१४	१४	चडिया	चडिया
१४	१४	वुडाई	वुडाई
१५	४	कम	काम
१५	१० और ११	दाढइ	दाढइ
१५	१२	फुड़	फुड
१७	७	वारूणी वान्धव	वारुणी वान्धव
१७	८	वारूणी	वारुणी
१७	१२	घडिये	घडिए
१८	८	वाजिल	वाजिल
१८	२२	विदु	विंदु
२०	१५	तिव्वता	तिव्वती
२२	२२	कं	कर्ण
२४	८ (टि०)	तइछन	तइसन
२४	१० (टि०)	ताडक	ताडक
२४	१५ (टि०)	पुरातत्त्व-निवन्वावली	पुरातत्त्व-निवन्धावली

पृ०	प०	अशुद्ध	शुद्ध
२५	२१	अवधूतापा	अवधूतीपा
३३	३६	मङ्गलाभिनीय	मङ्गलमभिनीय
३४	२५	नायिका	दायिका
३७	१५ (टि०)	श्रीज्योरीश्वर	ज्योतिरीश्वर
४२	९	भनथे	भनये
४४	१	आर	और
४४	७	अवधो-भाषा	अवधी-भाषा
४५	४ (टि०)	लखिमादेइ क	लखिमादेइ केर
४८	१	का	को
४८	५	नषधचरित	नैषधचरित
५१	१	जानू	(जानू)
५२	५ (टि०)	हिन्दी-कवयित्रियो	हिन्दी-कवयित्रियाँ
५४	२१	निवासा	निवासी
५४	२१	का	की
५५	१०	बदरि	बदरि
५५	१७	आर	और
५५	१७	कहा	कही
५६	१६	था	थी
६२	१५	आइनवार-वशीय	ओइनवार-वशीय
६३	१८	आर	और
६६	१५	मैथिला-अनुवाद	मैथिली-अनुवाद
६६	१९	लेचन	लोचन
६७	१९	मैथिला	मैथिली
६८	१५	ह।	है।
६९	१०	मभाली	मभौली
६९	१५	कवित्व	कवित्त
६९	१९	का	की
७०	६ (टि०)	अचक	अचल
७८	१७	दउ	दोउ
७८	२०	दामोदरदास	दामोदरदास[१]
७८	२३	ग्र थाकार	ग्र थाकार
८७	२२	मथिली	मैथिली
९०	२१	मिला	मिला।
९२	३	पाठान्तर	पाठ

पृ०	प०	अशुद्ध	शुद्ध
६८	३३ (टि०)	उद्यम	उद्यम
६८	८	कहां-कही	कही-कही
१०१	११	आर	और
१०२	१२	सगीतो	सगीत
१०३	८	पमाणालकार	प्रमाणालकार
१०४	२३	नहा	नही
१०५	३	इसा	इसी
११५	१२	भा	भी
११७	१२	था	थी
१२०	१ टि०	भोजपुररी	भोजपुरी
१२२	१२	हवेला खडगपुर	हवेली खडगपुर
१२२	१८	भा	भी
१२३	१३	यागिक	यौगिक
१२६	३	कोठा	कोठी
१२६	११	आपका	आपको
१२६	१५	था	थी
१२६	१७	का	की
१२८	२२	चावे	चौबे
१३३	१८	जा	जो
१३६	२२	निवासा	निवासी
१३७	३	मैथिला-गीतो	मैथिली-गीतो
१३८	७	का	की
१३६	१६	परिरमाण	परिरम्भण
१४७	४ (टि०)	मिथिला के	मिथिलाक
१५३	८	श्रतिज्योति	अतिज्योति
१५३	६ (टि०)	की	के
१५५	२३	दुतिहारि	दुतिहारी
१५८	११	लगा	लगा
१५६	२३	सुखदत्त	सुखदत्त
१६३	१० (टि०)	व्रह्मभारती	व्रजभारती
१६६	२०	पात्र	पौत्र
१६७	१८	आर	और
१६७	२२	इन्हा	इन्ही
१६८	२	वाहे	वाढे

पृ०	प	अशुद्ध	शुद्ध
१६८	८	ग्रंथ	ग्रंथ
१७०	१३	धुपडोहा	ध्रुवडीहा
१७१	१६	सस्कृति	सस्कृत
१७३	६	आपका	आपकी
१७४	६	ओर	और
१७७	१६	बारा	बारी
१७८	१३	कनि	कवि
१८६	२५	प्रीप्तिनाथ	प्रीतिनाथ
१६२	११	मिलता	मिलती
१६४	१७	संग्रहात	सगृहीत
१६५	२	दोहे-चापाई	दोहे-चौपाई
१६७	१७	घकश्याम	घनश्याम
१६६	१३	विह्नि	विहि
२०४	२२	चतुभुज	चतुर्भुज
२०६	२४	भगारथपुर	भगीरथपुर
२१०	६	गारी	गौरी
२११	१	क्रमं०	क्रम स०
२१२	१	क्रमं०	क्रम स०

विशेष—उपर्युक्त अशुद्धियो के अतिरिक्त १८वी शती के कुछ परिचयो और उनके उदाहरणो मे भ्रमवश जो अशुद्धियाँ हो गई है, उनके लिए पाठक कृपया 'भूमिका', पृ० 'श' देखें और तदनुसार सुधार लेने का कष्ट करे।

द्रष्टव्य—तेरहवी शती के कवि हरिब्रह्म के विषय में इधर यह ज्ञात हुआ है कि वे मिथिला के सोनकरियाम ग्राम के निवासी थे। इन दिनो उक्त ग्राम का नाम वदल गया है। पजी-पुस्तक मे उनके विषय मे लिखा है—"सोनकरियाम कर्महास वीजी वंशधर ए सुता महामहो० हरिब्रह्म महामहो० हरिकेश महोधूर्तराज गोनूका सकराढी स चन्देयी दौहित्रा." (देखिए मिथिला-तत्त्व-विमर्श, वही, पृ० १५१)। पाठक कृपया पृ० ३१ मे प्रकाशित 'हरिब्रह्म' के परिचय मे यह सामग्री सम्मिलित कर लें। —स०

*